धारा 72 ग्रन्थांक 285

जैन शासन गीतांजली

(गद्य-पद्यमय)

आचार्य कनकनन्दी

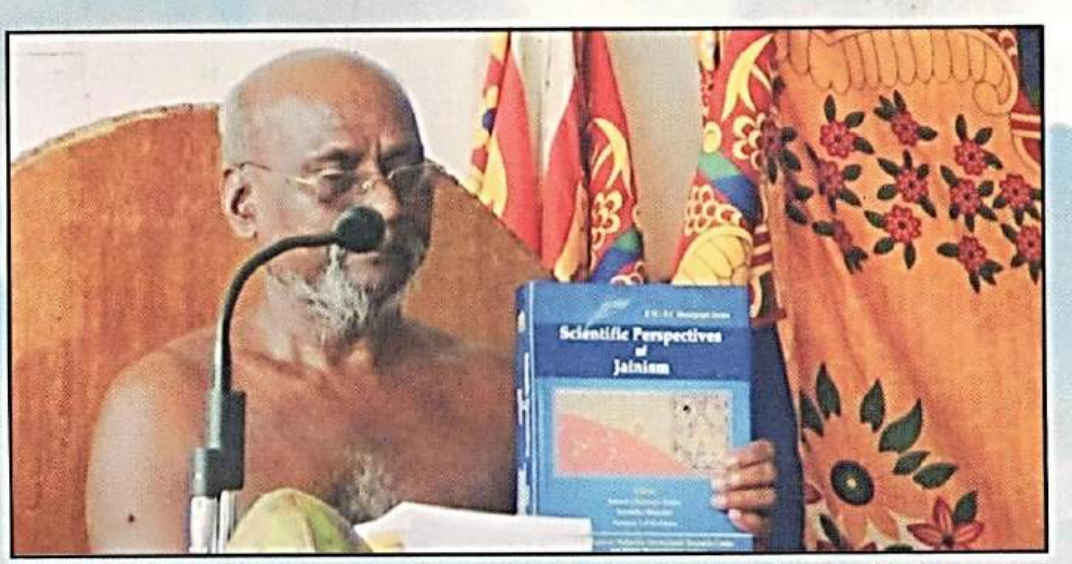

स्व- वैज्ञानिक (दिगम्बर, श्वेताम्बर) आदि शिष्यों के द्वारा लिखित व सम्पादित शोधपूर्ण ग्रन्थ का विमोचन करते हुए आचार्य कनकनन्दी ।
(चितरी-2017)

प्रस्तुत ग्रन्थ के ज्ञानदानी श्रीमती कमलादेवी, श्री सुरेश जी, श्रीमती सोनल, श्री ललित, श्रीमती डॉ. दर्शनादेवी, अमित जी आदि को स्वरचित साहित्य सहित आशीर्वाद प्रदान करते हुए आचार्य कनकनन्दी। (चितरी-2017)

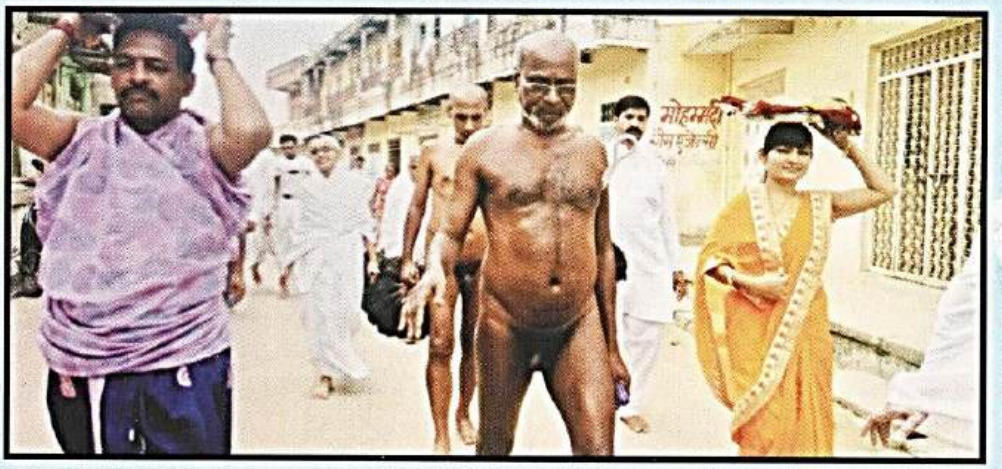

ग्रन्थ विमोचनार्थ आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित ग्रन्थ सिर पर लेकर जाते हुए चातुर्मासकर्त्ता श्रीमती मोहिता व भूपेश जैन तथा आचार्य कनकनन्दी ससंघ आदि।(चितरी-2017)

प्रस्तुत ग्रन्थ के ज्ञानदानी भक्तों को आशीर्वाद सहित स्वरचित ग्रन्थ प्रदान करते हुए आचार्य कनकनन्दी ।(चितरी-2017)

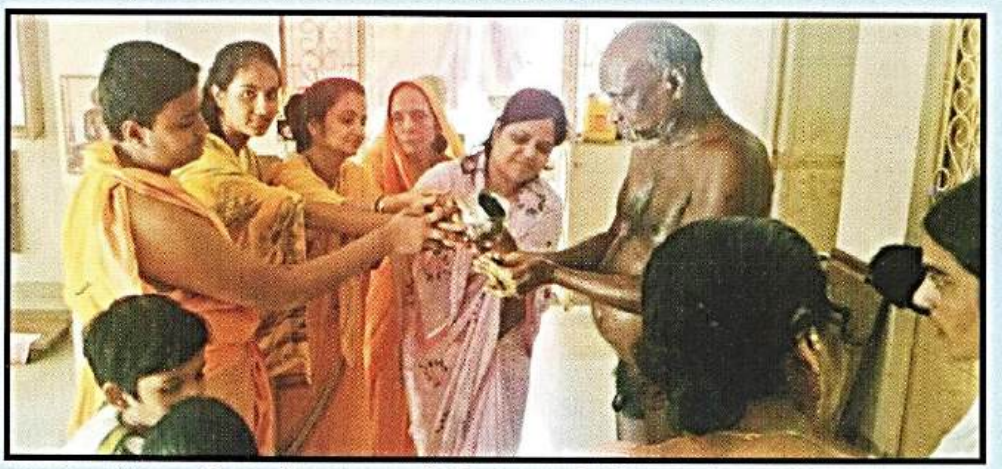

ज्ञानदानी भक्तों द्वारा आचार्य श्री कनकनन्दी को आहारदान करते हुए।
(चितरी-2017)

धारा...72 ग्रंथांक...285

जैन शासन गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

-आचार्य कनकनन्दी

पुण्य-स्मरण

एक परिवार द्वारा निस्पृह-निराडम्बर चातुर्मास
(चितरी 2017) के उपलक्ष्य में

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

श्रीमती कमला देवी-सुरेश जी, श्रीमती सोनल देवी-ललित जी
(उदयपुर), डॉ. दर्शना देवी-अमित जी बड़जात्या (बाम्बे)

ग्रंथांक-285 प्रतियाँ-500
संस्करण-प्रथम 2017 मूल्य-101/- रु.

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

(2) डॉ. नारायणलाल कछारा
सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

आचार्य गुरुवर 'कनकनंदी' के आध्यात्मिक व्यक्तित्व

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : कितना प्यारा तुझे.....)

आत्मज्ञानी गुरु मैंने है पाये, सौभाग्यशाली हूँ 'मैं'
मोह की नींद से मुझे है जगाये, सौभाग्यशाली हूँ 'मैं'

उत्तम क्षमा के धारी गुरुवर, मुक्ति के अधिकारी
गुण-रत्नाकर, धर्म-प्रभाकर, गुरुवर है अविकारी।। (ध्रुव)

ज्ञान-ध्यान व तप में, लीन है गुरुवर, विषयों की आशा से विहीन है गुरुवर,
अगम्य गुण भंडारी, समता के सागर, निस्पृहता के है शिखर, ज्ञान-दिवाकर,

सहज-सरल-मृदुभावी, मेरे गुरुवर स्वाभिमानी,
'कनक' गुरु की गौरव गाथा, गाते हैं भवि प्राणी...गुण रत्नाकर...(1)...

जिस भू पर गुरु प्रवर, वास हैं करते, उस भू के जीव सभी, मोद हैं धरते,
गुरु सेवा सुश्रुषा, जो भी हैं करते, तन-मन व आत्मा को, स्वस्थ है करते,

पद रज को-तरसे देव-गुरु सेवा-चाहे सदैव,
गुरु कृपा सम नहीं है जग में, अन्य कोई उपलब्धि...गुण रत्नाकर...(2)...

क्रोध-मान-माया-लोभ, इन्हें न सताते, ईर्ष्या-घृणा व तृष्णा, पास नहीं आते,
संसार-शरीर-भोगों से, अति है विरक्त, आत्मा के हित में ही, सदा है आसक्त,

बाह्य ढोंग-पर प्रपञ्च-गुरुवर में-ना है रञ्च,
ऐसे श्री 'कनक' गुरु को, 'सुवीक्ष' का वंदन है...गुण रत्नाकर...(3)...

चितरी, दिनांक 08.07.2017

महाज्ञानी ध्यानी 'कनक' गुरु

लेखक-कवयित्री विजयालक्ष्मी जैन
सहायक-मुनि सुविज्ञसागर जी

(चाल : फूलों-सा चेहरा.....)

गणधर-सा ज्ञान तेरा...जिनवाणी के लाल है...

शोध/(सत्य) तेरा देख के...बोध/(तथ्य) तेरा देख के...
दुनिया अचंभित है...गणधर...(ध्रुव)...

सारे जहाँ में ज्ञान प्रसारा...दुनिया में फैली जैन भारती...
कुंदकुंद-सा...विशाल ज्ञान...समंतभद्र कलिकाल हैं...
कनकनंदी गुरु...वैश्विक श्रमण हैं...सत्य तेरा देख के...(1)...

सारे शिष्यों को ज्ञान है दिया...साधु-साध्वी या वैज्ञानिक हो...
चांसलर या न्यायाधीश हो...सभी आप से अध्ययन करे...
लेखक महाकवि...वैज्ञानिक संत है...सत्य तेरा देख के...(2)...

वाग्मिता व सरलता का...मणिकांचन महायोग है...
वीरसेन स्वामी...अकलंक स्वामी-सी प्रज्ञा है...
गुणग्राही वृत्ति तेरी...सबसे निराली है...सत्य तेरा देख के...(3)...

महावीर कीर्ति विमलसागर...कुंथुसागर सूरी महान्...
ज्ञानी-ध्यानी...गुरु भगवंत...के आप रूप है...
समता निस्पृहता देखकर...'विजया' भी हैरान है...सत्य तेरा देख के...(4)...

ग.पु.कॉ., सागवाड़ा, दिनांक 30.06.2017

कनक गुरु महिमा

रचयित्री-श्रीमती भँवर कुँवर (सेमारी), 5वीं पास,
बारट तलाई, जिला-राजसमंद (राज.)

(चाल : बंगला-उड़िया.....)

गुरु कनक परम पूज्य हैं...गुरु वंदनीय हैं...गुरु आदरणीय हैं...
मैं करूँ कोटि प्रणाम...कर जोड़ शीश नवाय...
इनके चरण कमल में...2...मैं करूँ दर्शन-ईश-महेश इनमें...(स्थायी)...

गुरु गोविंद स्वरूप हैं...गुरु विशाल वृक्ष ज्ञान हैं...
गुरु गौरव हैं...मानव समाज के...मैं करूँ कोटि प्रणाम...(1)...

गुरु त्याग तपस्या की मूर्ति...गुरु कल्याण मूर्ति...

गुरु सत्य स्वरूप हैं...मैं करूँ कोटि प्रणाम...(2)...

गुरु धर्म धरा है...गुरु गरिमा है मनुष्य की...
गुरु आकाश से भी उच्च हैं...गुरु पाताल से भी गहरे हैं...
गुरु ब्रह्माण्ड से भारी...मैं करूँ कोटि प्रणाम...(3)...

गुरु गंगा से पवित्र हैं...गुरु ग्रंथों में भी उच्च हैं...
गुरु महिला अपरंपार है...मैं करूँ कोटि प्रणाम...(4)...

चातुर्मास का अनुभव कनकनंदी जी गुरुदेव के बारे में

लेखक-अक्षय शौर्य शाह,
कक्षा-छठीं, आयु-10 वर्ष

1. गुरुदेव अपने-आप को अल्पज्ञ (कम ज्ञानी) समझते हैं। लेकिन वे ज्ञान के महासागर हैं।
2. मैं उन्हें भोला व सरल मानता हूँ।
3. वे जिनवाणी/(सरस्वती) को अपनी माँ मानते हैं।
4. वे उन पर जिनवाणी (सरस्वती) पर आँच नहीं आने देते हैं, ऊँगली नहीं उठने देते हैं।
5. वे मुझे छोटे बच्चे से भी सरल लगते हैं।
6. मैं मानता हूँ कि कलियुग में सबसे उच्च, महानतम व सर्वश्रेष्ठ गुरु हैं।
7. वे 'मैं' (आत्मा) को पढ़ना चाहते हैं।
8. वे अपने-आप को बालक व छात्र मानते हैं।
9. वे सरस्वती-पुत्र हैं। वे दिन और रात सरस्वती माँ का दूध पीते हैं।
10. वे सरस्वती का बहुत ख्याल रखते हैं।
11. वे दूसरों के गुण और अवगुण का पता लगा लेते हैं परन्तु वे सिर्फ उसके गुण की ही प्रशंसा करते हैं।
12. वे कभी भी किसी की निंदा नहीं करते, अगर कोई गलती है तो वे उसे प्यार से समझा देते हैं। यह गुण मुझे बहुत प्रभावित करता हैं।

तीक्ष्णा नारुंतुदा बुद्धिः कर्म शातं प्रतापवत्।

नोपतापि मनः सोष्म वागेका वाग्मिनः सतः।।

सत्पुरुष की बुद्धि तीक्ष्ण होती है, परन्तु मर्मभेदी नहीं, कर्म तेजस्वी होता है परन्तु शांत भी, मन उष्ण होता है पर ताप देने वाला नहीं और वाग्मी सत्पुरुष एकवाक् (एक बात ही बोलने वाला, सत्य वक्ता) होता है। माघ, (शिशुपालवध)

परम पूज्य आचार्यश्री कनकनंदी जी गुरुदेव के चरणों में समर्पित

मेरी शिक्षा व अनुभव

1. मुझे भी उनकी तरह एक सरल साधु बनने की शिक्षा मिली।
2. मुझे भी खुद को (आत्मा) को पहचाने की सीख मिली।
3. मुझे भी उनकी तरह जिनवाणी को माँ के समान मानना है।
4. मुझे भी उनकी तरह एक महान् साधु बनने की सीख मिली।
5. मुझे उनकी तरह सरस्वती को माँ का सम्मान देना व उनकी तरह दिन और रात सरस्वती माँ का दूध पीना चाहिए।
6. मुझे भी उनकी तरह किसी की निन्दा नहीं करनी चाहिए व उनकी तरह निर्मल-भाव रखना चाहिए।
7. उनकी तरह दूसरों के गुण की प्रशंसा करनी चाहिए न कि उसके अवगुण की निन्दा करनी चाहिए।
8. हे गुरुदेव! मुझे आशीर्वाद दो कि मैं भी आप की तरह एक हँसमुख महागुरु बनूँ।

-मेरे 21 दिनों के अनुभवों पर आधारित यह लेख।

नाम-अक्षय शौर्य शाह,

दिनांक-26.07.2017, वार-बुधवार, समय-9.45 रात्रि

स्थान-श्री आदिनाथ चैत्यालय, चितरी "गुरु प्रतीक्षालय"

वर्षायोग-2017 हेतु पूज्य श्री को श्रीफल भेंटकर प्रथम निवेदनकर्त्ता

महान् उद्देश्यपरक आडम्बर रहित
चातुर्मास हेतु समाज बंधन मुक्त हो!

समता तीर्थधाम, अतिशय क्षेत्र सीपुर में दीर्घ प्रवासरत समता भावी आचार्यश्री कनकनंदी गुरुवर ससंघ के वर्ष 2017 में वागड़ अञ्चल के चीतरी ग्राम में होने वाले चातुर्मास को ऐतिहासिक प्रभावनापूर्ण बनाने की भावना से चीतरी व आसपास के ग्रामों से जैन व अजैन श्रद्धालु भक्तगण सीपुर पधारे व प्रमुख चातुर्मासकर्त्ता कुमार शौर्य भूपेश शाह सह समाजजनों जिनमें आबाल वृद्ध वनिता सभी ने सम्मिलित होकर आचार्य श्रीसंघ को भक्ति भावना युक्त निवेदन किया। ब्र. संध्या दीदी व भूपेश शाह ने आचार्यश्री के आध्यात्मिक गुणों के विषय में अपना मंतव्य सुनाया।

सकारात्मकता की मूर्ति श्री नितिन जैन ने आचार्यश्री के प्रति अत्यंत भक्ति से प्रमुदित होते हुए कहा कि बालक जैसे निर्विकार गुरुदेव ने 9 वर्ष के बालक के एक ही निवेदन से चातुर्मास हेतु स्वीकृति देकर एक अद्वितीय उदारता का परिचय दिया है। नितिन ने आगे कहा गुरुदेव पारसमणि है, आपको उनके संसर्ग में स्वर्ण बनना है।

आचार्यश्री ने अपने क्रांतिकारी उद्‌बोधन में कहा कि समाज को संकीर्णता रूढ़ि आडम्बर की लीक से हटकर महान् उद्देश्यपरक आडम्बर प्रदर्शन याचना आदि से रहित सृजनात्मक चातुर्मास करने हेतु मैं आपको दबाव आग्रह याचना आदि के बंधनों से मुक्त करता हूँ। यह चातुर्मास मात्र चीतरी का न होकर वागड़-मेवाड़-राजस्थान-भारत से लेकर विश्व का हो, अन्त्योदयी व सर्वोदयी हो। इस भावना को दृष्टिगत रखते हुए मैं चातुर्मासकर्त्ता की भावना-भक्ति आवश्यकता व प्राथमिकता को देखते हुए एक बार निर्णय करके उन्हें चातुर्मास निवेदन हेतु बार-बार न आने हेतु कहता हूँ भले वे दर्शनार्थे अनेकों बार आ सकते है, जिससे उन्हें किसी प्रकार श्रम समय धन या शक्ति का अपव्यय न हो, उन्हें मानसिक पीड़ा न पहुँचे। इस अवसर पर गुरुदेव ने अनेक सूक्तियों के द्वारा स्वाभिमान व गौरव का बोध कराते हुए लोभ कामना संकीर्ण स्वार्थ रहित धर्म करते हुए भक्त से भगवान् बनने हेतु प्रेरणास्पद शिक्षा देते हुए कहा कि सच्ची भावना को विश्व की समस्त भौतिक शक्ति भी परास्त नहीं कर सकती। एकांत-शांत-निर्जन स्थान में स्थित अतिशय क्षेत्र सीपुर में आ. कनकनंदी

ससंघ के आजीवन चातुर्मास हेतु निवेदन कर रहे हैं। अन्यत्र चातुर्मास करने पर चातुर्मास के बाद क्षेत्र पर आने हेतु नितिन निवेदन कर रहे हैं।

शुभाकांक्षा सह-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

वर्षायोग स्थापन-गुरु पूर्णिमा आदि सानंद संपन्न

(बिना बोली के 9 कलश स्थापन मिनिटों में!)

वागड़ अञ्चल के सांस्कृतिक ग्राम चितरी में निस्पृह योगी श्रमणाचार्यश्री कनकनंदी गुरुवर ससंघ के मंगल प्रवेश के पश्चात् वर्ष 2017 के चातुर्मास का वर्षायोग स्थापन गुरु प्रतीक्षालय में वागड़-मेवाड़ आदि क्षेत्रों से पधारे जैन-अजैन भक्त-शिष्यों की उत्साहपूर्ण उपस्थिति में सानंद संपन्न हुआ।

गुरु विनयाञ्जली की शुभ बेला में आचार्यश्री के अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक शिष्य डॉ. श्यामलाल गोदावत उदयपुर ने गुरुवर को निस्पृह निराडम्बर सरल ज्ञान ध्यान तपोरक्त आत्मलीन वैज्ञानिक संत बताते हुए कहा कि आचार्यश्री ने बहुत वर्ष (प्रायः 36-38 वर्ष) पहिले जो विषय स्व-साहित्य में वर्णित किये उसका बहुत कुछ शोध वर्तमान विज्ञान कर रहा है। ऐसे रहस्यपूर्ण विषयों के संदेश हम सब देश-विदेशों में पहुँचा रहे हैं। गुरुदेव वैज्ञानिक युगानुकूल मीडिया का सम्यक् प्रयोग कर व्यापक दृष्टि से वैश्विक स्तर पर जैन/(भारतीय) सत्य तथ्य का प्रभावकारी प्रसारण करने वाले अलौकिक आध्यात्मिक संत है।

क्रांतिकारी युवक रत्नश्री मुकेश जैन उदयपुर ने आचार्यश्री के व्यापक व्यक्तित्व व कृतित्व में शिक्षा गुरु स्वरूप का गुणगान करते हुए कहा कि आपने देशभर में प्रायः 300 साधु-साध्वियों को अध्यापन कराने व देश-विदेश के अनेकों शिक्षाविद्, चांसलर, जज व वैज्ञानिक जैसे स्व-क्षेत्र के शीर्षस्थ जनों को धर्म-दर्शन-विज्ञान का अध्यापन कराने का महान् ऐतिहासिक स्तुत्य पुरुषार्थ किया है, जिसके फलस्वरूप आगम व आर्ष मार्ग की सुरक्षा के साथ एकांतवादियों के परिशोधन से अनेकांतिक जैन धर्म को सूर्य की भाँति चमकाने का अद्वितीय कार्य किया है। विजयलक्ष्मी गोदावत ने कहा कि गुरुदेव आत्म द्रव्य का सर्वाधिक ज्ञान रखने वाले वर्तमान के शांतिसागर हैं। नंदौड़ से पधारे प्रवीणचन्द्र शाह ने गुरुदेव के समदर्शी भाव की प्रशंसा करते हुए आगामी वर्षों में

पुनः नंदौड़ ग्राम में श्रीसंघ का चातुर्मास कराने की भावना व्यक्त की। कोटा से पधारे महावीर जी जैन ने श्री गुरुदेव के सत्यग्राही गुणग्राही प्रभावी ओरा का बखान किया। दिनेश शाह ने आचार्यश्री को पृथ्वी पर सर्वोच्च अनुभवी विज्ञानी गुरु बताया। स्थानीय भक्त मणिभद्र, दीपेश, मयंक, ब्र. संध्या, पं. आनंदीलाल आदि ने अपनी भावभीनी विनयाञ्जली दी। मुख्य रूप से चातुर्मासकर्त्ता श्री भूपेश जैन ने गुरुदेव के आध्यात्मिक गुणों के प्रति श्रद्धा-समर्पण करते हुए स्वयं की लघुता का परिचय दिया। इस अवसर पर ग्रंथ त्रय 1. कनकनंदी वचनामृत, 2. युक्त्यानुशासनं, 3. रयणसार का विमोचन हुआ।

-शुभावना सह-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

अनोखा रक्षाबंधन पर्व संपन्न

वाग्वर अञ्चल के धार्मिक ग्राम चितरी में चातुर्मासरत संत प्रवर स्वाध्याय तपस्वी आचार्यश्री कनकनंदी गुरुवर ससंघ सान्निध्य में अनूठा रक्षाबंधन पर्व ग्रामवासियों व अञ्चल के भक्त-शिष्यों द्वारा भाव-भक्ति प्रभावनापूर्वक संपन्न हुआ। आदिनाथ दि. जैन भव्य चैत्यालय व गुरु प्रतीक्षालय में चल रहा स्वाध्याय चर्चा-वार्ता चिन्तन-मनन अत्यंत प्रभावनापूर्वक आचार्यश्री के व्यापक प्रबोधन व आनंददायी शिक्षा पद्धति से अभूतपूर्व उपलब्धि कर यहाँ के आबाल वृद्ध वनिता युवक आह्लादित हैं। भावात्मक क्रांति के प्रतीक बने इस ग्राम व अञ्चल के जन-गण-मन गुरुदेव के ज्ञान-विज्ञान भाव व्यवहार अनुभव से प्रतिपल लाभान्वित व गौरान्वित हो रहे हैं।

मध्याह्न के सत्र में चल रहा भाव-संग्रह का स्वाध्याय दान सेवा वैयावृत्य आदि विषयों को आचार्यश्री ने रक्षाबंधन पर्व के सह प्रायोगिक स्वरूप का रहस्य बताते हुए कहा कि आहारदान से पात्र व दाता दोनों लाभान्वित होते है जिससे साधुरूपी शरीरधारी छद्मस्थ बच्चा भगवान् संतुष्ट होकर स्वाध्यायादि क्रिया करते हैं व आगे शुद्ध आत्म स्वरूप प्राप्त कर बड़े भगवान् यानी अरिहंत, सिद्ध बनते है। भगवान् की पूजा से पूजक को ही लाभ होता है, जबकि भगवान् को कोई लाभ नहीं। इस अवसर पर गुरुदेव ने अहंकार, स्वाभिमान, सोऽहं भाव आदि विषयों को अत्यंत मनोवैज्ञानिक पद्धति से बताते हुए कहा कि आध्यात्मिक आत्मविश्वास ही प्रशस्त व कल्याणकारी है, जबकि लौकिक आत्मविश्वास जो कि अष्टमद, लोभ, आकांक्षा व

अहंकार की वृद्धि का कारण होने से संसारवर्द्धक है अतः त्यजनीय है। आत्म शक्ति का चिंतन-मनन-अध्ययन-आचरण ही यथार्थ धर्म है।

रक्षाबंधन पर्व के अवसर पर आचार्यश्री सृजित कृति पूजा-प्रार्थना-आरती गीताञ्जली से भ. श्रेयांसनाथ जी की पूजा की गई जो कि आगम-आध्यात्म-विज्ञान-मनोविज्ञान की दृष्टि से अद्वितीय है। निर्वाण लाडू चढ़ाने के पश्चात् आचार्यश्री की पूजा व पाद प्रक्षालन आदि होने पर गुरुदेव ने उपस्थित भक्त व शिष्यों को भावात्मक नियम-प्रतिज्ञा दिलाते हुए कहा कि ''गुणगणकथा दोषवादे च मौनं'' सूत्र से शिक्षा लेते हुए आप सभी आध्यात्मिक गुणों की प्रशंसा व अनुमोदना करे व दूसरों के दोषों की निन्दा-चुगली आदि न करें। **-शुभाकांक्षा सह-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर**

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	विषय	पृ.सं.
1.	आचार्य गुरुवर कनकनंदी के आध्यात्मिक व्यक्तित्व	2
2.	महाज्ञानी ध्यानी 'कनक' गुरु	2
3.	कनक गुरु महिमा	3
4.	चातुर्मास का अनुभव कनकनंदी जी गुरुदेव के बारे में	4
5.	परम पूज्य आचार्यश्री कनकनंदी जी गुरुदेव के चरणों में समर्पित	5
6.	महान् उद्देश्यपरक आडम्बर रहित चातुर्मास हेतु समाज बंधन मुक्त हो!	6
7.	वर्षायोग स्थापन-गुरु पूर्णिमा आदि सानंद संपन्न	7
8.	अनोखा रक्षाबंधन पर्व संपन्न	8
	जैन शासन गीताञ्जली	
1.	आध्यात्मिक शक्ति संवर्द्धन के उपाय व लाभ	12
2.	आत्म संबोधन	15
3.	स्वयं को पूर्ण बनाने हेतु मेरी साधना	16
4.	परम विकास हेतु	17
5.	आध्यात्मिक आत्मविश्वास V/S लौकिक आत्मविश्वास	18
6.	मेरा दीर्घ अनुभव-स्व-परिणति (स्वभाव) में ही शांति-पर-परिणति (विभाव) में अशांति	28
7.	समस्त विश्व मेरी पाठशाला	43
8.	परम समता हेतु मेरी साधना	50
9.	उत्तम स्वात्म चिन्ता व अधमाधमा परचिन्ता	59
10.	मैं एक-अद्वितीय व अनंत हूँ	69
11.	विनय V/S पूजा	77
12.	आहारदान से भी श्रेष्ठ ज्ञानदान की पद्धति (शुद्धि व गुणों से)	79
13.	भगवान् की पूजा से एक पक्षीय लाभ किन्तु साधु की सेवा से द्विपक्षीय लाभ	93

14.	अनंत ज्ञान-ज्ञेय V/S अनंत अज्ञान-अज्ञानी	109
15.	विश्व की समस्त समस्याओं के समाधानोपायः अनेकांत स्याद्वाद	117
16.	अनेकान्त - स्याद्वाद का स्वरूप	123
17.	स्व-प्राचीन ज्ञान-विज्ञान व परंपरा को भी सही नहीं जानते भारतीय	124
18.	सर्वांगीण विकास हेतु कम गैजेट्स प्रयोग करो हे ! बच्चों	134
19.	आहार नहीं देने वाले व धर्म से धन चाहने वाले हिंसक	150
20.	सही आस्था (श्रद्धा, विश्वास) अमृत तो गलत आस्था मृत (विष)	162
21.	स्व-आत्म ध्यान	164
22.	स्व-शक्ति के ध्यान से अनंत शक्ति पाऊँ	165
23.	आनंद वंदना/संकीर्तन	166
24.	हे ! गुरुवर तेरा पावन जीवन	167
25.	कार्य-कारण संबंध व इससे परे परम सत्य	167
26.	विरोध सापेक्ष अविरोध	191

मेरे अनुभव-

आध्यात्मिक शक्ति संवर्द्धन के उपाय व लाभ

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

जो भी सुना हूँ व पढ़ रहा हूँ विभिन्न ग्रंथों से।
अनुभव भी कर रहा हूँ मैं दीर्घ काल से।।

उसे ही सतत मैं बढ़ रहा हूँ नवकोटि से।
परिपूर्ण/(सिद्ध) बनने तक सदा ही सही भाव से।। (1)

आत्मा में सुप्त-गुप्त है अनंतानंत शक्तियाँ।
राग द्वेष मोहादि से आच्छन्न शक्तियाँ।।

रागादि क्षय से जागृत होती है शक्तियाँ।
यह सब अनुभवगम्य सत्य है उक्तियाँ।। (2)

बीज में सुप्त-गुप्त यथा विशाल वृक्ष।
सुद्रव्य क्षेत्र कालादि से यथा होता विकसित।।

तथाहि मुझे अनुभव हो रही है स्व-शक्तियाँ।
पवित्र भाव-व्यवहार से होती अनुभूतियाँ।। (3)

श्रद्धा व प्रज्ञा मेरी हो रही है विकसित।
समता-शांति मेरी हो रही है वृद्धिंगत।।

निस्पृह-निराडम्बर मेरे हो रहे हैं वर्द्धमान।
ख्याति पूजा लाभ से मैं हो रहा हूँ भिन्न।। (4)

कट्टर-संकीर्णता भेद-भाव से हो रहा हूँ परे।
परनिंदा-अपमान से नहीं संबंध मेरे।।

धनी-गरीब व शत्रु-मित्र से हो रहा हूँ परे।
संकल्प-विकल्प व संक्लेश से न संबंध मेरे।। (5)

स्व-पर-विश्व कल्याण की भावना भाता हूँ।
उसका प्रतिफल भी सदा ही पा रहा हूँ।।

भक्त-शिष्य-दाता व श्रोता हो रहे है प्रसन्न।
तन-मन-धन-समय-श्रम से कर रहे सेवा-दान।। (6)

आहार-औषधि-ज्ञान-उपकरण वसतिका कर रहे दान।
स्वभावना से प्रेरित होकर कर रहे हैं दान।।

इससे लाभान्वित हो रहा है संघ व भक्त जन।
एकांत-मौन में आकिंचन्य बन रहा 'कनक' श्रमण।। (7)

चितरी, दिनांक 09.08.2017, रात्रि 9.15

दूसरों से स्मार्ट बनाती हैं आपको ये अजीब आदतें

यूँ तो किसी भी व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता को नापना मुश्किल है लेकिन विज्ञान कहता है कि आपकी कुछ अजीबो-गरीब आदतों के आधार पर आपकी सीखने की शक्ति, समस्याओं का हल निकालने की क्षमता और रचनात्मकता को आसानी से मापा जा सकता है। जानना चाहेंगी आप कितनी इंटेलिजेंट हैं?

अपने बेडरूम को हमेशा फैलाकर रखना, देर रात तक टीवी देखना जैसी आदतों को आमतौर पर अच्छा नहीं समझा जाता है लेकिन यह जानकर आपको हैरानी होगी कि ऐसी आदतें यह दर्शाती है कि आप दूसरों से ज्यादा इंटेलिजेंट है। यह नहीं, मनोविज्ञान से जुड़ी एक रिसर्च में यह बात सामने आई है कि घर से जुड़ी कुछ आदतें ऐसी हैं, जो आपको दूसरों से एक कदम आगे दिखाती हैं। अपने घर को कितना व्यवस्थित रखती है, से लेकर रात को कितने बजे सोती है जैसी आदतें यह संकेत देती है कि दूसरों की तुलना में आपके इंटेलिजेंस का स्तर क्या है?

डेस्क हमेशा बेतरतीब-हम अक्सर यह सोचते हैं कि बुद्धिमान व्यक्ति हमेशा व्यवस्थित रहता है और उसका कार्यस्थल साफ व करीने से जमा हुआ होता

है लेकिन सच इससे एकदम उलट है। यूनिवर्सिटी ऑफ मिनसोटा के एक प्रयोग में सामने आया कि साफ और व्यवस्थित माहौल की तुलना में बिखरे सामान के बीच लोग ज्यादा क्रिएटिव सोच पाते हैं। अव्यवस्थित माहौल लीक से हटकर कुछ करने के लिए प्रेरित करता है, जबकि व्यवस्थित माहौल पुरानी लीक पर चलने के लिए प्रेरित करता है।

क्या आपको हमेशा अपनी डेस्क अव्यवस्थित रखने के लिए शर्मिंदा होना पड़ता है? आपका घर बिखरा रहता है? तो आप हैं औरों से इंटेलिजेंट।

देर तक काम करना-फिल्मों में दिखाया जाता है कि क्रिएटिव जीनियस रात को देर तक काम करते है, असल जीवन में भी कुछ ऐसा ही होता है। लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस के एक अध्ययन में पाया गया कि देर से सोने वाले लोगों में आईक्यू का स्तर ऊँचा होता है। इस अध्ययन के अनुसार इसका कारण हमारे उद्भव में छुपा है। दरअसल उस दौर में रात का समय खतरनाक समझा जाता था और इसलिए अंधेरे में विचरण करने वाले पूर्वजों को ज्यादा बुद्धिमान होना पड़ता था।

खुद की आलोचना करना-हम समझते हैं कि इंटेलिजेंट लोगों में आत्मविश्वास होता है क्योंकि वे स्मार्ट होते हैं। वर्ष 1999 में कॉर्नेल यूनिवर्सिटी के एक शोध में वैज्ञानिकों ने देखा कि असमर्थ लोग अपनी अयोग्यता को पहचान नहीं पाते और बढ़ा-चढ़ाकर खुद को परखते हैं जबकि ऐसा करने की काबिलियत उनमें होती ही नहीं है। इसी शोध में यह भी देखा गया कि योग्य लोग अपनी काबिलियत को कम आँकते हैं। वे जानते हैं कि उनमें क्या कमी है और वे समय-समय पर खुद की आलोचना भी करते रहते हैं, ताकि कमियों को पहचानकर दूर किया जा सकें।

दिन में सपने देखना-कुछ वक्त पहले तक वैज्ञानिकों का मानना था कि खयालों में खोये रहना आपके दिमाग की परफॉर्मेंस को प्रभावित करता है लेकिन हालिया हुई रिसर्च ने इस धारणा को सिरे से खारिज कर दिया है। यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया के इस शोध में सामने आया कि अगर दिमाग को एक इन्क्यूबेशन पीरियड यानी काम के दौरान उसे खयालों में डुबकी लगाने का समय दिया जाये तो वह समस्या के बेहतर समाधान खोज सकता है और उच्च स्तर के क्रिएटिव

आइडिया दे सकता है।

खुद से बातें करना-अपने आप से बातें करने वालों को लोग सनकी समझ लेते हैं लेकिन हकीकत में यह सोचने की उच्च क्षमता, अच्छी याददाश्त और समझने की मजबूत स्किल्स का संकेत देता है। यूनिवर्सिटी ऑफ विसकॉनसिन और यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिलवेनिया में हुए शोध में सामने आया है कि भाषा न सिर्फ बातचीत का माध्यम है, बल्कि सोचने-समझने की शक्ति को विकसित करने का भी जरिया है। खुद से बात करके दिमाग को बेहतर काम करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

आत्म संबोधन

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे तू काहे.....)

जिया रे! तू स्व-स्वभाव (का) ध्यान करऽऽ
स्व-स्वभाव में हैं अनंत शक्तियाँऽऽ उसे तू प्राप्त करऽऽऽ...(ध्रुव)...

बीज (वट) में यथा विशाल वृक्ष हैऽऽ तुझमें तथाहि अनंतऽऽ
अणु में यथा अनंत शक्तिऽऽ तथाहि तुझमें अनंतानंतऽऽ
तू तो सच्चिदानंदकंदऽऽऽ...(1)...जिया रे...

शरीर-इन्द्रिय व मन से परेऽऽ तू हो सत्य-शिव-सुंदरऽऽ
भौतिक उपलब्धियों से भी परेऽऽ तू तो चैतन्य चमत्कारऽऽ
स्वयंभू-सनातन-अक्षरऽऽऽ...(2)...जिया रे...

संकीर्ण जाति पंथ मत परंपरा परेऽऽ आकाश सम तू तो अनंतऽऽ
मनुष्यकृत नीति-नियम परेऽऽ तू तो निर्मल-निर्विकारऽऽ
शुद्ध-बुद्ध निराकारऽऽऽ...(3)...जिया रे...

शाखा-प्रशाखा व पत्र (फूल) फल हीऽऽ यथाहि न होते हैं वृक्षऽऽ
तथाहि तेरे तन-मन हीऽऽ तेरा नहीं (है) सच्चा स्वरूपऽऽ
तू तो संपूर्ण चैतन्य रूपऽऽऽ...(4)...जिया रे...

स्व-स्वरूप (को) पाने के लिएऽऽ त्याग कर सभी विभाव भावऽऽ

क्रोध मान माया लोभ मोह आदिऽऽ पाओगे तू स्व-शुद्ध स्वभावऽऽ
यह ही 'कनक' का परम लक्ष्यऽऽऽ...(5)...जिया रे...

चितरी, दिनांक 25.07.2017, संध्या 7.56

गेटे ने सिखाया था, 'अगर आप किसी व्यक्ति से इस तरह व्यवहार करे जैसा वह है, तो वह जैसा है वैसा ही रहेगा। परंतु अगर आप किसी व्यक्ति से इस तरह व्यवहार करे, जैसा वह हो सकता है और उसे होना चाहिए, तो वह वैसा ही बन जायेगा जैसा वह हो सकता है और उसे होना चाहिए।'

स्वयं को पूर्ण बनाने हेतु मेरी साधना

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

मेरी उपलब्धियों का मैं कर रहा हूँ उपयोग क्षण-क्षण,
जब तक मैं न बन जाऊँ संपूर्ण/(सर्वज्ञ) तब तक बढ़ूँगा हर क्षण।

मेरी उपलब्धियाँ स्व-आत्मविश्वास सहित स्व-आत्मज्ञान,
स्व को संपूर्ण बनाने हेतु करना सतत ध्यान-अध्ययन।। (1)

पर के दोष-दुर्गुणों से न मानूँगा स्वयं को मैं महान्,
स्व-आध्यात्मिक उपलब्धियों से ही मानूँगा स्व को महान्।

दूसरों के ख्याति पूजा लाभ से मैं स्वयं को न मानूँगा हीन/(दीन),
उन से ईर्ष्या घृणा करके मैं स्वयं को न बनाऊँगा हीन/(दीन)।। (2)

संसार के हर प्राणी अनादि अनंत काल से कर्म से आच्छन्न,
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध-मद-ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा से होते मलीन/(दीन-हीन)।

तथापि स्वयं को मानते महान् महापुरुषों को भी मानते दीन-हीन,
ऐसे विपरीत भाव के कारण महापुरुषों से करते घृणित काम।। (3)

तीर्थंकर-बुद्ध ईसा मसीह सुकरात मीराबाई से लेकर सज्जन संत तक,
करते है निन्दा-अपमान से लेकर प्रताड़ना से लेकर हत्या तक।

अतएव इससे मैं शिक्षा लेकर कर रहा हूँ स्वयं को ही संपूर्ण,

पर निन्दा अपमान या ईर्ष्या घृणादि त्यागकर कर रहा हूँ स्वयं को पावन।। (4)

समस्त शक्ति-उपलब्धि व समय-बुद्धि का कर रहा हूँ स्व में नियोजन,
स्वयं की ही प्राप्ति करना मुझे, अन्य कुछ नहीं मेरा प्रयोजन।

स्वयं की पूर्णता ही है परम उपलब्धि जिसे कहते है परिनिर्वाण,
यह ही मेरी शुद्ध अवस्था जिसमें समाहित अनंत गुण।। (5)

अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्यादि मेरी पूर्ण अवस्था में मैं पाऊँगा।
सच्चिदानंद बनकर 'कनकनंदी' मैं अजर-अमर-अमृत बनूँगा।। (6)

चितरी, दिनांक 17.07.2017, रात्रि 9.50
यह कविता (मणिभद्र, दीपेश, चितरी) के कारण बनी।

(परम आध्यात्मिक क्रांति गीत)

परम विकास हेतु

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : अपनी आजादी को.....)

परमप्रज्ञा-रश्मि से अज्ञानतम को मिटाने दो।
पावन-श्रद्धा जल से अंधश्रद्धा को धोने/(बहाने) दो।।

विशुद्ध-आत्मानुभव से सत्य का साक्षात् होने दो।
अनंत-आत्मवीर्य से परम-विकास होने दो।। (1)

स्व-पर विश्व मंगल हेतु हर भाव होने दो।
इनसे युक्त वचन को सत्य रूप में मान्यता दो।।

इनसे युक्त लेखनों को सच्चा साहित्य होने दो।
इनसे युक्त काव्यों को सच्ची कविता होने दो।। (2)

इनसे युक्त हर कार्य को पूजा रूप में करने दो।
ऐसे कार्य ही परम-कर्त्तव्य ऐसे भाव/व्यवहार होने दो।।

इससे प्राप्त सफलता को परम सफलता मानने दो।
इससे प्राप्त सुख को ही परम सुख होने दो।। (3)

कोई माने या ना माने उसकी चिन्ता छोड़ने दो।
जो कोई माने उसे स्वीकारे उसकी प्रशंसा/(स्वीकृति) होने दो।।

ज्योति से ज्योति जलते जाये ऐसी भावना होने दो।
अंधकार से घृणा/(भय) नहीं ज्योति को सदा बढ़ने दो।। (4)

तीर्थंकर-गणधर-श्रमण-साधक ऐसा सदा होते हैं।
अनेक अज्ञ-मोही-स्वार्थी-क्रूर उनसे जलते हैं।।

तो भी उनसे अप्रभावी परम विकास करते है।
उनके आदर्श 'कनकनंदी' नवकोटि से मानते हैं।। (5)

चितरी, दिनांक 07.08.2017, रात्रि 9.42

आध्यात्मिक आत्मविश्वास V/S लौकिक आत्मविश्वास

(आध्यात्मिक आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र से भिन्न व विपरीत भी है लौकिक आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र)

(आध्यात्मिक आत्मा के सुगुण तो लौकिक आत्मा के कुगुण)

(चाल : जय हनुमान....., आत्मशक्ति.....)

आत्मा का शुद्ध स्वरूप जानो, उससे विपरीत विकार मानो।
सच्चिदानंद है शुद्ध आत्म-स्वरूप...राग-द्वेष-मोह विकार रूप।।

अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्य संपन्न, होता है शुद्धात्मा चैतन्य पूर्ण।
तन-मन-इंद्रिय परे होता शुद्धात्मा, राग-द्वेष-मोह और अमूर्त आत्मा।। (1)

स्व-शुद्धात्मा का विश्वास है आत्मविश्वास, शुद्धात्मा का ज्ञान है सम्यग्ज्ञान।
शुद्धात्मा रमण है परम आचरण, तदनुकूल आचरण सम्यक् आचरण।।

निश्चयनय से मैं शुद्ध-परमात्मा, 'सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया' बताया।
ऐसा ज्ञान व ध्यान व कथन, होता आध्यात्मिक नय कथन।। (2)

ऐसा तब होता है संभव, जब जीव में होता सम्यक्त्व।
राग द्वेष मोह जब होते क्षीण, ज्ञान-वैराग्य से जीव होता सम्यक्।।

अष्टमद व सप्तभय से होता परे, तन-मन-धन की आसक्ति से परे।
ख्याति पूजा लाभ से होता निस्पृह, आत्म उपलब्धि हेतु होता तत्पर।। (3)

कर्मनाश कर बनना चाहे सिद्ध, अतएव करे शुद्धात्मा का ध्यान।
चिंतन-मनन व अध्ययन लेखन, शोध-बोध व अध्यापन प्रवचन।।

इससे विपरीत करते अज्ञानी, तन-मन-धनादि में होते मोही।
ख्याति पूजा लाभ व प्रसिद्धि हेतु, करते हैं ईर्ष्या तृष्णा घृणा व मद।। (4)

इस हेतु पढ़ाई व व्यापार करते, नौकरी से लेकर राजनीति करते।
अन्याय अत्याचार शोषण करते, मिलावट से लेकर भ्रष्टाचार करते।।

ऐसे कार्य हेतु जो होता विश्वास, वह नहीं होता आत्मविश्वास।
तदनुकूल होते जो ज्ञान-आचरण, वे नहीं है सुज्ञान-आचरण।। (5)

ये सभी है 'अहंकार' व 'ममकार', संसार-शरीर व भोग़ाचार।
इच्छा-कामना-तृष्णा-संग्रह, बहु आरंभ-परिग्रह नरक द्वार।।

वृक्ष काटकर फल खाने के सम, नहीं होते है वे आत्मविश्वासी
/(नहीं होता उन्हें आत्म स्वाभिमान)।
नीचे गिरा फल खाने के सम, वे होते हैं आत्मविश्वासी
/(उन्हें होता है आत्म स्वाभिमान)।। (6)

रावण-कंस-हिटलर-मुसोलीन, नहीं थे वे सही आत्मविश्वासी/(वे थे सब क्रूर व दंभी)।
तीर्थंकर-गणधर-आचार्य-श्रमण, होते हैं वे सही आत्मविश्वासी।।

मोहमद में होकर वे मोहित, आध्यात्मिक जन को मानते विपरीत।
आध्यात्मिक जन इन्हें मानते विपरीत, दोनों ध्रुवों सम होते विपरीत।। (7)

गुणस्थान व लेश्या में होते वे भिन्न, भले शरीर में होते समान।
आत्मिक गुणों में होते वे विपरीत, मोही न समझता आत्मिक गुण।।

यह (है) परम आध्यात्मिक रहस्य, अज्ञानी मोही से अज्ञात रहस्य।
आध्यात्मिक जन से ज्ञात रहस्य, आत्मा की उपलब्धि 'कनक' का लक्ष्य।। (8)

चितरी, दिनांक 06.08.2017, रात्रि 9.30

संदर्भ-

वस्तु स्वरूप अनेकांत होने से उस वस्तु के स्वरूप की उपलब्धि के लिए अनेकांतात्मक प्रणाली, पद्धति या मार्ग चाहिए। आत्मा एक चैतन्य वस्तु होने से उसमें भी अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, सुख, वीर्य आदि अनंत गुण विद्यमान है। परन्तु आत्मा के गुणों को अवरुद्ध करने वाले, विकृत करने वाले, ह्रास करने वाले अनंत कर्म परमाणु रूप विरोधी तत्त्व उस स्वरूप की उपलब्धि के लिए बाधक कारण बने हुए हैं। इन विरोधी कारणों का संयोग होने के कारण आत्मा के वैभाविक परिणमन है। विरोधी तत्त्वों का संचय एवं विध्वंस का कारण तथा अनंतदर्शी होने के कारण बताते हुए गुणभद्रस्वामी आत्मानुशासन में कहते हैं-

कुबोध रागादि विचेष्टितैः फलं, त्वयापि भूयो जननादि लक्षणम्।
प्रतीहि भव्य प्रतिलोम वृत्तिभिः, ध्रुवं फलं प्राप्स्यसि तद्विलक्षणम्।। (106)

Thou host suffered the consequence of false knowledge, attachment and such evil acts in the shape of births and rebirths. Be assured that thou will certainly attain just the opposite result (i.e. liberation) by noble acts of an opposite character (absence of attachment, etc.).

हे भव्य! तूने बार-बार मिथ्यात्व, ज्ञान एवं राग-द्वेषादि जनित प्रवृत्तियों से जो जन्म-मरणादि रूप फल प्राप्त किया है उसके विरुद्ध प्रवृत्तियों-सम्यग्ज्ञान एवं वैराग्य जनित आचरणों-के द्वारा तू निश्चय से उसके विपरीत फल-अजर-अमर पद को प्राप्त करेगा, ऐसा निश्चय कर।

दयादमत्याग समाधि संततेः पथि प्रयाहि प्रगुणं प्रयत्नवान्।
नयत्यवश्यं वचसामगोचरं विकल्पदूरं परमं किमप्यसौ।। (107) आ.शासन.

संदर्भ-

जो मनुष्य मतिज्ञान व श्रुतज्ञान के अभिमान से श्री जिनेन्द्र देव द्वारा प्रतिपादित अर्थ को स्वच्छंद अपने मन कल्पित यद्वा-तद्वा विरुद्धार्थ को अर्थात् आगम के सत्यार्थ को छिपाकर मिथ्या अर्थ को कहते हैं वह मिथ्यादृष्टि है।

सम्यग्दर्शन के भेद

समत्तरयणसारं मोक्खमहारुक्खमूलमिदि भणियं।

तं जाणिज्जइ णिच्छयववहारसरूवदो भेदं।। (4) (रयणसार)

सम्यग्दर्शन ही तीन रत्नों में प्रमुख रत्न है, यह सम्यग्दर्शन मोक्षरूपी वृक्ष का मूल जड़ है। इसी सम्यग्दर्शन के निश्चय सम्यग्दर्शन एवं व्यवहार सम्यग्दर्शन ऐसे दो भेद हैं।

भावार्थ-जीवों के परिणामों में जो विशुद्धता प्राप्त होती है वह बाह्य और आभ्यंतर कारणों के निमित्त से विशुद्धता प्राप्त होती है। उससे आत्मा की प्रतीति अर्थात् आत्मा की अभिरुचि होती है और आत्मिक गुणों की श्रद्धा होना यह निश्चय सम्यग्दर्शन है तथा आत्मा के स्वरूप को प्रकट-व्यक्त कराने वाले देव-शास्त्र-गुरु और धर्म का श्रद्धान होना यह व्यवहार सम्यग्दर्शन है।

आत्मा अनंत गुणों का पिण्ड है, उन गुणों में सम्यग्दर्शन भी आत्मा का गुण है, वह सम्यग्दर्शन आत्मा को अपनी आत्मा के स्वभाव में स्थिर कराता है और उससे आत्मा अपने स्वरूप में परिणमन करता है, अपने आत्मगुणों में अभिरुचि करता है व पर पदार्थों को अपने से भिन्न समझकर उनको अपनाता नहीं है, यही सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्दृष्टि कैसा होता है?

भयविसणमलविवज्जिय, संसार सरीरभोग णिव्वण्णो।
अट्ठगुणंगसमग्गो, दंसणसुद्धो हु पंचगुरुभत्तो।। (5)

सात प्रकार के भयों से रहित, सात व्यसनों से रहित, पच्चीस शंकादि दोषों से रहित तथा संसार शरीर और भोगों से विरक्त भाव को रखकर एवं निःशंकादिक आठ गुणों सहित होकर, पंचपरमेष्ठी में दृढ़ श्रद्धा-भक्ति भावना रखना विशुद्ध सम्यग्दर्शन है।

सम्यग्दृष्टि दुःखी नहीं होता

णियसुद्दप्पणुरत्तो बहिरप्पावच्छवज्जिओ णाणी।
जिणमुणिधम्मं मण्णइ गइदुक्खीहोइ सद्दिट्ठी।। (6)

जो ज्ञानी भव्यात्मा पुरुष अपनी आत्मा के शुद्ध स्वभाव में अनुरक्त-तन्मय होता है और पर-पदार्थ जन्य पुद्गलों की शुभाशुभ पर्यायों से विरक्त होता है और श्री जिनेन्द्र भगवान्, निर्ग्रंथ (नग्न) मुनि-गुरु तथा जिनधर्म को श्रद्धा भाव से भक्तिपूर्वक मानता है वह संसार के समस्त प्रकार के दुःखों से रहित सम्यग्दृष्टि है।

भावार्थ-शुद्ध बुद्ध ज्ञायक एक स्वभावी परम वीतराग रूप आत्मा के स्वभाव में तन्मय होकर देव-शास्त्र-गुरु धर्म की प्रतीत कर वीतराग परिणति में स्थिर होने की भावना सो सम्यग्दर्शन है।

44 दोष रहित सम्यग्दृष्टि

मय-मूढ-मणायदणं, संकाइ-वसण भयमईयारं।
जेसिं चउदालेदो, ण संति ते होंति सद्दिट्ठी।। (7)

जिनके आठ मद, तीन मूढ़ता, छह अनायतन, शंकादि आठ दोष, सात व्यसन, सात प्रकार के भय और पाँच प्रकार के अतिचार इस प्रकार चवालीस दूषण नहीं है, वे सम्यग्दृष्टि है।

77 गुणों सहित सम्यग्दृष्टि श्रावक

उहयगुण-वसण-भय-मल-वेरग्गाइचार-भक्तिविग्घं वा।
एदे सत्तत्तरिया, दंसण-सावय-गुणा भणिया।। (8)

उभय गुण अर्थात् श्रावक के आठ मूलगुण और बारह व्रत (उत्तर गुण) सप्त व्यसन, सात भय, आठ मद, आठ शंकादि दोष, तीन मूढ़ता, छह अनायतन इन दोषों से रहित तथा वैराग्य उत्पन्न करने वाली भावनाएँ और मूल गुणों में और उत्तर गुणों में लगने वाले अतिचार अथवा सम्यक्त्व के पाँच अतिचार रहित भक्ति व विघ्न रहित इन सबको मिलाकर सतहत्तर सम्यग्दृष्टि श्रावक के गुण होते हैं इस प्रकार भगवान् ने कहा है।

मुक्ति सुख के पात्र कौन?

देवगुरुसमयभत्ता संसार सरीर भोग परिचित्ता।
रयणत्तयसंजुत्ता ते मणुया सिवसुहं पत्ता।। (9)

जो भव्य मनुष्य देव-शास्त्र और गुरु के भक्त हैं और जिन्होंने संसार शरीर और भोगों से मुख मोड़ लिया है अर्थात् त्याग कर दिया है तथा सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान तथा सम्यक्चारित्र से संयुक्त है ऐसे वे मनुष्य मोक्ष सुख को प्राप्त होते हैं।

सम्यग्दर्शन के बिना दीर्घ संसार

दाणं पूया सीलं उपवासं बहुविहंपि खवणंपि।
सम्मजुदं मोक्खसुहं सम्मविणा दीहसंसारं।। (10)

चतुर्विध संघ-मुनि आर्यिका पिच्छी कमंडलुधारी त्यागी व व्रतधारी श्रावक-श्राविकाओं के लिए आहारदान, ज्ञानदान, औषधदान व अभयदान वस्तिकादान देना। अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, दिगम्बर साधु और जिनवाणी शास्त्र की पूजा करना। एक देश या सकल देश निरतिचार ब्रह्मचर्य व्रत पालन करना। अष्टमी चतुर्दशी प्रोषध के साथ उपवास करना अथवा अन्य भी एक दो तीन आदि उपवास करना और भी अनेक धर्मानुष्ठान के लिए उपवास करना। इस प्रकार सम्यक्त्व सहित करने पर मोक्ष सुख की प्राप्ति होती है। अर्थात् सम्यक्त्व के बिना सब दीर्घ संसार के लिए कारण है।

श्रावक व मुनि धर्म के मुख्य कर्त्तव्य

दाणं पूया मुक्खं सावयधम्मो ण सावया तेण विणा।
झाणज्झयणं मुक्खं जइधम्मो तं विणा तहा सोवि।। (11)

सम्यक्त्वरहित जीव का लक्षण

उग्गो तिव्वो दुट्ठो दुब्भावो दुस्सुदो दुरालावो।
दुम्मदरदो विरुद्धो सो जीवो सम्मउम्मुक्को।। (43)

उग्र प्रकृति वाले, तीव्र क्रोधादि प्रकृति वाले, दुष्ट स्वभाव वाले, दुर्भाव वाले, मिथ्या शास्त्रों के श्रवण करने वाले, दुष्ट वचन के कहने वाले, मिथ्याभिमान को धारण करने वाले, आत्मधर्म से विपरीत चलने वाले और अतिशय क्रूर प्रकृति वाले मनुष्य सम्यक्त्व रहित होते हैं।

भावार्थ-जो जीव निरंतर क्रोध में डूबा रहता है और जीवों के प्रति बैर द्वेष करता रहता है। बिना प्रयोजन भी धर्मात्मा जीवों के ऊपर क्रोध करेगा। मान के मद में दूसरों को अपमानित करेगा। मायाचारी करता रहेगा। विवेक शून्य असत्य भाषी मिथ्यात्व को अपनाने वाला वाचाल रहता है अर्थात् सन्मार्ग सम्यक्त्व से विपरीत आचरण वाला है।

भावार्थ-सम्यक्तव गुण ही सब गुणों में प्रधान गुण है। जीव को जब तक सम्यक्त्व गुण प्राप्त नहीं होता है तब तक संसार भ्रमण का अंत नहीं आता है। सम्यक्त्व होने के पश्चात् जीव नरकवास में रहे तो भी वह श्रेष्ठ है परन्तु मिथ्यात्व सहित स्वर्ग भी सुखकारी नहीं है। सम्यक्त्व होने पर ही सम्यग्ज्ञान और चारित्र की सार्थकता होती है।

अहो! सबसे बड़ा कष्ट मिथ्यात्व

तणुकुट्ठी कुलभंगंकुणइ जहा मिच्छमप्पणो वि तहा।
दाणाइ सुगुण भंगंसुगइभंगं मिच्छमेव हो कट्ठं।। (48)

जिस प्रकार कोढ़ी रोग वाला मनुष्य कुष्ठ रोग शरीर के कारण अपने कुल को नष्ट करता है ठीक उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि मनुष्य दान पूजा चारित्र और धर्मायतनों का विध्वंस करता है, इसलिये मिथ्यात्व बहुत ही कष्टप्रद दुःखदायक है।

मिथ्यात्व से समस्त आत्मीय गुण नष्ट हो जाते है और सच्चे देव-शास्त्र-गुरु तथा धर्माचरणों से विपरीत भाव व क्रिया बनते है। अर्थात् मिथ्यात्व का सेवन करना महा दुःखों का ही कारण है।

भावार्थ-मिथ्यात्व से शुभ भाव, शुभ क्रिया, शुभ गति, सुकुल, सद्गुण, धर्माचरण, स्वर्ग मोक्ष आदि सभी दूर होते हैं।

सम्यग्दृष्टि ही धर्मज्ञ है

देवगुरुधम्मगुण चारित्तं तवायार मोक्खगइ भेयं।
जिणवयणसुदिट्ठिविणा दीसइ किह जाणए सम्मं।। (49)

मनुष्य सम्यग्दर्शन के बिना देव गुरु धर्म क्षमादि गुण चारित्र तप मोक्षमार्ग तथा श्री जिनेन्द्र भगवान् के वचन को सही रूप से यथार्थ रूप से नहीं जान सकते हैं।

भावार्थ-वास्तव में जिनके सम्यग्दर्शन नहीं है उनके देव, शास्त्र, गुरु, धर्म, उत्तम क्षमादि गुण, सामायिक छेदोपस्थापना परिहार विहार विशुद्धि सूक्ष्म साम्पराय यथाख्यात चारित्र को, तपाचार को और मोक्षमार्ग को भी नहीं जानते हैं।

मिथ्यादृष्टि की पहचान

एक्कु खणं ण विचिंतइ मोक्खणिमित्तं णियप्पसाहावं।
अणिसं विचित्तपावं बहुलालावं मणे विचिंतेइ।। (50)

मोही अज्ञानी संसारी प्राणी मिथ्यादृष्टि जीव एक क्षण मात्र भी अपने लिए मोक्ष प्राप्ति के लिए मोक्ष सिद्धि के लिए अपने आत्म स्वरूप का विचार चिंतवन मनन नहीं करता है, परन्तु दिन-रात आरंभ परिग्रह आदि परवस्तु के पाप कार्यों का बार-बार विचार व चिंता करता है।

साम्य भाव का घातक

मिच्छामइमय मोहा सवमत्तो बोलए जहा भुल्लो।
तेण ण जाणइ अप्पा अप्पाणं सम्म भावाणं।। (51)

मिथ्यामति-मिथ्यादृष्टि जीव मिथ्याबुद्धि के अभिमान से मदोन्मत्त होकर मदिरापान करने वाले मार्ग भ्रष्ट भुल्लड़ मनुष्य के समान यद्वा-तद्वा मिथ्या प्रलाप करते हैं और वे मोह के उदय से अपनी आत्मा को नहीं जानते हैं। तब अपनी आत्मा के समता भाव को कैसे जानेंगे? अर्थात् सर्वथा नहीं जानेंगे।

कर्मक्षय का हेतु सम्यक्त्व

मिहरो महंधयारं मरुदो मेहं महावणं दाहो।
वज्जो गिरि जहाविय सिंजइ सम्मे तहा कम्मं।। (52)

जिस प्रकार सूर्य अंधकार को तत्काल नष्ट करता है। वायु मेघ के समूह को नाश कर देती है। दावानल वन को जला देता है। वज्र पर्वतों का भेदन (चूर्ण) कर देता है। उसी प्रकार एक सम्यक्त्व भी समस्त कर्मों का नाश कर देने में समर्थ है।

भावार्थ-जिस प्रकार सूर्य का उदय होते ही रात्रि का अंधकार साथ ही साथ विनाश हो जाता है। हवा चलने पर मेघों के समूह विनष्ट हो जाते है। दावानल अग्नि महावन को जलाकर भस्म कर देता है। वज्र का आघात होने पर बड़े-बड़े पर्वत चकनाचूर हो जाते हैं। उसी प्रकार एक सम्यक्त्व असंख्य कर्मों के नाश करने में महासमर्थ शक्तिमान है।

परिणामों के कार्य

पहिया जे छप्पुरिसा परिभट्टारण्णमज्झदेसम्मि।
फल भरियरुक्खमेगं पेक्खित्ता ते विचिंतंति।। (507)
णिम्मूलखंधसावहसाहं छित्तं चिणित्तु पडिदाइं।
खाउं फलाइ इदि जं मणेण वयणं हवे कम्मं।। (508) (गो. सार)

कृष्ण आदि एक-एक लेश्या वाले छह पथिक मार्ग भूल गये। वन के मध्य में फलों से लदे हुए एक वृक्ष को देखकर वे विचार करते हैं-कृष्णलेश्या वाला विचारता है कि इस वृक्ष के स्कंध को काटकर फल खाऊँगा। कपोतलेश्या वाला विचारता है, इसकी बड़ी डाल काटकर फल खाऊँगा। पद्मलेश्या वाला सोचता है कि वृक्ष को हानि न पहुँचाकर केवल फल तोड़कर खाऊँगा। शुक्ललेश्या वाला विचारता है कि गिरे हुए फलों को ही खाऊँगा। इस प्रकार मनपूर्वक जो वचन होता है, वह क्रम से उन लेश्याओं का कार्य होता है।

अंतरंग भावरूपी विद्युत् शक्ति से परिचालित होकर, बहिरंग में कार्य होता है। बाह्य कार्य-कलाप, बोलचाल, व्यवहार, आचार, विचार, अंतरंग परिणाम से प्रेरित होकर, प्रभावित होकर ही संपादन होता है। प्राचीन मनोवैज्ञानिकों ने मनोविज्ञान का संपूर्ण सार लेकर संक्षिप्त एवं महत्वपूर्ण निम्नोक्त एक श्लोक कहा है।

आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषणेन च।
नेत्रवक्त्र विकारेण लक्ष्यतेंऽतर्गतं मनः।।

आकार (शारीरिक गठन) इंगित (संकेत) गति (चलना-फिरना, गमनागमन) चेष्टा (आचार, कार्य संपादन) भाषण (बोलचाल या कथोपकथन) नेत्र विकार (आकार-प्रकार एवं हलन-चलन) वक्त्र (मुख) विचार से अंतरंग मनोभाव परिलक्षित होता है।

अंतरंग मनोभाव बहिरंग में प्रकट होने के विभिन्न द्वार हैं। उसमें से उपरोक्त पथिकों के उदाहरण में भावपूर्ण वचन एवं उनके कार्य का दिग्दर्शन किया गया है।

भटके हुए पथिक जब फल से लदे हुए वृक्ष को देखते हैं तब उनके अंतरंग भावानुसार वचन एवं क्रिया का बाह्य में प्रतिफलन हुआ। उसमें से कलुषतम परिणाम वाला (कृष्णलेश्या वाला) सोचता है कि मैं इस पेड़ को समूल उखाड़कर फल

खाऊँगा। इसका भावार्थ यह होता है कि दूसरों का समूल विनाश करके अपना स्वार्थ संपन्न करना। इस श्रेणी में अत्यंत क्रूर, स्वार्थ परायण जीवों का अंतर्भाव होता है। उदाहरण के लिए-रावण, कंस, दुर्योधन, हिटलर, मुसोलिनी, नेपोलियन, औरंगजेब, गजनवी, गौरी, तैमूरलंग, अहमदशाह, अबादील, नादिरशाह आदि।

कलुषतर परिणाम वाला (नीललेश्या वाला) विचार करता है कि वृथा पेड़ को समूल उखाड़कर क्यों पेड़ को नष्ट करूँ? पेड़ को नष्ट करने से महती क्षति होगी। इसलिये इस पेड़ की एक शाखा को काटकर उसमें से फल खाऊँगा। नीललेश्या वाले के कृष्णलेश्या वाले से थोड़ा कम कलुषित मनोभाव होने से संपूर्ण पेड़ को काटने के लिए उसका मन नकारता है। उसके अंदर कृष्णलेश्या से कुछ अंश में अधिक सहानुभूति प्रगट होती है। इस श्रेणी के जीव दूसरों को कम क्षति पहुँचाकर अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। इस श्रेणी में प्रायः बाबर, हुमायूँ, अकबर, जयचंद आदि को अंर्तनिहित करना कोई अतिशयोक्ति न होगी।

कपोत लेश्या वाले का मनोभाव कलुषित होने पर भी कृष्ण एवं नील लेश्या के समान नहीं है। इसलिए वह सोचता है छोटी शाखा को काटकर वृथा क्षति पहुँचाना ठीक नहीं है। अतः छोटी शाखा को काटकर फल प्राप्त कर लेना अधिक उपयुक्त है। इस श्रेणी के जीव दूसरों को कम क्षति पहुँचाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करने में तत्पर रहते हैं। इस श्रेणी में सिंह, व्याघ्र, भालू आदि को अंतर्भाव कर सकते हैं।

तेजोलेश्या वाला निर्मल परिणाम वाला होने के कारण पेड़ को कम क्षति पहुँचाकर केवल एक छोटी शाखा काटकर फल खाने की सोचता है। वह उपरोक्त तीनों व्यक्तियों से अधिक संवेदनशील व्यक्ति है। इस श्रेणी के व्यक्ति सामान्य भद्र श्रेणी में आते हैं। दूसरों को अपने स्वार्थ सिद्धि के लिए विशेष क्षति पहुँचाना अनैतिक मानते हैं। इस श्रेणी में सामान्य नागरिक, गृहस्थ एवं सामान्य व्यापारी वर्ग को अंतर्निहित कर सकते हैं।

पद्म लेश्या वाला विशुद्धत्तर परिणाम वाला होने के कारण वृक्ष को बिना क्षति पहुँचाये फल तोड़कर खाने को सोचता है। इस श्रेणी के जीव अपनी स्वार्थ सिद्धि दूसरों को बिना कष्ट पहुँचाये करते हैं। इस श्रेणी में आदर्श श्रावक, आदर्श नागरिक, शाकाहारी, गाय, भैंस, हिरण, खरगोश आदि को अंतर्निहित कर सकते हैं।

शुक्ल लेश्या वाला उपरोक्त पाँच दोस्तों से विशुद्धतम परिणाम वाला होने से पेड़ को किसी प्रकार की क्षति पहुँचाये बिना फल खाना चाहता है। वह पेड़ के ऊपर चढ़ना, उसके अवयवों को तोड़ना, यहाँ तक कि लगे हुए फल को भी तोड़ना हिंसात्मक, पर पीड़ा मानता है। इसलिये वह स्वयंमेव नीचे वृक्षों से गिरकर पड़े हुए फलों को खाने के लिए सोचता है। इसी प्रकार के जीव दूसरों को किसी प्रकार क्षति पहुँचाना अत्यंत अनैतिक, अवैधानिक मानते हैं। जो इस श्रेणी के जीव हैं, वे अत्यंत उत्कृष्ट, उदार, परोपकारी, साम्यभावी और उन्नतिशील होते हैं। इस श्रेणी में हम दया के अवतार 'महावीर भगवान्', 'करुणा के अवतार', 'भगवान् बुद्ध', सत्य अहिंसा के पुजारी 'महात्मा गाँधी', धर्मराज 'युधिष्ठिर', आदर्श राजा 'राम', 'टॉलस्टाय', धर्म की जीवंत मूर्ति 'दिगम्बर जैन साधु' आदि-आदियों का नाम स्मरण कर सकते हैं।

मेरा दीर्घ अनुभव-स्व-परिणती (स्वभाव) में ही शांति; पर-परिणती (विभाव) में अशांति

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

आगम में जो वर्णन हुआ है उसे मैं अनुभव कर रहा हूँ।
निस्पृह-निराडंबर-समता-शांति को आत्मानुभव से कर/(पा) रहा हूँ।।

आत्मा में ही हैं अनंत गुण जो सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्रमय।
अनंत सुखवीर्य अस्तित्व वस्तुत्व समता-शांति-आनंदमय।।

अतएव स्व-आत्म स्वभाव में स्थिर होने से मिलते उपरोक्त गुण।
आत्म स्वभाव से विपरीत होने से, मिलते इनसे विपरीत कुगुण।।

आत्म स्वभाव में स्थिर होने हेतु अतः त्यागकर रहा हूँ विपरीत भाव।
जितने अंश में स्व में स्थिर होता हूँ उतने अंश में पाता हूँ स्वभाव।।

जितने अंश में स्वभाव में स्थिर न हो पाता उतने अंश में पाता हूँ कुगुण।
जिससे मुझे न मिलती समता-शांति जिससे न प्रगट होते सुगुण।।

स्व-स्वभाव में स्थिर होने हेतु त्यागकर रहा हूँ आत्म-विभाव।

राग द्वेष मोह काम क्रोध आदि व उसके उत्पादक सभी बाह्य-कारक।।

इसलिए मैं श्रद्धा-प्रज्ञा से संकल्पपूर्वक त्याग रहा हूँ बाह्य-कारक।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि तथा संकल्प-विकल्प-संक्लेश आदिक।।

संकीर्ण-कट्टर भाव-व्यवहार व पंथ-मत-जाति-भाषा व राष्ट्र।
अपना-पराया शत्रु-मित्र भाव अंधानुकरण व दबाव-वर्चस्व।।

समय-शक्ति-बुद्धि-साधन का जिससे होता है दुरुपयोग।
ऐसे भाव-व्यवहार-कथन आदि का कर हूँ नवकोटि (सर्वथा) से त्याग।।

अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा आदि का कर रहा हूँ यथायोग्य त्याग।
आकर्षण-विकर्षण-द्वंद्व-वैर-विरोध का कर रहा हूँ यथायोग्य त्याग।।

दुर्गुण नाश व सुगुण/(स्वगुण) प्राप्त करने हेतु ही कर रहा हूँ सर्व साधना।
सुद्रव्य क्षेत्रकाल भाव प्राप्तकर, कर रहा हूँ यथाशक्ति साधना।।

इससे ही मेरी हो रही आत्मविशुद्धि जिससे मुझे मिलती शांति/(शक्ति)।
इससे भिन्न अन्य सभी से, मिलती मुझे अशांति/(क्षय होती शक्ति)।।

यह सब मैंने आगम में जाना आधुनिक विज्ञान भी सिद्ध कर रहा।
बाल्यकाल से ही (मैं) अनुभव कर रहा हूँ 'कनक' अतः स्वभाव चाहा।।

चितरी, दिनांक 07.07.2017, (चतुर्दशी-चातुर्मास-स्थापना)
(स्व-आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त व ब्र. सोहन, ब्र. संध्या के कारण यह कविता बनी।)

कुछ गलत कदम जो दुःखदायी साबित होते हैं

जीवन में गलतियाँ सभी से होती हैं। इन गलतियों से सीख लेते हुए आगे बढ़ते रहना भी जरूरी है लेकिन कई बार जाने-अनजाने आप ऐसी गलतियाँ कर बैठती हैं, जो आपको जीवन भर ठेस पहुँचाती हैं।

जीवन एक लंबी सड़क की तरह है जिसमें कई गड्ढे, उतार-चढ़ाव, स्पीड ब्रेकर और दूसरी रुकावटें आती हैं। अक्सर इन रुकावटों से बचने के लिए हम एक सहज और आरामदायक रास्ता चुनने की भी कोशिश करते हैं, जिसके चलते कई

गलत कदम उठा लेते हैं और फिर से वहीं पहुँच जाते हैं, जहाँ से हमने शुरुआत की थी। इनके प्रति सजग रहकर और अपनी पिछली गलतियों से सबक लेकर आगे बढ़ेंगी तो निश्चित ही सही कदम उठायेंगी और अपनी खुशी हासिल करने की ओर आगे बढ़ सकेंगी। इसलिए आपके लिए यह जानना जरूरी है कि ऐसी कौन-कौनसी गलतियाँ अक्सर हो जाती हैं।

खुद पर और अपने सपनों पर यकीन न करना-हममें से हरेक के पास कोई ऐसा काम करने की खूबी होती है, जो दूसरे नहीं कर पाते अब अपनी इस खूबी को हम अपनी ताकत बनाते हैं या कमजोरी, ये पूरी तरह हम पर ही निर्भर है। बेशक हमारी नौकरी रिश्ते और जिम्मेदारियाँ हम पर दबाव बनाती है लेकिन अगर आप अपने सपने पर यकीन रखते हुए दिल की सुनेंगी तो पायेंगी कि आत्मविश्वास की कमी आपकी बहुत बड़ी गलती है। अपनी उम्मीदों और सपनों को पीछे छोड़कर आप अपनी आत्मा और आत्मबोध को कुचल देती हैं।

अपनी गलतियों को स्वीकार करना जिंदगी में आगे बढ़ने की दिशा में उठाया गय पहला कदम है। अगर आपसे किसी भी तरह की गलती हो जाये तो उसे तुरंत स्वीकार करना सीखें। इससे आप अपनी मंजिल की ओर तेजी से बढ़ पायेंगी।

जीवन में जब हम गलती की बात करते हैं तो इसका मतलब यह कतई नहीं है कि आपसे खाने में नमक ज्यादा हो गया या घर के किसी काम में गलती हो गई क्योंकि इनका प्रभाव जीवन पर लंबे समय तक नहीं पड़ता।

दूसरों से खुद की तुलना करना-दार्शनिकों का मानना है कि तुलना आपकी खुशी चुरा लेती है। यह सही भी है क्योंकि दो व्यक्ति कभी एक जैसे नहीं हो सकते। मसलन मैग्जीन या टीवी में दिखने वाली मॉडल से खुद की तुलना करना सही नहीं है क्योंकि वह उनका असल रूप नहीं होता। दूसरों से खुद की तुलना करके आप अपने जीवन की खूबसूरती को देख नहीं पायेंगी और हमेशा खुद को कोसती रहेंगी। अगर जीवन की खुशी महसूस करना चाहती है तो जो आपके पास है उसके लिए शुक्रगुजार बने और अपने जीवन को बेहतर बनाने के प्रयास जारी रखें।

अपने शरीर की बात न सुनना–यह एक बड़ी गलती है। शरीर से ज्यादा महत्वपूर्ण कुछ नहीं है। इसकी बात अनसुनी करके आप खुद के और इसके संकेतों के बीच एक दीवार खड़ी कर लेती है। असल में शरीर कई तरह के मानसिक और शारीरिक लक्षणों के जरिये आपसे कुछ कहना चाहता है लेकिन आप अक्सर इनकी ओर ध्यान नहीं देती। आपको यह समझना होगा कि इन्हें अनदेखा करके आप किसी बीमारी को दफा तो कतई नहीं कर सकती है अलबत्ता डॉक्टर के पास जाने का निर्णय लेने में देर जरूर कर सकती है।

गलत लोगों के साथ जुड़ना–यह तो तय है कि जिन लोगों के साथ आप समय बिताते है वे वास्तविकता और खुद के प्रति आपकी समझ को प्रभावित करते है। अगर आपसे जुड़े लोग आपको अहमियत नहीं देते या आपको नीचा दिखाने का प्रयास करते है तो समझ लीजिये कि आपके बीच का रिश्ता जहरीला है। ऐसे नकारात्मक प्रभाव आपके पूरे जीवन को तहस-नहस कर सकते हैं लेकिन तभी, जब आप खुद को इन प्रभावों से बचाने की कोशिश न करें। अगर आप सही मायने में आजादी चाहती है तो ऐसे लोगों से जुड़े, जो आपके साथ खड़े हो सकें और आपको आगे बढ़ाने में मददगार बन सकें।

जीवन से मिली सीख नजरअंदाज कर देना–जीवन की राह में न जाने कितने ही सबक मिलते हैं, जो हमें साफ दिखाई देते हैं लेकिन कुछ लोग इन्हें देखकर भी देखना नहीं चाहते। हमें यह समझना होगा कि इस तरह की दृढ़ता अक्सर आपको जरूरत से ज्यादा नुकसान पहुँचा सकती है। दरअसल ऐसी स्थिति में बहाव के साथ बहना आपको सही नहीं लगता और आप खुद के चारों ओर एक चट्टान जैसा घेरा बना लेती हैं। वहीं अगर आप जीवन में मिलने वाले सबक को खुले दिल से अपनाती है तो आप कुछ नया करने, चुनौतियों का सामना करने और जीवन में ज्यादा सतर्क रहने के लिए खुद को तैयार कर पाती है।

बड़ी सोच कहीं आपको रोक न दे

लोग अक्सर कहते हैं कि अगर सोचना ही है तो कुछ बड़ा सोचो। यह बात कुछ हद तक सही भी है लेकिन एक खेमा ऐसा भी है जो यह कहता है कि बड़ी

सोच आपको आगे बढ़ने से रोक भी सकती है। इसमें कोई शक नहीं कि बड़ी सोच का सकारात्मक पलड़ा भारी है लेकिन कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं, जिन्हें नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। अगर आप नहीं चाहती कि बड़ी सोच आपके पैरों की बेड़ियाँ बनकर आगे बढ़ने से न रोके तो आपको कुछ बातों पर जरूर गौर करना होगा। इससे आप न केवल तनाव का शिकार होने से बचेंगी, बल्कि अनावश्यक दबाव भी महसूस नहीं करेंगी।

ज्यादा सोचना आपके कदम थाम सकता है-बड़ी सोच के चक्कर में कई बार आप बहुत ज्यादा सोचने पर मजबूर हो सकती हैं। न केवल आप छोटी-छोटी बारीकियों के बारे में सोचने लगती हैं, बल्कि सोच-विचार में अपना काफी समय भी गुजार देती है, जिससे आपके दिमाग पर बोझ बढ़ने लगता है। ऐसे में आपकी कार्यक्षमता भी प्रभावित होने लगती है क्योंकि आप अपने लक्ष्य पर फोकस नहीं कर पाती।

यह बड़ी नाकामी की वजह भी बन सकती है-यह सही है कि बड़ी सोच आपको बड़ी जीत दिला सकती है लेकिन यह भी सही है कि केवल सोच को बड़ा करने से सफलता नहीं मिलेगी। कई बार यही सोच बड़ी नाकामी की वजह भी बन सकती है और आप औंधे मुँह गिर सकती है। यह आपको जल्दबाजी करने या गलत दिशा में आगे बढ़ने के लिए मजबूर कर सकती है।

पहुँच से बहुत दूर हो सकती है यह सोच-कई बार हम बड़े सपने पूरे करने के लिए बड़ा सोचते है। यह सोच बहुत आगे की होती है, जिसकी वर्तमान में प्रासंगिकता नहीं होती। यह कमजोर निर्णयों और फिर नाकामी का कारण बनती है। इसमें कोई शक नहीं कि भविष्य के लिए लक्ष्य तय करके आगे बढ़ना समझदारी है लेकिन वर्तमान में इसे लेकर ज्यादा सोचना सही नहीं है क्योंकि यही सोच आपका आगे बढ़ना मुश्किल भी कर सकती है।

पंचतंत्र की वह कहानी आपने सुनी होगी, जिसमें एक ब्राह्मण अपने सपनों की मटकी को लात मारकर तोड़ देता है। इससे समझा जा सकता है कि छोटे लक्ष्य तय करते हुए मंजिल हासिल करना ही समझदारी है।

खुशियों के सूचकांक पर जब हमारे देश का नंबर देखते हैं तो निराशा हाथ लगती है। शिक्षा व चिकित्सा संस्थानों की बढ़ती संख्या के बावजूद हमारे यहाँ जीवनशैली संबंधी बीमारियाँ बढ़ रही हैं। परपीड़न व नकारात्मक सोच के साथ कोई खुशी मिले तो भी वह शरीर को बीमारियों का घर बनाने के लिए काफी है। ऐसे में यही है सवाल कि...

आखिर क्यों है हमें खुशियों से परहेज?

-डॉ. अशोक पानगड़िया

नकारात्मक सोच की प्रभुता वाला दिमाग व्यक्ति की सकारात्मक सोच का दमन करते हुए उसे लगातार और स्थाई 'तनाव' की ओर धकेलता रहता है। यही आगे चलकर शरीर को बीमारियों का घर बना देता है और व्यक्ति खुश नहीं रह पाता।

दिमाग का विकसित हिस्सा 'शांति' की भावना को सर्वोपरि रखते हुए शरीर के लिए 'सबसे अच्छा डॉक्टर' साबित होता है। यह शरीर को जीवन शैली का गुलाम बनने से रोक बीमारियों का खतरा कम करता है।

आज हमारे संस्थान, ऑफिसों और क्लबों में आपसी वैमनस्य, साजिश, अविश्वास जैसी नकारात्मक भावनाएँ पसरी पड़ी हैं। मानसिक रोगों को शरीर में घर करने के लिए इससे अधिक और क्या चाहिए?

लाख टके का सवाल है कि आर्थिक विकास, तकनीकी और वैज्ञानिक तरक्की के बावजूद भारत को खुशियों से परहेज क्यों है? अंतर्राष्ट्रीय एजेंसी के आँकड़ों की माने तो हमारा देश 'खुशियों के सूचकांक' पर कहीं नजर नहीं आता। हमारे यहाँ शिक्षा व चिकित्सा संस्थानों की बढ़ती संख्या के बावजूद जीवनशैली संबंधी बीमारियाँ बढ़ती जा रही हैं। धार्मिक व आध्यात्मिक गुरु और उनके ढेरों अनुयायी मिलकर भी इतनी सकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न नहीं कर सकते है कि लोगों की खुशियों में इजाफा कर सकें। भारतीय बहुत बुद्धिमान है यह अमरीका के दो पूर्व राष्ट्रपति भी स्वीकार कर चुके है। सुख-चैन में कमी और बढ़ती बीमारियों को देखते हुए समस्या के समाधान की जरूरत है। न्यूरोलॉजी की प्रैक्टिस के दौरान भी मैं इसी सवाल से बेचैन रहता था। मुझे मस्तिष्क के मैकलिएन मॉडल के अध्ययन से समझने में कुछ सहायता मिली। मैकलिएन ने अपने मॉडल में दिमाग को 'तीन तरफा दिमाग' बताया है। यह

जिस तंत्रिका तंत्र से बना है वह एक तरह से मानव का विकास दर्शाती है। सबसे पहला रेप्टाइल यानी रेंगने वाला दिमाग। दूसरा भावुक व तीसरा तार्किक रूप से अत्याधुनिक नव स्तनपायी या नया दिमाग। ये आपस में जुड़े है पर हरेक का अपना अलग जैविक संघठन ऐसे कंप्यूटराइज्ड है जैसे उसमें अद्भुत आनुवांशिक प्रोग्रामिंग की गई हो। मानव व्यवहार के सभी कृत्य उसके बड़े से दिमाग के इन तीन घटकों के विशेष लक्षणों से ही उपजते हैं। सबसे पुराना यानी रेंगने वाला प्राणी जैसा दिमागी हिस्सा घरेलू सार-संभाल वाली गतिविधियों में लिप्त रहता है। दूसरे स्तर का दिमाग परिवार व समाज के रक्षण के लिए आवश्यक भावनाओं जैसे लालच, स्वार्थ, ईर्ष्या, प्यार-मोहब्बत, नफरत, डर, खुशी आदि के लिए उत्तरदायी है। सर्वाधिक विकसित दिमागी हिस्सा ज्ञान संबंधी है। लौकिक व अत्याधुनिक संदर्भ के चलते इस प्रकार के प्रभुत्वयुक्त दिमाग वाले लोग बुद्धिजीवी व आध्यात्मिक विचारों के होते हैं। नव विकसित या यूँ कहें जितना अधिक क्रमिक विकसित दिमाग होगा, उस व्यक्ति के दयालु, निःस्वार्थी व आध्यात्मिक होने के अवसर अधिक बढ़ेंगे। यह स्वरूप स्थिरता और खुशियाँ लाता है। दिमाग का भावना प्रधाना हिस्सा 'अमिंगडाला' पिछली यादों को भविष्य की कल्पनाओं से जोड़कर देखता है। एक तरह से यह दिमागी सर्किट का वह स्विच है जो एक क्लिक पर दिमाग के निचले, मंझले और उच्च यानी कि नव विकसित हिस्से के बीच ऊर्जा प्रवाहित करता है। दिमाग का उच्च स्तरीय विकसित हिस्सा 'शांति' की भावना को सर्वोपरि रखते हुए शरीर के लिए 'सबसे अच्छा डॉक्टर' साबित होता है। यह शरीर को जीवन शैली का गुलाम बनने से रोक बीमारियों का खतरा कम करता है। यह व्यक्ति के मानस को इस कदर स्थिर कर देता है कि वह शांत, दयालु भाव के साथ आध्यात्मिक अवस्था पा सकें। यहीं आंतरिक खुशियों की शुरुआत है, जहाँ से स्थायी सुख का मार्ग प्रशस्त होता है। इसके विपरीत सामाजिक या घरेलू नकारात्मक सोच की प्रभुता वाला दिमाग व्यक्ति की सकारात्मक सोच का दमन करते हुए उसे लगातार और स्थायी तनाव की ओर धकेलता रहता है। आगे चलकर इससे शरीर बीमारियों का घर बन जाता है और व्यक्ति खुश नहीं रह पाता। भारत बौद्धिक तौर पर स्वस्थ मानसिकता वाला देश रहा है। विदेशी आक्रमणों व दासता ने भारतीय मानसिकता को सदियों के लिए विकृत कर दिया। अस्तित्व

बचाने के दबाव में वे ऐसे जीन या आनुवांशिकी की ओर प्रवृत्त हुए कि दिमाग के सकारात्मक हिस्से की जगह नकारात्मकता ने ले ली। आजादी के बाद खुशमिजाज देश की जो उम्मीद जगी उस पर औद्योगिकीकरण, लाइसेंस व इंस्पेक्टर राज के भ्रष्टाचार का ऐसा जाल बुना कि समाज में नफरत, लोभ, ईर्ष्या जैसी नकारात्मक भावनाएँ घर कर गईं। इसी से आज हमारा समाज दुःखी हैं। खुशियों से दूर होते भारतीयों की प्रवृत्ति की एक और वजह अत्याधुनिक व्यक्तित्व निर्माण भी है, जिसका आईक्यू या ईक्यू से कोई सरोकार नहीं है। इसकी परिणति यह हुई कि आज हमारे संस्थान, ऑफिसों और क्लबों में आपसी वैमनस्यता, साजिश, अविश्वास जैसी नकारात्मक भावनाएँ पसर पड़ी हैं। मानसिक रोगों को शरीर में घर करने के लिए इससे अधिक और क्या चाहिए? यह सत्य है कि हम अपने आप से खुश नहीं हैं। आत्म विश्लेषण में ना हमें अपनी तरक्की दिखाई देती है और ना हम खुश हो पाते हैं। लेकिन अगर पड़ोसी या हमारा दोस्त कहीं पीछे रह गया कुछ हासिल नहीं कर पाया तो उसमें बड़ी खुशी होती है। भारत को खुशियों के सूचकांक में जगह दिलाने वाले ज्यादातर घटक गायब है तो दूसरी ओर जिस चीज में भारतीयों को सर्वाधिक खुशी मिलती है-वह है परपीड़न यानी दूसरों को तकलीफ पहुँचाना। ऐसा करते वक्त दिमाग में जो रासायनिक क्रिया होती है, वह क्षणिक सुख देती है लेकिन चारों ओर एक अस्वस्थ माहौल बना देती है। मुझे खेद के साथ यह कहना पड़ रहा है कि इस तरह की नकारात्मक सोच के साथ मिलने वाली खुशी और आत्म मुग्धता जैसे मनोविकार केवल बीमारियाँ ही बढ़ायेंगे।

आप सफल हैं पर जानते नहीं

आप भव्य हवेली में नहीं रहते, आलीशान कार में सफर नहीं करते, इसका मतलब यह नहीं कि आप नाकाम हैं। सफलता यह भी है-

रिश्तों में पुराने दिनों जैसी नाटकीयता नहीं है-पुराने दिनों में आपके रिश्तों में बहुत नाटकीयता हो सकती है लेकिन, अब आप उससे आगे बढ़ गये हैं तो सफल हैं।

आपको मदद माँगने में संकोच नहीं होता-मदद माँगना कमजोरी नहीं,

ताकत है। कभी किसी को अकेले सफलता नहीं मिली। मदद माँगना संकेत है कि आप परिपक्व हो गये हैं।

व्यवहार के ऊँचे मानक–अब आप खराब बर्ताव बर्दाश्त नहीं करते- दूसरों का ही नहीं खुद का भी। अब आप उनके साथ समय नहीं बिताते, जो पूरी ऊर्जा खत्म कर देते हैं।

आप अप्रिय घटनाओं को मन में नहीं रखते–खुद को चाहना भी सफलता है। जो आपको प्रसन्न न करे, जिससे आपका उद्देश्य पूरा न हो या पीछे खींचे, उसे इनकार करने लायक खुद से प्रेम भी सफलता है।

आप बहुत शिकायत नहीं करते–आप खौफनाक अनुभव से नहीं गुजरते, अकल्पनीय नुकसान नहीं सहते तो जो भी हम रोज अनुभव करते हैं वे सतही सांसारिक अनुभव होते हैं।

आपको दूसरों से सहानुभूति है–दूसरों की भावनाओं का अहसास न हो तो व्यक्ति भीतर से मृत है। सफल व्यक्ति दूसरों को भी अपने परिवार की तरह चाहता है।

अन्य की सफलता का जश्न मनाते हैं–दूसरे की कामयाबी का मतलब आपकी नाकामी नहीं है। उनकी जीत को आप जितनी ऊर्जा देते हैं, उतनी आप अपने लिए पैदा भी करते हैं।

दूसरे क्या कर रहे हैं, आप उसकी परवाह नहीं करते–आप जानते हैं कि आप हर व्यक्ति को खुश नहीं कर सकते। आप जानते हैं कि समाज आपको कई बार अवास्तविक कसौटियों पर कसता हैं। **(दैनिक भास्कर)**

ऐसा नहीं है कि सफल होने के लिए आपका आईक्यू सबसे ज्यादा होना चाहिए। दुनिया के ज्यादातर सफल लोगों के पास औसत आईक्यू है, पर उनका ईक्यू काफी अच्छा है। जानते हैं कि इमोशनल इंटेलीजेंस से सफलता किस तरह से मिल सकती है-

इमोशनल इंटेलीजेंस से मिलती है सफलता

आजकल यही धारणा है कि वर्कप्लेस पर वही व्यक्ति सफल होता है, जो स्मार्ट है, डाटा को याद रखने में सक्षम है और गजब की टेक्नीकल स्किल्स रखता है।

जबकि सच्चाई यह नहीं है। डेनियल गोलमैन ने अपनी बेस्ट सेलिंग बुक 'इमोशनल इंटेलीजेंस' के लिए सैकड़ों कंपनियों का शोध किया और पता लगाया कि औसत बुद्धिमत्ता वाले लोग आमतौर पर स्मार्ट लोगों से बेहतर प्रदर्शन करते हैं और सफल लीडर के रूप में उभरते हैं। इसका मिसिंग लिंग ईक्यू (इमोशनल कोशेंट) है। यह खुद की और दूसरों की भावनाओं को समझने और मैनेज करने की योग्यता होती है। अच्छी खबर यह है कि हालाँकि आपका आईक्यू 16 साल की उम्र से 60 साल तक नहीं बदलता है, पर आपको अपने ईक्यू को विकसित कर सकते हैं। ईक्यू के विकास से आपको तेजी से सफलता मिल सकती है। जानते हैं कि आप अपने ईक्यू के विकास के लिए क्या कर सकते हैं-

मैं फीडबैक ले सकता हूँ-आपका एम्पलॉयर हर समय बेहतर परिणामों में रुचि लेता है। वह ऐसा टीम लीडर चाहता है जो हमेशा सुधार के लिए फीडबैक लेता रहे। इसलिए आपका अगला चरण आलोचना और फीडबैक को सही तरह से हैंडल करना है। जब भी कोई व्यक्ति आपके विचारों की आलोचना करता है या उन पर हमला करता है तो आपकी प्रतिक्रिया किस तरह की होती है, इसको समझें। नकारात्मक भावनाओं पर तुरंत प्रतिक्रिया इसलिए आती है, क्योंकि इंसानी दिमाग खुद को बनाये रखने के लिए या तो लड़ने के लिए प्रेरित करता है या भागने के लिए। जब आप अपनी त्वरित भावनाओं को पहचान जाते हैं तो ताकतवर बन जाते हैं। रुकना और फीडबैक को सुनना सीखें। आपकी टीम चाहती है कि आप ऐसे लीडर बनें, जिससे खुलकर बात की जा सके और यह डर न हो कि आप क्या रिएक्ट करेंगे।

मैं जिम्मेदार हूँ-खुद को और अपनी भावनाओं को पहचानना सीखें। एक लीडर के लिए इमोशनल इंटेलीजेंस की पहली क्वालिटी सेल्फ अवेयरनेस है। आप क्या महसूस करते हैं और अलग-अलग तरह की भावनाओं से आपको क्या विचार आते हैं? आपको दिन के अलग-अलग और अलग-अलग स्थितियों में विचारों के उतार-चढ़ाव पर ध्यान देना चाहिए। जल्द ही आप पहचान जायेंगे कि आपके विचार ही भावनाओं में बहने पर मजबूर करते हैं, न कि खुद स्थिति। अपने विचारों को चुनना शुरू करे और देखे कि क्या घटित हो रहा है। उदाहरण के रूप में यदि आप अपनी छुट्टियों के बारे में खयाल करते हैं तो आप अपनी भावात्मक स्थिति को खुशी

की ओर ले जा सकते हैं। जब आप अपने विचारों, उसके बाद भावनाओं, फिर कार्यों और उनके परिणामों की जिम्मेदारी लेते हैं तो आप सफल लीडर बनने लगते हैं। प्रोफेशनल दुनिया उन्हीं लोगों को आगे बढ़ाती है जो सफल और विफल परिणामों की आगे जाकर जिम्मेदारी लेते हैं।

मैं आत्मविश्वास दर्शाता हूँ-अपने इमोशंस के बारे में अवेयर होने के बाद लीडर्स भावनाओं पर नियंत्रण करते हैं या स्वनियंत्रण दर्शाते हैं। जब हर स्थिति में आत्मविश्वास का प्रदर्शन करने लगते हैं तो लीडर बन जाते हैं, जिस पर लोग पूरा भरोसा करते हैं। जब भी खुद को इमोशनल महसूस करे तो पॉज बटन दबाये। डर या गुस्से के टॉप इमोशंस को गुजर जाने दे और अपने निर्णय पर असर न होने दें। इसके बाद अच्छा रेस्पॉन्स और बर्ताव करें।

मैं आपको सुनता हूँ-खुद से बाहर निकलकर दूसरों की बातों को ध्यान से सुनना शानदार क्वालिटी है। यह सोशल अवेयरनेस है। सुनने की क्षमता का अभ्यास करें। व्यक्ति जो कहना चाहता है, उसमें रुचि लें। उसे सुनने के लिए समय निकालें। बिना सुने निर्णय तक न पहुँचें। वह जो भी बोले, उसे रिपीट करके बतायें।

मैं हासिल करना चाहता हूँ-सफल लीडर्स में ईक्यू की तीसरी क्वालिटी मोटिवेशन होता है। मोटिवेशन से ही कुछ प्राप्त करने की इच्छा पैदा होती है। यह पैसे, पावर या स्टेटस से अलग बात होती है। फेलियर और चिड़चिड़ाहाट के बीच में आपका पैशन और जोश वर्कप्लेस पर चेलैंज लेने और काम को अच्छा बनाने की ऊर्जा देता है। आपको सफलता और लक्ष्य प्राप्त करने से खुशी मिलने लगती है। आप खुश रहने के लिए कड़ी मेहनत करने लगते हैं। जब आप लांग टर्म के फायदों के लिए वर्तमान में निवेश करते हैं और छोटे फायदों का त्याग करते हैं तो आप शानदार प्रोफेशनल बन जाते हैं। इससे आपकी एक शानदार छवि बनती है। आप टीम को प्रेरित करते है और सफल लीडर बनते हैं।

मैं आपके साथ काम करता हूँ-आप बदलाव के वाहक बनना चाहते हैं तो विवादों से ऊपर उठना होगा और सीखना होगा कि कैसे उन लोगों के साथ काम किया जाये जिनके विचारों से भिन्नता हो। मतभेदों से घबराने की जरूरत नहीं है। वर्कप्लेस पर हमेशा सत्ता संघर्ष चलता रहता है। जब भी विवाद आपको अपनी ओर

घसीटने की कोशिश करे तो इससे भावनात्मक रूप से अलगाव रखे और इसे रूटीन की स्थिति की तरह ट्रीट करें।

जानते हैं आईक्यू से भी बेहतर बातें-आईक्यू का अपना महत्व है, पर आप इमोशनल इंटेलीजेंस की मदद से भी जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

सहमति-अगर आप वर्कप्लेस पर हर व्यक्ति के विचारों से सहमत होने की कोशिश करते हैं तो यह आपके व्यक्तित्व का गुण बन जाता है। अगर आप टकराव या संदेह के बजाय सहयोगी और दयालु बनते हैं तो लोग आपके ऊपर विश्वास करने लगते हैं। इससे एम्प्लॉयर भी कोशिश करता है कि आप टीम को लीड करें।

कर्त्तव्यनिष्ठा-अगर आप प्लानिंग के साथ किसी काम में 10 हजार घंटे का अभ्यास करते हैं तो आप वर्ल्ड क्लास बन जाते हैं। लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कर्त्तव्यनिष्ठा या योजनाबद्ध व्यवहार के साथ काम करते हैं तो मंजिल तक जरूर पहुँचते हैं। ऐसे में एम्प्लॉयर भी आपकी सफलता के लिए भरसक प्रयास करता है।

बहिर्मुखता-आशावादिता, सकारात्मकता, ऊंर्जा और मुखरता बहिर्मुखता के स्तर को परिभाषित करता है। जब आप कलीग्स के साथ बातचीत शुरू करते हैं तो वे प्रतिक्रिया करते हैं। इससे बॉण्डिंग मजबूत होती है और काम आसान होता है। जब आप खुद को अलग कर लेते हैं तो आगे बढ़ने के अवसरों से दूर हो जाते हैं।

खुलापन-खुलापन जिज्ञासा और अनुभवों की जरूरत से पैदा होता है। जैसे-जैसे आप अलग-अलग विचारों और परिस्थितियों के प्रति सजग करते है, वैसे-वैसे आपकी आजादी और क्रिएटिविटी बढ़ती जाती है। ये दोनों क्वालिटीज आपको मैनेजरियल रोल्स के लिए आगे बढ़ाती हैं।

स्थिरता-यह लचीलापन है। जब लोग मानते हैं कि आप स्थिर और सुरक्षित इंसान हैं तो वे मुश्किल समय में आपकी ओर आते हैं। अगर आप अपने गुस्से, डर और अवसाद को पहचानने की योग्यता रखते हैं और उन्हें काबू कर सकते हैं तो आप लीडर बन सकते हैं।

मैं सम्मान करता हूँ-सोशल अवेयरनेस के बाद रिलेशनशिप मैनेजमेंट पर ध्यान दें। जब दूसरों का सम्मान करना सीखते हैं तो सोशल स्किल्स में सुधार होता है। इससे आपको बदले में सम्मान मिलता है। दूसरे व्यक्ति के स्टेटस के बारे में विचार किये बिना सहृदयता और दयालुता का अभ्यास करना चाहिए।

पूँजीवाद के सूखे में हरियाली लाती है रचनात्मकता

आप जीवन में सफलता चाहते हैं तो आपको रचनात्मकता को सर्वोच्च स्थान देना होगा। इससे जीवन रोमांचित होगा।

यहाँ बहस पूँजीवाद को लेकर नहीं है। दुनिया में यह एक स्वीकार्य वाद है और रचनात्मकता जीवन रेखा। विचारधाराओं को आपके खून के अंदर केवल रचनात्मकता से ही समाया जा सकता है, वर्ना विचारधारा होती तो है पर अंत तक अस्वीकार्य रहती है। पूँजीवाद की परिभाषा में ही आम शब्द का समावेश नहीं है। इसमें खास होने की झलक है। बिजनेस और इंडस्ट्री सब कुछ खास लोगों के हाथ में होता है। पूँजीवाद में आम लोगों पर से पाँव रखकर निकलने की क्षमता व ताकत होती है। जब क्रूरता प्रमुख होगी, संवेदना शुष्क हो जाती है तो सर्वप्रथम रचनात्मकता खत्म होती है। पूँजीवाद में एक अजीब-सा सूखापन और शोषण करने का एकाधिकार समाया होता है। दूसरों की ओर से सोचने जैसी खूबसूरत भावना नदारद होती है। इस संपूर्ण सूखेपन में रचनात्मकता ही सिर्फ हरियाली हो सकती है। कलात्मक बौद्धिकता चूँकि मानवीय होती है। वह व्यक्ति जो बिजनेस या इंडस्ट्री चलाता है, उसका रचनात्मक होना बहुत जरूरी है।

संपूर्णता की ओर यात्रा-वह व्यक्ति विशेष तौर पर महत्वपूर्ण है जो सारा व्यवसाय चलायमान रखता है। उसने यदि सिर्फ व्यवसायिक प्रबंधन ही पढ़ा है तो उसे मानवीय प्रबंधन पढ़ना व सीखना पड़ेगा। सिर्फ बैलेंस शीट बनाना ही संपूर्ण नहीं हैं। कुछ ऐसा भी कमाना पड़ेगा जो बैलेंस शीट में न दिखे। यहाँ मेरा अर्थ बेनामी संपत्ति से नहीं है। उन रिश्तों से है, सामाजिक दायित्व से है, जो किसी बहीखाते में विदित न हो, हाँ वो आपकी भावनात्मक संपत्ति हैं। आपके नित बढ़ते अपराध बोध को नियंत्रित करती है। जब भी आप लोगों के प्रति अपनी जिम्मेदारियाँ निभायेंगे, आप सूखे पूँजीवाद में वर्षारूपी रचनात्मकता पिरो पायेंगे। वह व्यक्ति जो व्यवसाय की धुरी है, यदि वह साहित्य पढ़ता है, चित्र बनाता है, तो वह हमेशा बैलेंस शीट को संतुलित रखेगा। रचनात्मकता हमेशा उसे बिजनेस के विस्तार में सहायक होगी। वह लोगों को खोता हुआ आगे नहीं बढ़ेगा, बल्कि कंधे से कंधे जोड़े आपके साथ होगा। हायर एंड फायर पूँजीवादी संस्कृति है। लोगों को जीतना और जोड़कर रखना जरूरी है।

बायजो लर्निंग एप-केरल के एक छोटे से गाँव कुन्नूर में शिक्षक दंपती के बेटे बायजो रवींद्रन ने एक लर्निंग एप बनाई जिसमें विषय की स्पष्टता के लिए ऑडियो-वीडियो एवं एनीमेशन टूल्स का इस्तेमाल किया गया है। इसमें मैथ्स, साइंस और इकोनोमिक्स आदि विषय संपूर्ण स्पष्टता के साथ समझाये गये।

एलन मस्क-एलन मस्क के बिजनेस आइडियाज गैर-परंपरावादी थे जैसे- इलेक्ट्रिक कार-टेस्ला, स्पेस कार्गो ऑपरेटर कंपनी-स्पेसेक्स, यात्रा करने का पाँचवाँ आयम-हाइपरलूप और सौर ऊर्जा उत्पादन करने वाली कंपनी-सोलर सिटी। ये पर्यावरण के ज्यादा करीब थे, रचनात्मक थे।

हरियाली छाने लगती है-रचनात्मकता लोगों का नजरिया सकारात्मक बनाती है। रचनात्मकता में एक शब्द समाहित है रचना, जिसका अर्थ है निर्माण करना। जब आप सृजन करते हैं तो यह कृत्य आपको प्रकृति के सम्मुख ला खड़ा करता है। पूँजीवाद के सूखेपन में हरियाली छाने लगती है। आप मानवीय मूल्यों का निर्माण करने लगते हैं।

निरंतर बदलने की इच्छा रखना एक ताकत होती है, चाहे इसकी वजह से कंपनी का एक बड़ा हिस्सा कुछ देर के लिए पूरी तरह से अव्यवस्थित क्यों न हो जायें। **-जैक वेल्च**

कुछ महान् करने के लिए मुसीबतों का सामना करने से घबराइये मत।

-जॉन डी. रॉकफेलर

सड़क में मुड़ाव होना, उसका खत्म होना नहीं है, जब तक कि आप स्वयं मुड़ने में सिफल नहीं होते। **-हेलेन केलर**

जिंदगी बहुत छोटी है, बहुत खूबसूरत है, काम के प्रति इतने गंभीर न रहें। जीवन का आनंद भी लें। **-जैक मा**

जीवन में सबसे अच्छा दोस्त वह है, जो आपका सर्वश्रेष्ठ बाहर लाता है।

-हेनरी फोर्ड

मुझे सफलता का मंत्र नहीं पता, लेकिन सभी को खुश करने का प्रयास करना ही विफलता का मंत्र है। **-बिल कॉसबी**

धैर्य के माध्यम से कई लोग उन परिस्थितियों में भी सफल हो जाते हैं जो कि

एक निश्चित विफलता जान पड़ती हैं। **-बेंजामिन डीज्रेली**

एक सफल व्यक्ति वह है जो दूसरों द्वारा अपने ऊपर फेंकी गई ईंटों से एक मजबूत नींव बना सकें। **-डेविड ब्रिंकले**

बार-बार विफल होने पर भी उत्साह न खोना ही सफलता है।

-विंस्टन चर्चिल

सफल आदमी बनने के बजाय हमेशा एक महत्वपूर्ण आदमी बनने की सोचिये। **-अल्बर्ट आइंस्टाइन**

सही समय पर सही फैसला लेना भी एक कला है

अगर आप अपने जीवन में सफल होना चाहते हैं तो आपको तत्काल निर्णय लेने की क्षमता विकसित करनी चाहिए।

रोजमर्रा की जिंदगी में ऐसे बहुत से क्षण आते हैं, जब हमें तत्काल ही कोई फैसला करना पड़ता है। ऐसे समय में फैसले के सही या गलत होने से ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है फैसले का लिया जाना। अगर आप सही समय पर फैसला नहीं कर पाते हैं तो कई अवसर खो बैठते हैं। इसमें दो तरह की संभावनाएँ रहती हैं। एक तो यह कि सही फैसला लिए जाने पर आपका फायदा होगा और दूसरा, गलत फैसला लिए जाने पर आपको एक सीख मिलेगी। अपनी जिंदगी को बेहतर ढंग से जीने के लिए फैसले लेने की कला में आपको माहिर बनना होगा। इसके लिए कुछ इस तरह प्रयास किये जा सकते हैं-

न उलझें खुद में-बहुत से लोग किसी भी फैसले को लेने से पहले उसके परिणामों और उससे जुड़ी बुरी संभावनाओं के एक-एक पहलू पर इतना सोचने लगते हैं कि वे एक चक्र में उलझकर ही रह जाते हैं। किसी भी चीज का इतना ज्यादा विश्लेषण करने पर वे एक छोटा-सा फैसला भी खुद नहीं कर पाते हैं। इसके उन्हें दो नुकसान होते हैं। एक तो उनके दिमाग में द्वंद्व चलता रहता है और दूसरा, उनके अपने आप में ही उलझे रहने का फायदा उनके प्रतिद्वंद्वी उठा ले जाते हैं। तमाम विकल्पों पर सोच-सोचकर अपनी ऊर्जा गँवा चुके ये लोग प्रतिद्वंदियों का छोटा-सा दाँव भी विफल नहीं कर पाते। आपको कोई भी फैसला लेते समय सोच-विचार जरूर करना

चाहिए, पर इसमें ज्यादा उलझने के बजाय अपने फैसले को सही साबित करने के लिए कड़ी मेहनत में जुट जाना चाहिए।

तय करे डेडलाइन-बेशक महत्वपूर्ण फैसले लेने में उनके फायदे और नुकसान पर गौर कर लिया जाना चाहिए लेकिन यह बिल्कुल सही नहीं कि आप उनके विश्लेषण में फैसले लेने का सही समय ही गँवा दें। इससे बचने के लिए अपने लिए डेडलाइन तय करें। एक बार फैसला लेने के बाद आपको उस पर अडिग रहना चाहिए। डेडलाइन के बाद आपको फैसले पर विचार नहीं करना चाहिए। डेडलाइन के बाद आपको सिर्फ कर्म करना चाहिए और दुनिया को दिखा देना चाहिए कि आपका फैसला सही था। कई बार ऐसा होता है कि समय निकल जाता है और हम तय ही नहीं कर पाते हैं कि क्या करना है, और क्या नहीं। इसलिए डेडलाइन का भी काफी महत्व होता है। डेडलाइन के बाद भी अपनी प्लानिंग को बदलने वाला व्यक्ति हमेशा उलझन में ही रह जाता है।

गलत होना भी सही-अक्सर वे लोग फैसले नहीं ले पाते जो हमेशा 'सही' होना जरूरी मानते हैं। सबसे पहले तो यह बात समझ ले कि आप इंसान हैं और इंसान गलतियों से ही सीखता है। इसलिए हर फैसले में अत्यधिक सावधानी वाली अप्रोच अपनाने से बचें। यह आपको सनकी बना सकती है। जब आप गलती की आशंका स्वीकार करना सीख जायेंगे तब आप उस गलती के कारण पैदा होने वाली स्थितियों से निपटने के लिए भी खुद को तैयार कर पायेंगे। इस तरह आप अपने दिमाग को खुलकर सोचने का अवसर देते हैं। दिल और दिमाग को लगातार गलती से बचने की हिदायत दे-देकर आप उसे कहीं दब्बू ही न बना बैठें। ज्यादा सोच-विचार या प्लानिंग करने से आपके जोखिम लेने की क्षमता घटती जाती है। इससे आप सिर्फ घिसे-पिटे ढर्रे पर ही चलते हैं।

समस्त विश्व मेरी पाठशाला

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा.....)

मेरी पाठशाला है समस्त विश्व, सर्वज्ञ प्रभु से ले समस्त द्रव्य।

जीव पुद्गल धर्म-अधर्म नभ/(आकाश), काल सहित (सप्त) तत्त्व (नव) पदार्थ।। (1)

सर्वज्ञ प्रभु के गुणों से (मैं) सीखा, मैं भी बन सकता हूँ सर्वज्ञ सम।
राग द्वेष मोह क्षय करना धर्म, इस हेतु ही करूँ धर्म साधन।। (2)

संसारी जीवों से (मुझे) मिलती शिक्षा, मैं नहीं हूँ तन-मनमय अनात्मा।
सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि न मेरा स्वरूप, इससे विरक्त होना मेरा कर्त्तव्य।। (3)

स्पर्श-रस-गंधमय होता पुद्गल, पुद्गल का स्वभाव होता है जड़।
मैं हूँ सच्चिदानंदमय अमूर्त, इससे शिक्षा ले न करूँ जड़ से मोह।। (4)

धर्म द्रव्य से मैं लेता हूँ शिक्षा, शुद्ध होकर बनूँ परोपयोगिता।
अधर्म द्रव्य से लेता हूँ शिक्षा, स्व-परस्थितिकरण में (बनूँ) उपयोगिता।। (5)

आकाश द्रव्य से लेता हूँ शिक्षा, अनंत गुण अवगाहन करने की शिक्षा।
काल द्रव्य से मैं लेता हूँ शिक्षा, स्वयं में परिणमन करने की शिक्षा।। (6)

मैं हूँ अनंत आयाम सहित द्रव्य, लोकालोक प्रकाशी अनंत चैतन्य।
अस्ति-नास्ति आदि अनंत आयाम, 'कनक' मैं हूँ सच्चिदानंदमय।। (7)

चितरी, दिनांक 27.07.2017, रात्रि 11.55

संदर्भ-

जैन धर्म में तो अरिहंत भी गुरु हैं तो सिद्ध भी गुरु हैं आचार्य, उपाध्याय, साधु भी गुरु हैं। इन्हें पंच गुरु या पंच परमेष्ठी कहते हैं। प्रत्येक देश में, काल में, समाज में जो क्रांति हुई है, हो रही है और होगी उसका मूल कारण गुरु ही हैं। गुरु एक क्रांतिकारी, सत्य-शोधक, नवीन-नवीन तथ्य के उन्नायक महापुरुष होते हैं। गुरु के बिना यह कार्य नहीं हो सकता है। अलेक्जेंडर (सिकन्दर) महान् बना गुरु अरस्तु के कारण। चन्द्रगुप्त मौर्य दिग्विजयी बना गुरु कौटिल्य चाणक्य के कारण। शिवाजी, छत्रपति बना गुरु समर्थ रामदास के कारण। मोहनदास, महात्मा गाँधी बने रायचन्द्र जैन के कारण। इस प्रकार ऐतिहासिक काल के पहले ही राजा, महाराजा, सम्राट भी गुरुओं के चरण के सान्निध्य में जाकर ज्ञान-विज्ञान, आत्मविद्या, राजनीति, अर्थशास्त्र, युद्धविद्या, कला-कौशल, गुरुओं से ग्रहण करते आ रहे हैं।

'गुरु बिना सर्वे भवन्ति पशुभिः सनिभाः' गुरु के बिना मनुष्य पशु के सदृश हैं। पशुओं के कोई गुरु नहीं होते हैं इसलिये पशुओं की उन्नति नहीं होती है। इस ही प्रकार मनुष्य-समाज में गुरु नहीं होते तो मनुष्य समाज भी पशुवत् हो जाता।

'गुरु बिना कौन दिखावे वाट, अवघड़ डोंगर घाट'

गुरु के बिना यथार्थ मार्ग प्रदर्शन कौन करेगा? यह संसार कंटकाकीर्ण, अत्यन्त दुरुह, भयंकर जंगलघाटी के समान है। उसको पार करने के लिए गुरु रूपी मार्गदर्शक की नितान्त आवश्यकता है।

आत्मा का गुरु आत्मा

स्वस्मिन् सदभिलाषित्वादभष्टिज्ञापकत्वतः।
स्वयं हितप्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मनः।। (34)

Because of its internal longing for the attainment of the highest ideal, because of its understanding of that ideal, and because of its engaging itself in the realisation of its ideal, because of these the soul is its own preceptor!

पुनः शिष्य प्रश्न करता है कि हे गुरुदेव! मोक्ष सुख अनुभव विषय में गुरु कौन है? गुरु कहते है-जो शिष्य निश्चय से सतत कल्याण चाहते और उसके जिज्ञासा के अनुसार उपाय बताते हैं तथा जो अपवर्तमान है उन्हें पवर्तन करते है उन्हें निश्चय से गुरु कहते हैं। इसी प्रकार होने पर आत्मा का गुरु आत्मा ही है। क्योंकि स्वयं आत्मा स्व-मोक्षसुख की अभिलाषा करता है अर्थात् मोक्ष सुख मुझे मिले ऐसे सत् प्रशंसनीय आकांक्षा को करता है। स्व-आत्मा स्वयं के लिए मोक्ष सुख की जिज्ञासा करता है, जिज्ञासित मोक्ष सुख के उपाय को आत्म-विषय में ज्ञापन देता है अर्थात् मोक्षसुख का उपाय सेवन करो! ऐसे बोध देता है तथा मोक्ष सुखोपाय में स्वयं को नियुक्त करता है। इसी प्रकार सुदुर्लभ मोक्षसुख उपाय में यह दुरात्म अभी तक प्रवृत्त नहीं हुआ है। ऐसे मोक्ष सुख में अपवर्तमान आत्मा को स्वयं आत्मा प्रवृत्तमान करता है इसलिए निश्चय से आत्मा का गुरु आत्मा ही है।

समीक्षा-यहाँ पर आचार्यश्री ने निश्चयनय से गुरु-शिष्य के बारे में संक्षिप्त सारगर्भित प्रकाश डाला है। व्यवहारनय से आचार्य-उपाध्याय-साधु-गुरु होने पर भी

निश्चयनय से आत्मकल्याण में प्रवर्तमान स्वयं ही स्वयं का गुरु है। क्योंकि भले गुरु हितमार्ग का उपदेश करता है, परन्तु प्रवृत्त तो होता है स्वयं जीव। स्वयं आचार्यश्री आगे इस विषय पर विशेष प्रकाश डालेंगे इसलिए यहाँ विशेष वर्णन नहीं कर रहा हूँ तथापि आचार्य अकलंक देव कृत स्वरूप सम्बोधन, से कुछ विषय उदधृत कर रहा हूँ। यथा-

"इत्याद्यनेक, धर्मत्वं, बन्धमौक्षौ तयोः फलम्।
आत्मा स्वीकुरूते तत्तत्कारणेः स्वयमेव तु।।" (9)

कर्मबंध भवभ्रमण मिथ्यात्व, अज्ञान, असंयम से आस्रव बंध तत्त्व के रूप में होता है और सम्यक्त्व, ज्ञान, चारित्र, द्वारा संवर निर्जरा की प्रक्रिया से मोक्ष होता है। आत्मा स्वयं विभिन्न कारणों से बंध या मोक्ष की प्रक्रिया किया करता है।

तथा चोक्तम्-

स्वयं कर्म करोत्यात्मा, स्वयं तत्फलमश्नुते।
स्वयं भ्रमति संसारे, स्वयं तस्माद्विमुच्यते।।

यह आत्मा स्वयं अपने राग-द्वेष-मोह आदि भावों के द्वारा ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय कर्मों का बंध किया करता है और जब कर्म का उदय होता है तो आत्मा स्वयं करके अच्छे या बुरे फल को भोगा करता है, चारों गतियों में जन्म-मरण भी यह आत्मा अपने कर्मों के अनुसार किया करता है तथा निर्बन्ध गुरु-द्वारा जिनवाणी सुनकर जब यह शरीर आत्मा के भेदभाव समझकर आत्म का श्रद्धालु बनता है, संसार शरीर और विषय-भोगों से विरक्त होता हैं-यह सम्यग्दृष्टि बनकर स्वयं कर्मों से मुक्त होने के मार्ग पर चल पड़ता है। अपनी आत्मचर्या सम्यक्चारित्र को उन्नत करता हुआ संवर निर्जरा की पद्धति से शुक्लध्यान द्वारा समस्त कर्मों से छूटकर, जन्म-मरण का सदा के लिए विनाश करके मुक्त भी अपने आप होता है। यानी-यह आत्मा स्वयं कर्त्ता, भोक्ता, भ्रमणकर्त्ता और मुक्त होता है।

कर्ता यः कर्मणा भोक्ता, तत्फलानां स एव तु।
बहिरन्तरूपायाभ्यां, तेषां मुक्तत्वमेवहि।। (20)

जीव को संसार में घुमाने वाला, उसको सुख-दुःख देने वाला तथा संसार

और कर्मों से जीव को मुक्त करने वाला कोई व्यक्ति नहीं है, यह समस्त कार्य आत्मा स्वयं करता है। यह आत्मा स्वयं अपने मिथ्यात्व, राग-द्वेष-मोह, ममतादि भावों से शरीर, परिवार, धन, मकान आदि को अपना करके कर्मबंध किया करता है तथा कर्मों के उदय आने पर उन कर्मों का फल आत्मा को स्वयं भोगना पड़ता है। आत्मा तथा कर्म, नोकर्म (शरीर) का भेद-विज्ञान हो जाने पर सम्यक्त्व, सत्-ज्ञान स्वयं होता है तथा अंतरंग-बहिरंग तपश्चर्या द्वारा कर्मों से मुक्त भी आत्मा स्वयं होता है।

उसके संसार-भ्रमणा तथा संसार छूटने में अन्य कोई सहायक नहीं होता। यह सभी सांसारिक पारमार्थिक आध्यात्मिक कार्य जीव अकेला ही करता है।

यहाँ शिष्य प्रश्न करता है कि यदि आत्मा का गुरु आत्मा ही है तब परंपरा गुरु से शिष्य कैसे शिक्षा प्राप्त करता है? मुमुक्ष के द्वारा धर्माचार्य की सेवा आदि भी नहीं होगी। इसका समाधान आचार्यश्री निम्न प्रकार करते हैं-

हे भद्र! तत्त्वज्ञान जो प्राप्त करने में अयोग्य जो अभव्य हैं वह हजारों धर्माचार्यों के उपदेश से भी प्राप्त नहीं कर पाते।

जिसमें जो स्वभाव है वह स्वभाव की ही अभिव्यक्ति बाह्य क्रिया-निमित्त से होती है परन्तु जिसमें जो स्वभाव नहीं है उसकी अभिव्यक्ति सैकड़ों क्रियाओं से भी नहीं हो सकती है। जैसे कि तोता को पढ़ाने से तोता पढ़ सकता है परन्तु बगुला नहीं पढ़ सकता है। उसी प्रकार जो अंतरंग में-विज्ञप्ति की शक्ति रखता है वहीं अभिव्यक्ति रूप से ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। परन्तु जिसमें यह शक्ति नहीं है वह हजारों से भी अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है।

प्रशमयोगी उस वज्रपात से भी चलायमान नहीं होते हैं जिसके भय से पथिक पथ-भ्रष्ट हो जाते हैं और विश्व-ध्वनित हो जाता है। क्योंकि वह योगी बोध रूपी प्रदीप से मोहरूपी घना अंधकार को नष्ट करके सम्यग्दृष्टि को प्राप्त कर चुके हैं। ऐसे भयंकर वज्रपात से भी जो चलायमान नहीं होते हैं वे अन्य छोटे-छोटे उपद्रवों से कैसे चलायमान होंगे? कहने का तात्पर्य यह है कि वज्ररूपी बाह्य निमित्त से भी क्षायिक सम्यग्दृष्टि महायोगी चलायमान नहीं होते हैं।

परन्तु बाह्य अपेक्षा की आवश्यकता होती है, ज्ञान-प्राप्ति के लिए गुरु आदि बाह्य निमित्त मात्र है और शिष्य की योग्यता अंतरंग मुख्य कारण है क्योंकि वही

साक्षात् साधक है। इसके लिए उदाहरण है गति परिणत जीव, पुद्गल के लिए जिस प्रकार धर्मास्तिकाय निमित्त होता हैं।

समीक्षा–यह वर्णन आध्यात्मिक दृष्टि से होने के कारण गुरु रूपी निमित्त को ज्ञान प्राप्ति में उदासीन कारण बताया गया है। परन्तु गति के लिए धर्मास्तिकाय जिस प्रकार केवल उदासीन कारण है उसी प्रकार ज्ञान प्राप्ति में गुरु उदासीन कारण नहीं है। यदि ऐसा होता तो तीर्थंकर क्यों उपदेश करते। गणधर भी उपदेश क्यों सुनते? आचार्य भी ग्रंथ क्यों लिखते? बिना देशना-लब्धि सम्यक्दर्शन क्यों नहीं होता? यह सब होते हुए भी अयोग्य शिष्य को अपनी कमी को बताने के लिए, गुरु के अकर्तापन को जताने के लिए यह सब कहा गया है। नहीं तो गुरु शिष्य, गुरुकुल, ग्रंथ आदि की आवश्यकता क्यों होती।

क्वालिटी टीचिंग से संतुलित व्यक्तित्व का होता है विकास...

अच्छे शिक्षक से पढ़ने वाले बच्चे बड़े होकर कमाते भी हैं ज्यादा

शिक्षकों की गुणवत्ता और छात्रों पर उसका असर हमेशा से अकादमिक बहस का विषय रहा है। लेकिन अंतर्राष्ट्रीय स्तर के एक सर्वे में बताया गया है कि अच्छे शिक्षकों से पढ़ाई करने वाले बच्चे न केवल अकादमिक रूप से बेहतर परफॉर्म करते हैं, बल्कि बड़े होकर दूसरे सहपाठियों की तुलना में कमाई भी ज्यादा करते हैं। इस मामले में सबसे ज्यादा असर प्रारंभिक और माध्यमिक शिक्षा के दौरान छात्रों को अच्छे शिक्षकों का साथ मिलने का होता है।

25 लाख लोगों पर हार्वर्ड और कोलंबिया यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर ने किया अध्ययन।

84 प्रतिशत लोग मानते हैं अच्छे शिक्षक बच्चों के लिए बेहतर।

अध्ययन–आईवी लीग और वर्ष 2017 में आस्ट्रेलिया-यूके के एक अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन में इस बात का खुलासा हुआ है। हार्वर्ड व कोलंबिया यूनिवर्सिटी के

अर्थशास्त्र के प्रोफेसर व उनकी टीम ने यह अध्ययन दो दशक से ज्यादा समय में 25 लाख लोगों पर किया। न्यूयॉर्क टाइम्स ने भी अपनी रिपोर्ट में बताया है कि शिक्षा और कमाई के बीच परस्पर संबंधों पर यह अब तक का सबसे बड़ा अध्ययन है। खासकर कम उम्र के बच्चों पर इस बात का असर ज्यादा होता है, जो उनके भविष्य को बेहतर बनाने में कारगर साबित होता है। इससे साफ हो गया है कि शिक्षकों की गुणवत्ता और समझ का गहन प्रभाव छात्रों के करियर पर भी पड़ता है।

अनुकूल परिवेश का मनोवैज्ञानिक प्रभाव–मनोविज्ञानी डॉ. सीमा शर्मा का कहना है कि मानव व्यक्तित्व एक स्थिर अवस्था न होकर हमेशा गतिशील होता है। इसका सीधा असर उसके मन-मस्तिष्क पर पड़ता है। अगर आप अच्छे लोगों के साथ होते हैं तो उसका असर भी अच्छा होता है। यही बात अच्छे शिक्षकों के संपर्क में होने पर बच्चें में होता है। यानी बच्चों पर उसके परिवेश का प्रभाव पड़ता है। उसी के विचार, व्यवहार और गतिविधियों में झलकता है।

बच्चों के बेहतर भविष्य का निर्धारण करने में सबसे ज्यादा प्रभावी माध्यम

छात्रों पर होता है गहरा असर–वर्ष 2017 में आस्ट्रेलिया और यूके के एक अन्य अध्ययन में यह बताया गया है कि एक बेहतर शिक्षक और उसका व्यापक अनुभव न केवल आदर्श समाज के निर्माण में, बल्कि युवाओं के बेहतर भविष्य का निर्धारण करने में सबसे ज्यादा प्रभावी होता है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि माध्यमिक शिक्षा स्तर तक पढ़ाई करने वाले छात्रों पर शिक्षकों की समझ का गहरा और दूरगामी असर पड़ता है, जो बच्चों के लिए जीवन के हर मोड़ पर मददगार साबित होता है।

शिक्षण का काम आसान नहीं–केक्यूईडी स्पेस की ओर से 2015 में जारी एक अध्ययन रिपोर्ट में भी बताया गया था कि शिक्षण का काम बहुत कठिन होता है। क्योंकि पैसे के बल पर कोई अच्छा शिक्षक नहीं बन सकता। पर अच्छा शिक्षक हर दृष्टि से युवाओं का संबल जरूर बना सकता है। यह काम शिक्षक बौद्धिक क्षमता के बल पर करते है। शिक्षण संस्थानों में कार्यरत ऐसे लोग निजी व सार्वजनिक जीवन में सकारात्मक पहलुओं पर ज्यादा जोर देते है और प्रयोगवादी होते है। वो खुद अपने जीवन में नई-नई बातों की जानकारी हासिल करने के लिए सक्रिय रहते हैं, जिसका लाभ बच्चों को मिलता है।

बुरे शिक्षक छात्रों पर नहीं छोड़ते अपना असर–सर्वे में शामिल अधिकतर लोगों ने माना कि बच्चों के बेहतर भविष्य के लिहाज से अच्छे शिक्षकों का साथ ज्यादा असरदार होता है। औसत दर्जे के शिक्षक भी अपना प्रभाव छोड़ने में कामयाब होते है, लेकिन नॉलेज के स्तर पर कमजोर शिक्षकों का असर छात्रों पर नहीं पड़ता है। यही वजह है कि अच्छे शिक्षकों से पढ़ने वाले छात्र अपने सहपाठी की तुलना में जीवनभर बेहतर परफॉर्म करने में सफल होते हैं।

शिक्षा और कमाई में सीधा संबंध–विस्कॉनसिन-मैडिसन यूनिवर्सिटी वैल्यू एडेड रिसर्च सेंटर के निदेशक रॉबर्ट एच. मेयरे का कहना है कि अच्छे शिक्षकों की देखरेख में पढ़ने वाले बच्चे अकादमिक करियर में अच्छा स्कोर करने में सफल होते हैं। वे भविष्य में बेहतर संस्थानों और उच्च शिक्षा हासिल करने के लिए प्रेरित होते हैं। बाद में इसका प्रत्यक्ष प्रभाव उनकी औसत आमदनी पर भी पड़ता है। यही वजह है कि जिस राजनीतिक व सामाजिक व्यवस्था में शिक्षा पर जोर होता है, वहाँ के लोग हर मामले में आगे नजर आते हैं।

बनी रहेगी प्रासंगिकता–2014 में मैनहट्टन में माध्यमिक स्कूल के छात्रों व शिक्षकों के बीच कराये गये एक अध्ययन में भी ये बातें सामने आई थी कि एक महान् शिक्षक बच्चे के जीवन को बदलने वाले साबित होते हैं। यही कारण है कि हर दौर में आदर्श समाज और अच्छे नागरिक के निर्माण में उनकी प्रासंगिकता बनी रहती है। इसके विपरीत बुरे शिक्षक किसी भी दृष्टि से छात्रों के व्यक्तित्व निर्माण में सहायक नहीं होते।

परम समता हेतु मेरी साधना

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! (तू) परम सामायिक साधोऽऽ
जिस सामायिक में समाहितऽऽ समस्त आत्मा के गुण/(धर्म)ऽऽ

इसमें समाहित आत्मविश्वासऽऽ ज्ञान व सदाचरणऽऽ
साहस-धैर्य-क्षमा-संयमऽऽ तप-त्याग व आकिंचन्यऽऽ

स्व-आत्मस्वरूप में रमणऽऽ...जिया...(1)...

इस हेतु तुझे करना सदाऽऽ राग द्वेष मोह विसर्जनऽऽ
ईर्ष्या तृष्ण भय काम क्रोध मदऽऽ संकल्प-विकल्प व संक्लेशऽऽ
ख्याति पूजा लाभ त्यागऽऽ...जिया...(2)...

शत्रु-मित्र व अपना-परायाऽऽ भेद-भाव व ऊँच-नीचऽऽ
पर दुर्गुण व कमियों से क्षोभऽऽ विधर्मी-अधर्मी व कुधर्मीऽऽ
इन सबसे हो साम्य वृत्तिऽऽ...जिया...(3)...

तू ही बनो तेरा कर्त्ता व धर्त्ताऽऽ स्व का ही तू बनो विधाता/(निर्माता)ऽऽ
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य भाओऽऽ भाओ विश्व कल्याण भावनाऽऽ
किन्तु भाओ समता शांतिऽऽ...जिया...(4)...

इससे ही होती है आत्मविशुद्धिऽऽ जिससे होती आत्म प्रगति/(उन्नति)ऽऽ
इससे ही मिलेगी परम मुक्तिऽऽ मिलेगी अनंत आत्म शांतिऽऽ
'कनक' का लक्ष्य आत्मोपलब्धिऽऽ...जिया...(5)...

समता शांति बिन सर्व ही व्यर्थऽऽ बाह्य धार्मिक क्रिया-काण्डऽऽ
तप-त्याग व धर्म प्रभावनादिऽऽ ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धिऽऽ
न मिले तन-मन-आत्म शांतिऽऽ...जिया...(6)...

वाद-विवाद निन्दा-अपमानऽऽ त्याग करो हे! सभी द्वंद्वऽऽ
पर चिन्ता व वर्चस्व दबाव भयऽऽ नकारात्मक समस्त विभावऽऽ
बनो स्वयं तू ऊर्जावान्/(शक्तिमान)ऽऽ आत्म वैभव में करो तू रमणऽऽ...जिया...(7)...

(साध्वी वैभवश्री 'आत्मा' (स्थानकवासी) के भाव-व्यवहार व साहित्य से भी प्रभावित यह कविता।)

चितरी, दिनांक 29.07.2017, रात्रि 10.20 व 11.43

संदर्भ-

व्याकरण के नियमानुसार प्रत्येक शब्द का भाव उसी में अंतर्निहित रहता है। अतएव सामायिक शब्द का गंभीर एवं उदार भाव भी इसी शब्द में छिपा है। आचार्य

हरिभद्रसूरि जी, मलयगिरि जी एवं विराट गुरुजी ने विभिन्न व्युत्पत्तियों के द्वारा सामायिक शब्द का अर्थ किया है। यथा-

(1) समो-रागद्वेषयोरपान्तरालवर्ती मध्यस्थः इण् गतौ, आयनं प्रयोगमनमित्यर्थः, समस्य अयः समायः-समीभूतस्य सतो मोक्षाध्वनि प्रवृत्तिः, समाय एवं सामायिकम्।

राग-द्वेष में मध्यस्थ रहना 'सम' है। **सम अर्थात् मध्यस्थ भाव युक्त साधक की मुक्त चर्या ही सामायिक है।**

(2) समानि-ज्ञान दर्शन चरित्राणि, तेषु अयनं गमनं समायः, स एव सामायिकम्-मोक्षमार्ग रूप ज्ञान-दर्शन-चारित्र 'सम' है अर्थात् उत्कृष्ट है उनमें अयन यानि गति करना सामायिक है।

(3) समः सावद्ययोगपरिहार निरवद्योगानुष्ठान रूप जीव-परिणामः तस्य आयः लाभः समायः, स एव सामायिकम्-सावद्य योगों का परिहार (त्याग) एवं निरवद्य योग के अनुष्ठान रूप जीव का जो उत्कृष्ट परिणाम है, उसकी प्राप्ति समाय है, वही सामायिक है।

(4) सम्यक् शब्दार्थः समशब्दः सम्यगयनं वर्तनं समयः, स एव सामायिकम्।

सम्यक् शब्द का अर्थ निष्पक्ष होता है। जीव के परिणामों की पक्ष-विपक्ष, रति-अरति से रहित जो निष्पक्ष गति है, **निष्पक्ष वर्तन है, वही 'समय' है और ऐसे समय में जीना सामायिक है।**

(5) 'समये कर्त्तव्यं सामायिकम्।' समय पर किया जाने वाला कर्त्तव्य, कर्त्ता भाव रहित कर्म सामायिक है।

(6) सामायिक शब्द का अर्थ है-साम+आय+इक् अर्थात् जिससे साम की प्राप्ति हो। साम अर्थात् अमृत तत्त्व की प्राप्ति। जिस प्रक्रिया से अमृत उपलब्ध हो उसे सामायिक कहते हैं।

(7) सामायिक अर्थात् सम+आय+इक्=जिससे समता की, समत्व की प्राप्ति हो वही सामायिक है। समभाव में जीना सामायिक है।

(8) आया सामाइए अर्थात् आत्मा ही सामायिक है। समय में प्रवेश सामायिक है।

(9) सामायिक शब्द का अर्थ है-साम करण अर्थात् शांत करना। वैर-भावों

की उपशांति सामायिक है।

(10) आत्मा का सहज स्वभाव ही सामायिक है।

(11) चार शिक्षाव्रतों में प्रथम व्रत (श्रावक के बारह व्रतों में नवाँ) सामायिक व्रत है। पाँच चरित्रों में प्रथम चरित्र सामायिक चरित्र है एवं आवश्यक सूत्र के वर्तमान में प्रचलित छः आवश्यकों में प्रथम सामायिक आवश्यक है।

समता सर्वभूतेषु, संयमः शुभ भावना।
आर्त्त रौद्र परित्यागस्तद्धि सामायिकं व्रतम्।।

सर्व भूत के प्रति समता, संयम एवं शुभ भावना, आर्त्तध्यान-रौद्रध्यान का समझपूर्वक त्याग सामायिक व्रत कहा जाता है।

सामायिक का मुख्य लक्षण 'समता' है। समता का अर्थ है-मन का ममता रहित होना, ममत्व रहित होना। 'मैं' और 'मेरा'-इन दो भावों से रहित होना, इसके साथ-साथ 'मैं' और 'तुम' के मध्य अस्तित्व भाव में रहना, तनाव रहित होना, पक्ष-विपक्ष से परे निष्पक्ष होना, प्राणी मात्र से एकात्म भाव होना, ऊँच-नीच, अपना-पराया, इस तरह के भेदों और भावों से रहित होना 'समता भाव' है। कर्मों के उदय में आने पर प्राप्त होने वाले निमित्तों एवं परिस्थितियों के प्रति शत्रु-मित्र, अनुकूल-प्रतिकूल, अच्छा-बुरा आदि पक्षपातपूर्ण विचारों से रहित होना 'समता भाव' है।

जिस प्रकार पुष्प का सार गंध, दुग्ध का सार घृत एवं तिल का सार तेल है, इसी प्रकार जिन प्रवचन का सार 'समता' है।

उत्तराध्ययन सूत्र (अध्ययन 19) कहता है कि-

लाभालाभे सुहे दुक्खे, जीविए मरणे तहा।
समो निंदा पसंसासु, तहा माणावमाणओ।।

अर्थ-लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निंदा-प्रशंसा, मान-अपमान में 'सम' रहना समता भाव है।

समता भाव के अभाव में की गई सारी साधना प्राण शून्य देह का भार ढोने के समान है। मात्र कपड़े बदलकर, मुँहपत्ती लगाकर, आसन बिछाकर घंटे भर बैठ जाना, कुछ माला-जाप, कुछ पूजा-पाठ कर लेना, सामायिक नहीं है। जब तक दृष्टिकोण में (नजरिये में) सम्यक् वर्तना नहीं तब तक सामायिक संभव नहीं है।

विशेषावश्यक भाष्य (गाथा 905) में कहा गया है कि 'सामाइयंति समभाव लक्खणं।'

अर्थात् जहाँ भी समभाव लक्षण है वहाँ सामायिक है।

अनुयोगद्वार सूत्र में तथा आचार्य भद्रबाहु कृत आवश्यक निर्युक्ति में 'समभाव' रूप सामायिक की परिभाषा इस प्रकार दी गई है-

जो समो सव्वभूएसु, तसेसु थावरेसु य।

तस्य सामाइयं होइ, इइ केवलि भासियं।।

जस्स सामणिओ आया, संजमे णियमे तवे।

तस्स सामाइयं होइ, इइ केवलिभासियं।। (आव.नि. 798-799)

अर्थ-जो त्रस-स्थावर सर्वभूत के प्रति समभाव रखता है, उसके सामायिक होती है, ऐसा केवली भगवन् ने कहा है।

जिसकी आत्मा संयम-नियम-तप में समान रूप से (संलग्न) होती है, उसके सामायिक होती है, ऐसा केवली भाषित है।

समता की पूर्णता ही मोक्ष है।

सामायिक का महत्व

आज तक जितने भी जीव मोक्ष गये हैं, वर्तमान में जा रहे हैं एवं भविष्य में मुक्त होंगे, यह सब सामायिक का माहात्म्य ही समझना चाहिए।

उक्तं च, जे के वि गया मोक्खं, जे वि य गच्छंति।

जे गमिस्संति ते सव्वे सामाइय माहप्पेणं मुणेयव्वं।।

किसी पारलौकिक या इहलौकिक फल की लालसा के बिना केवल आत्मशुद्धि के लिए ही की जाने वाली सामायिक का महत्व अवर्णनीय है।

सामायिक के महत्व को बतलाने वाले हमारे परंपर आचार्य भगवंतों के कुछ सूत्र हम यहाँ उद्धृत करते हैं-

सामाइयाइया वा वयजीवाणिकाय भावणा पढमं।

एसो धम्मो वाओ जिणेहिं सव्वेहिं उवइट्ठो।। (आवश्यक निर्युक्ति 271)

अर्थ-प्रत्येक तीर्थंकर कैवल्य प्राप्ति के बाद सर्वप्रथम सामायिक व्रत का ही

धर्मोपदेश देते हैं।

सामायिक को चौदह पूर्वों का सारभूत (पिंड) बतलाते हुए आचार्य जिनभद्र गणि क्षमासमण कहते हैं-

'सामाइयं संखेवो चोद्दसपुव्वत्थ पिंडो त्ति।' (विशेषावश्यक भाष्य गा. 2796)

सामायिक को सारे गुणों का आधार बताते हुए वे कहते हैं कि-

सामायिकं गुणानामाधारः, खमिव सर्वभावानाम्।
न हि सामायिक हीनाश्चरणादि गुणान्विता येन।।

जैसे आकाश संपूर्ण चराचर वस्तुओं का आधार है वैसे ही सामायिक समस्त चरण करणादि गुणों का आधार है। सामायिक के बिना ये सभी गुण निष्फल है। समस्त सूत्रों (शास्त्रपाठों) में उल्लेख आता है कि जो भी भगवान् अथवा स्थविर भगवंतों के समीप प्रव्रज्या लेता है, वह दीक्षा के बाद सबसे पहले सामायिक की शिक्षा लेता है। 'सामाइय माइयाइं चौद्दस पुव्वाइं...' ऐसा सूत्र पाठ मिलता है कि सामायिक से प्रारंभ करके चौदह पूर्व का ज्ञान साधक सीखते रहे हैं।

आचार्य भद्रबाहु लिखते हैं कि-

सामाइयम्मि उ कए, समणो इव सावओ हवइ।
एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा।।
जीवो पमायबहुलो, बहुसो उ वि य बहुविहेसु अत्थेसु।
एएण कारणेणं, बहुसो सामाइयं कुज्जा।। (आवश्यक निर्युक्ति)

अर्थ-सामायिक करने से सावग समण के समान हो जाता है अतः सावग बार-बार सामायिक करें।

जीव प्रमाद बहुल है। वह विभिन्न प्रकार से बार-बार प्रमाद में चला जाता है अतः वह बार-बार सामायिक करें।

उपाध्याय यशोविजय जी लिखते हैं कि-

सकल द्वादशांगोपनिषद्भूत सामायिक सूत्रवत्। (तत्त्वार्थ टीका-प्रथम अध्याय)

सकल द्वादशांग एवं उपनिषद् सामायिक सूत्र रूप ही है।

तिव्वतवं तवमाणो, जं न वि निट्ठवइ जम्मकोडिहिं।
तं समभाविअ चित्तो, खवेई कम्म खणद्धेणं।।

अर्थात् करोड़ों जन्म तक निरंतर तप करता हुआ व्यक्ति जिन कर्मों को नष्ट नहीं कर पाता, उन्हें सम-भावीत् चित्त क्षण के आधे हिस्से में ही नष्ट कर देता है।

पूज्य आत्मज्ञानी गुरुदेव विराट गुरुजी कहते हैं कि-

दैनिक सामायिक करे, शुद्धभाव से जो।
प्रतिवेशित तपसी साधु से, बढ़कर सावक वो।।

अर्थात् जो सावग शुद्ध भावों से प्रतिदिन सामायिक करता है, वह दिखावटी/कर्मकांडी तपस्या करने वाले साधु से कई गुना बढ़कर धर्म का आराधक है। (समय वज्जिका)

व्यक्तिगत विजय आपके व्यक्तिगत सुरक्षा अकाउंट में डिपॉजिट करती है।

जब आप अपने आध्यात्मिक आयाम का नवीनीकरण करते हैं, तो आप अपनी व्यक्तिगत लीडरशिप (दूसरी आदत) को प्रबल बनाते हैं। आप अपनी स्मृति के बजाय अपनी कल्पना तथा विवेक के अनुसार जीने की योग्यता को बढ़ा लेते हैं। आप अपने गहनतम पैरेडाइम्स और जीवन मूल्यों को गहराई से समझने लगते हैं, अपने भीतर सही सिद्धांतों का केंद्र बना लेते हैं, जीवन में अपने अनूठे उद्देश्य को परिभाषित कर लेते हैं, सही सिद्धांतों के सामंजस्य में जीने के लिए अपनी स्क्रिप्ट दुबारा लिखते हैं और शक्ति के अपने व्यक्तिगत स्रोतों का विकास करते हैं। आध्यात्मिक नवीनीकरण में आप समृद्ध व्यक्तिगत जीवन का निर्माण करते हैं, जो आपके व्यक्तिगत सुरक्षा अकाउंट में जबर्दस्त डिपॉजिट करता है।

जब आप अपने मानसिक आयाम का नवीनीकरण करते हैं, तो आप अपने व्यक्तिगत मैनेजमेंट (तीसरी आदत) को प्रबल बनाते हैं। जब आप योजना बनाते हैं, तो आप अपने मस्तिष्क को विवश करते हैं कि वह उच्च प्रभाव वाले क्वाडैन्ट-II की गतिविधियों तथा प्राथमिकता वाले लक्ष्यों और गतिविधियों को पहचाने ताकि आप अपने समय व ऊर्जा का अधिकतम प्रयोग कर सके और अपनी प्राथमिकताओं के इर्द-गिर्द अपनी गतिविधियों को व्यवस्थित तथा क्रियान्वित कर सकें। जैसे-जैसे आप इस निरंतर चलने वाली शिक्षा में आगे जाते हैं, आप अपने ज्ञान के आधार और अपने विकल्पों को बढ़ा लेते हैं। आपकी आर्थिक सुरक्षा आपकी नौकरी में निहित नहीं होती; यह आपकी उत्पादन क्षमता-सोचने, सीखने, सृजन करने, अनुकूलन करने-में निहित होती है। यह सच्ची आर्थिक आत्मनिर्भरता है। इसका अर्थ धनी होना

नहीं होता; बल्कि धन कमाने की शक्ति रखना होता है। यह अंतर्निहित है।

दैनिक व्यक्तिगत विजय-शारीरिक, आध्यात्मिक और मानसिक आयामों के नवीनीकरण में हर दिन कम से कम एक घंटे लगाना-सात आदतों के विकास की कुँजी है और यह पूरी तरह से आपके प्रभाव के वृत्त में है। यह क्वाड्रैन्ट-II पर केंद्रित समय है, जो इन आदतों को आपके जीवन में पूरी तरह उतारने और सिद्धांत-केंद्रित बनने के लिए आवश्यक है।

यह दैनिक सार्वजनिक विजय की नींव भी है। यह सामाजिक/भावनात्मक आयाम में आरी की धार तेज करने के लिए आवश्यक आंतरिक सुरक्षा का स्रोत है। इससे आपको व्यक्तिगत शक्ति मिलती है कि आप परस्पर-निर्भर स्थितियों में अपने प्रभाव के वृत्त पर ध्यान केंद्रित कर सके, प्रचुर मानसिकता के पैरेडाइम से दूसरों की ओर देख सके, उनकी मतभिन्नताओं को सचमुच महत्व दे सके और उनकी सफलताओं पर खुश हो सकें। यह आपको वास्तविक समझ और सिनर्जिस्टिक जीत/जीत समाधानों के लिए काम करने और परस्पर-निर्भर वास्तविकता में चौथी, पाँचवीं तथा छठी आदतों के अभ्यास के लिए नींव प्रदान करता है।

ऊर्ध्वमुखी चक्र

नवीनीकरण सिद्धांत भी है और प्रक्रिया भी। यह हमें विकास तथा परिवर्तन के ऊर्ध्वमुखी चक्र में ऊपर उठने और लगातार सुधार करने की शक्ति प्रदान करता है।

इस चक्र में सार्थक और निरंतर प्रगति के लिए हमें नवीनीकरण के एक अन्य पहलू पर विचार करने की जरूरत है-हमारा विवेक या अंतरात्मा। यह उस अनूठी मानवीय प्रतिभा से संबंधित है, जो इस ऊर्ध्वमुखी गति को संचालित करती है। मैडम डे स्टेल के शब्दों में, ''अंतरात्मा की आवाज इतनी धीमी है कि इसे दबाना आसान है-परंतु यह इतनी स्पष्ट भी होती है कि इसे पहचानने में गलती करना असंभव है।''

विवेक वह प्रतिभा है, जो यह भाँप लेती है कि हम सही सिद्धांतों के अनुरूप चल रहे हैं या नहीं और जब यह सही स्थिति में होती है, तो यह हमें उनकी तरफ ऊपर उठाती है।

जिस तरह शारीरिक और माँसपेशीय शिक्षा उत्कृष्ट खिलाड़ी के लिए अनिवार्य

है, जिस तरह मस्तिष्क की शिक्षा कुशाग्र विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है, उसी तरह विवेक की शिक्षा सच्चे प्रोएक्टिव और अति प्रभावकारी व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। बहरहाल, विवेक के शिक्षण और प्रशिक्षण में बहुत अधिक एकाग्रता, बहुत अधिक संतुलित अनुशासन तथा बहुत अधिक सतत ईमानदार जीवन की आवश्यकता होती है। इसमें नियमित रूप से प्रेरक साहित्य पढ़ना, उत्तम विचार सोचना और सबसे बढ़कर, उस धीमी आवाज के सामंजस्य में जीना शामिल है।

जिस तरह व्यायाम का अभाव और फास्ट फूड किसी खिलाड़ी की शारीरिक क्षमता को बर्बाद कर सकता है, उसी तरह घटिया, अश्लील या पोर्नोग्राफिक चीजें एक आंतरिक अंधकार उत्पन्न कर सकती हैं, जो हमारी उच्चतर अनुभूतियों को सुन्न कर देता है। ''क्या सही है और क्या गलत है?'' की प्राकृतिक या दैवी विवेक की आवाज के स्थान पर यह सामाजिक विवेक आ जाता है, ''क्या मैं पकड़ा जाऊँगा?''

डैग हैमर्सकोल्ड के शब्दों में, पशु बने बिना आप अपने भीतर के पशु के साथ नहीं खेल सकते, सच के अधिकार को जब्त किये बिना झूठ के साथ नहीं खेल सकते और अपने मस्तिष्क की संवेदनशीलता को खोये बिना क्रूरता के साथ नहीं खेल सकते। जो व्यक्ति अपने बगीचे को साफ-सुथरा रखना चाहता है, वह खरपतवार के लिए किसी क्यारी को सुरक्षित नहीं रखता।

एक बार जब हम आत्म-जागरूक हो जाते हैं, तो हमें उन उद्देश्यों और सिद्धांतों को चुनना होगा, जिनके अनुरूप हम जियेंगे। वरना निर्वात (vacuum) भर जायेगा और हम अपनी आत्म-जागरूकता खोकर रेंगने वाले जानवरों की तरह हो जायेंगे, जो मूलतः सिर्फ जिंदा रहने और संतति उत्पन्न करने के लिए जीते हैं। जो लोग उस स्तर पर होते हैं, वे जी नहीं रहे हैं, उन्हें ''जिया जा रहा'' है। वे सिर्फ प्रतिक्रिया कर रहे हैं, क्योंकि वे उन अनूठी प्रतिभाओं के बारे में नहीं जानते, जो उनके भीतर निष्क्रिय और अविकसित पड़ी हैं।

और उन्हें विकसित करने का कोई शॉर्टकट नहीं है। फसल का नियम हमेशा काम करता है; हम हमेशा वही काटेंगे जो हमने बोया है-न उससे ज्यादा, न उससे कम। न्याय का नियम अपरिवर्तनीय है और हम खुद को सही सिद्धांतों के जितने करीब रखेंगे, इस बारे में हमारा निर्णय उतना ही बेहतर होगा कि संसार किस तरह

चलता है और हमारे पैरेडाइम्स यानी क्षेत्र के नक्शे उतने ही अधिक त्रुटिहीन होंगे।

मेरा मानना है कि जैसे-जैसे हम इस ऊर्ध्वमुखी चक्र पर आगे बढ़ते हैं, हमें अपने विवेक को शिक्षित करने और इसके आदेशों का पालन करने के माध्यम से नवीनीकरण की प्रक्रिया में ज्यादा मेहनत करना होगी। लगातार शिक्षित हो रहा विवेक हमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता, सुरक्षा, बुद्धिमानी और शक्ति की राह पर आगे की तरफ ले जायेगा।

ऊर्ध्वमुखी चक्र में ऊपर जाने के लिए हमें अधिक उच्च स्तरों पर सीखने, संकल्प लेने और करने की जरूरत होती है। अगर हम यह सोचते हैं कि इनमें से कोई एक ही पर्याप्त है, तो हम खुद को धोखा देते हैं। प्रगति करते रहने के लिए हमें सीखना, संकल्प लेना और करना होगा-सीखना, संकल्प लेना और करना होगा-और दुबारा सीखना, संकल्प लेना तथा करना होगा।

अमल में लाने के सुझाव

उन गतिविधियों की सूची बनाये, जो आपको अच्छी शारीरिक स्थिति में रखने में मदद करे, जो आपकी जीवनशैली में सही बैठें और जिनका आप लंबे समय तक आनंद ले सकें।

उत्तम स्वात्म चिन्ता व अधमाधमा परचिन्ता

(नवकोटि से आत्म चिन्ता करूँ व परचिन्ता नवकोटि से त्यागूँ)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे! तू काहे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू स्व-(मैं) आत्म श्रद्धान करऽऽ
स्व-आत्म का ज्ञान-आचरण करऽऽ सम्मान-कथन भी करऽऽ...(ध्रुव)...

इससे ही तुझे मिलती शांतिऽऽ इससे ही (तुझे) मिलेगी मुक्तिऽऽ
इससे परे सभी करो तू त्यागऽऽ जो कुछ राग द्वेष मोह युक्तऽऽ
उत्तम से भी उत्तम (है) आत्म चिंतनऽऽ...जिया रे...(1)...

इस हेतु ही तू कर ध्यान-अध्ययनऽऽ लेखन-अध्यापन-प्रवचनऽऽ

जिज्ञासा-समाधान-अनुसंधानऽऽ कल्पना-समीक्षा-संशोधनऽऽ
इससे होगा आत्म संवर्द्धनऽऽ...जिया रे...(2)...

परनिंदा-अपमान-अहित त्यागोऽऽ ईर्ष्या द्वेष घृणा-विद्वेषऽऽ
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य साम्य भजोऽऽ चिंतन (करो) स्व-पर-विश्व कल्याणऽऽ
बनो उदार तू पावनऽऽ...जिया रे...(3)...

इसे ही कहते हैं आत्म-अध्ययनऽऽ स्वाध्याय व आत्मध्यानऽऽ
आलोचना-निंदा-गर्हा-प्रतिक्रमणऽऽ प्रायश्चित्त व आत्मसंशोधनऽऽ
संवर-निर्जरा अतः निर्वाणऽऽ...जिया रे...(4)...

अष्टमद व ढोंग-पाखण्ड त्यागोऽऽ ख्याति पूजा प्रसिद्धि लाभऽऽ
वर्चस्व-प्रदर्शन व विकथा त्यागोऽऽ भेड़-भेड़िया चाल मिथ्याचारऽऽ
परचिंता अधमाधमा छोड़ऽऽ...जिया रे...(5)...

इससे विपरीत अज्ञानी-मोहीऽऽ ईर्ष्या द्वेष घृणा से प्रभावीऽऽ
अष्टमद पर-निंदा-अपमान सहऽऽ ढोंगी-पाखण्डी-प्रमादीऽऽ
उनसे रहो तू अप्रभावीऽऽ...जिया रे...(6)...

यह सारतत्त्व आगम आध्यात्मऽऽ मनोविज्ञान-नीति-नियमऽऽ
आत्मविश्वास ज्ञान व आचरणऽऽ उपगूहन-स्थितिकरणादि अंगऽऽ
'कनक' तू सच्चिदानंद बनऽऽ...जिया रे...(7)...

चितरी, दिनांक 05.08.2017, प्रातः 8.38
(यह कविता नरेश व अक्षय शौर्य (चितरी) के कारण बनी।)

संदर्भ-

अश्यक्य धारणं चेदं जंतुनां कातरात्मनाम्।
जैनं निस्संगता मुख्यं रूपं धीरैः निषेव्यते।।

जिसमें यथाजात रूप अंतरंग-बहिरंग ग्रंथ रहितता मुख्य है ऐसा निर्ग्रंथ लिंग उसी प्रकार दुर्द्धर, दुरासाध्य, अत्यंत कठिन रूप को कातर, कायर, मन एवं इन्द्रियों के दास, भोगों के द्वारा धारण करना अत्यंत अशक्य है। जो धीर, वीर, गंभीर, दमी, यमी

होते हैं उनके द्वारा ही निर्ग्रंथ लिंग धारण किया जा सकता है। जैसे चक्रवर्ती के चक्र को कायर पुरुष प्रयोग नहीं कर सकता, केवल वीर पुरुष, पुण्यात्मा पुरुष धारण कर सकता है, उसी प्रकार इस निर्ग्रंथ रूप को धीर-वीर एवं पुण्यात्मा पुरुष धारण कर सकते हैं।

अंतर विषय वासना वरतैं बाहर लोक लाज भय भारी।
यातै परम दिगम्बर मुद्रा धर नहीं सकै दीन संसारी।।
ऐसी दुर्धर नगन परिषह जीतै साधु शील व्रतधारी।
निर्विकार बालकवत् निर्भय तिनके चरणे धोक हमारी।।

हे अन्तरात्मन्! तुमने अनंत दुःख के कारण मूलभूत बहिरात्मपना को त्यागकर परमात्मपना के साधक स्वरूप परम पवित्र, सर्वश्रेष्ठ, समता रूप, सत्य-अहिंसा-अपरिग्रह-ब्रह्मचर्य-रत्नत्रय दस धर्म के जीवन्त/प्रायोगिक रूप जो साधुत्व को प्राप्त किया है उसमें मनसा-वचसा-कर्मणा एकनिष्ठ होकर समस्त कल्याण के मूलभूत आत्मकल्याण में सतत, समग्रता से प्रयत्न करो क्योंकि ये ही एक कार्य है जो कि तुमने अनंत काल से अनंत जन्म में भी नहीं किया है। इसके अतिरिक्त और समस्त कार्य यथा-जन्म-मरण, भोग-उपभोग, शत्रुता-मित्रता, युद्ध-कलह, मान-अपमान, मरना-मारना, सत्ता-संपत्ति, प्रसिद्धि-बुद्धि, वैभव, राज-पाट, अमीरी-गरीबी, रोग-शोक, भय-उद्वेग, क्लेश-संक्लेश, तनाव-उदास आदि समस्त कार्य अवस्थाओं को तुमने किया, करवाया अनुभव किया है। इन सब कार्यों से तुमने अनंत दुःख भी भोगे हैं अतएव हे सुखेच्छु! संवेग-वैराग्य युक्त से आत्मन्! अभी तो कम से कम एक बार भी स्वयं के लिए मरकर भी देखो कि स्वयं के लिए मरण से तुम कैसे अमृत बन जाते हो, अजर-अमर, शाश्वतिक ''सच्चिदानंद सत्यं शिवं सुंदरम्'' बन जाते हो। यथा-

अयि कथमपि मृत्वा तत्वकौतूहली सन्,
अनुभव भव मूर्तेः पार्श्ववर्ती मुहूर्तम्।
पृथगथ विलसंतं स्वं समालोक्य।
येन त्यजसि झगति मूर्त्या साकमेकत्वमोहम्।। (अमृत कलश)

हे शांति के इच्छुक आत्मन्! तत्त्व कौतुहल आदि किसी प्रकार से मरकर भी स्व-विज्ञान घनस्वरूप आत्म तत्त्व को मोह, माया, शोक-दुःख से मुहूर्त मात्र के लिए

अलग अनुभव करो और जब ऐसा अनुभव करो तो तत्काल स्वशुद्धात्मा से भिन्न भौतिक/अनात्म/विकारभूत मोहादि को हठात् त्याग कर दो इससे तुम निर्मल/पवित्र, आनंद, ध्यान स्वरूप हो जाओगे।

विरम किमपरेणाकार्यकोलाहलेन,
स्वयमपि निभृतः सन् पश्य षण्मासमेकम्।
हृदयसरसि पुंसः पुद्गलदभिन्नधाम्नो,
ननु किमनुपलब्धिर्भाति किंचोपलब्धिः।।

हे आत्मन्! संसार के अकार्य कोलाहल से विराम लो। स्वयं ही समस्त संकल्प-विकल्पों से अवकाश प्राप्त करके स्व-आत्मस्वरूप का अवलोकन/अनुभव करो। तब स्वयं को अनुभव हो जाएगा कि तुम्हारा चैतन्य शुद्ध-स्वरूप समस्त भौतिक स्वरूप से भिन्न है या नहीं? अर्थात् निश्चय से भिन्न है।

अतएव हे आत्मन्! आत्मविश्वास, आत्मज्ञान, आत्म अनुसंधान, आत्म परीक्षण-निरीक्षण, आत्म विश्लेषण, आत्मानुचरण से ही स्वात्मोपलब्धि रूप सुख-शांति, संवर, निर्जरा, मोक्ष प्राप्त किया जाता है। अन्य सब धार्मिक क्रिया-काण्ड, व्रत-नियम-उपनियम, तप-त्याग, परीषह-उपसर्ग सहन, पूजा-पाठ, जप-तप, मंत्र-ध्यान आदि इसके लिए साधन/निमित्त/कारण/उपाय हैं।

हे साधकात्मन्! तुम्हारा निज आत्म वैभव अक्षय अनंत है। वर्तमान पंचमकाल के समस्त देश-विदेश के सामान्य जन से लेकर उद्योगपति, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, वैज्ञानिक, साधु-संत के वैभव सीमित हैं, क्षायोपशमिक, कर्म सापेक्ष हैं। अतएव आत्म वैभव की अपेक्षा वर्तमान के स्व-पर के वैभव अत्यंत तुच्छ हैं/हेय हैं, इसलिए वर्तमान के स्व-पर वैभव से न राग करो, न ईर्ष्या करो, न अहंभाव करो, न दीनभाव करो। जो कुछ तुम्हारी वर्तमान की उपलब्धि है उसका सदुपयोग निज आत्म वैभव की उपलब्धि के लिए ही करो। वर्तमान की उपलब्धि का उपयोग ख्याति, पूजा, लाभ, प्रसिद्धि, संक्लेश-तनाव, ईर्ष्या-द्वेष, दन्द-फन्द में करके इह-परलोक में दुःखी मत हो। शास्त्रों में वर्णन पाया जाता है कि प्राचीन काल के तीर्थंकर, गणधर आदि चार ज्ञान एवं चौसठ ऋद्धियों के स्वामी होते हुए भी उन सबका उपयोग ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि या यहाँ तक कि उनके ऊपर उपसर्ग-परीषह करने वालों के निवारण के लिए

नहीं किया क्योंकि ऐसा करने से उपलब्धि का (1) सम्यक् सदुपयोग नहीं होता (2) प्राप्त उपलब्धि में मंदता आती है (3) आत्मोत्थ अक्षय-उपलब्धि में बाधा होती है। अतः हे आत्मन्! ''वन्दे तद्गुण लब्धये'' अनुसार तुम्हारी पंचपरमेष्ठी में जो पूजा/भक्ति/प्रार्थना तब यथार्थ होगी जब तुम उनके गुणों को स्वीकार करोगे क्योंकि गुणानुस्मरण, गुणानुवादन तथा गुणानुकरण ही यथार्थ भक्ति है, सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र है। हे आत्मन्!

''आदहिदं कादव्वं यदि चेत् परहिदं कादवं।
आदहिदं परहिदादं आदहिदं सुट्ठू कादव्वं।।
उत्तमा स्वात्मचिंतास्यान्मोहाचिन्ता च मध्यमा।
अधमा कामचिन्ता स्यात् परचिंताऽधमाधमा।।''

अर्थात् जिस प्रकार दीपक स्वयं पहले प्रकाशित होकर दूसरों को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार तुम स्वयं स्व-उपकार करते हुए परोपकार करो। इसके बिना अन्य समस्त प्रपंच, ढोंग-पाखण्ड, संक्लेश त्याग करो।

सिद्धि एवं श्रेय मार्ग

कुबोध रागादि विचेष्टितैः फलं, त्वयाऽपि भूयो जननादि लक्षणम्।
प्रतीहि भव्य प्रतिलोम वृत्तिभिः, ध्रुवं फलं प्राप्यसि तद्विलक्षणम्।। (106)

(आत्मानुशासनम्)

हे भव्य! तूने बार-बार मिथ्यात्व, ज्ञान एवं राग-द्वेषादि जनित प्रवृत्तियों से जो जन्म-मरणादि रूप फल प्राप्त किया है उसके विरुद्ध प्रवृत्तियों-सम्यग्ज्ञान एवं वैराग्य जनित आचरणों-के द्वारा तू निश्चय से उसके विपरीत फल-अजर-अमर पद को प्राप्त करेगा, ऐसा निश्चय कर।

दयादमत्याग समाधि संततेः पथि प्रयाहि प्रगुणं प्रयत्नवान्।
नयत्यवश्यं वचसामगोचरं विकल्पदूरं परमं किमप्यसौ।। (10)

हे भव्य! तू प्रयत्न करके सरल भाव से दया, इन्द्रिय दमन, दान और ध्यान की परंपरा के मार्ग में प्रवृत्त हो जा वह मार्ग निश्चय से किसी ऐसे उत्कृष्ट पद को प्राप्त कराता है जो वचन से अनिर्वचनीय एवं समस्त विकल्पों से रहित है।

दया-दम-त्याग-समाधिनिष्ठम् नय प्रमाण प्रकृताङ्ञ्साऽर्थम्।
अधृत्यमन्यैरखिलैः प्रवादैः, जिन! त्वदियं मतमद्वितीयम्।। (6)

युक्त्यानुशासनम्

हे वीर जिन! आपका यह अनेकांत रूप शासन अद्वितीय है। क्योंकि इसमें दया, दम, त्याग और समाधि में तत्परता है। नयों एवं प्रमाणों द्वारा इसमें द्रव्य पर्याय स्वरूप जीवादिक तत्त्वों का अविरोध रूप से, सुनिश्चित असंभव बोधक रूप से निर्णय किया गया है एवं इसमें समस्त एकांत प्रवादों दर्शन मोहनीय के उदय से सर्वथा एकांतवादियों की कल्पित मान्यताओं द्वारा किसी भी प्रकार की बाधा नहीं आ सकती है।

हे आत्मन्! मोक्ष प्राप्ति का पूर्ण अद्वितीय मार्ग रत्नत्रय ही है। अनंत अनंतदर्शियों ने इस मार्ग पर चलते हुए मोक्ष को प्राप्त किया है। वे अनंतज्ञान को प्राप्त करके पूर्ण रूपेण प्रत्यक्ष से अनुभव करके रत्नत्रयात्मक मार्ग को ही यथार्थ मार्ग और इससे अतिरिक्त कुमार्ग, दुःख का मार्ग एवं संसार का मार्ग है। आचार्य प्रवर समंतभद्र स्वामी ने कहा भी है-

सदृष्टिज्ञान वृत्तानि धर्म धर्मेश्वरा विदुः।
यदिय प्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धति।। (3)

सद्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यग्चारित्र ही धर्म है, मोक्ष का मार्ग है, इससे विपरीत मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान एवं कुचारित्र ही कुधर्म है, दुःख का मार्ग है, संसार का मार्ग है, ऐसा धर्म के ज्ञाता धर्म के प्रभु ने बताया है। आचार्य उमास्वामी भी मोक्ष प्रतिपादक शास्त्र का प्रतिपादन करते हुए प्रथम पंक्ति में बताते है कि-

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणिमोक्षमार्गः।। (तत्त्वार्थसूत्र)

Right belief, Right knowledge (right) Conduct, these (together constitute) the path to liberation.

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनों का सम्यक् संयोग रूप त्रयात्मक मोक्ष का मार्ग है।

"Self reverence, self knowledge and self control, these three alone lead life to sovereign power."

हे मुनेः! आध्यात्मिक दर्शन के समर्थ प्रचार-प्रसारक कुंदकुंद स्वामी आध्यात्मिक जगत् की अद्वितीय कृति समयसार में भी विमुक्ति मार्ग का प्रतिपादन करते हुए कहते है-

जीवादी सद्दहणं सम्मत्तं तेसिमथिगमो णाणं।

रागादीपरिहरणं चरणं ऐसा दु मोक्खपहो।। (162) समयसार

एसो दु मोक्ख पहो इत्येव व्यवहार मोक्ष मार्गः।

यह व्यवहार मोक्षमार्ग है।

रागादि परिहरणं चरणं-तेषामेव सम्बन्धित्वेन रागादि परिहारश्चरित्रं।

रागादि परिहरणं चरणं और उन्हीं के संबंध से होने वाले जो रागादिक विभाव होते हैं उनको दूर हटा देना सो सम्यक्चारित्र कहलाता है। हाँ, भूतार्थनय के द्वारा जाने हुए उन्हीं जीवादि पदार्थों को अपनी शुद्धात्मा से पृथक् रूप में ठीक-ठीक अवलोकन करना निश्चय सम्यग्दर्शन कहलाता है और उन्हीं जीवादि पदार्थों को अपनी शुद्धात्मा से पृथक् रूप में जानना सो निश्चय सम्यग्ज्ञान है और उनको शुद्धात्मा से भिन्न जानकर रागादिरूप विकल्प से रहित होते हुए अपनी शुद्धात्मा में अवस्थित होकर रहना, निश्चय सम्यक्चारित्र है, इस प्रकार यह निश्चय, मोक्षमार्ग है। हे भव्य! नेमिचन्द्र सिद्धांतदेव द्रव्यसंग्रह में निश्चय-व्यवहार मोक्षमार्ग का वर्णन करते हुए निम्न प्रकार बताते हैं-

सम्मद्दंसण णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।

ववहार णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा।। (39)

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र इन तीनों के समुदाय को व्यवहार से मोक्ष का कारण मानो तथा निश्चय से सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और चारित्र स्वरूप जो निज आत्मा है, उनको मोक्ष का कारण मानो।

रत्नत्रय व्यवहार मोक्षमार्ग है। निश्चय से रत्नत्रय रूप परिणित आत्मा ही मोक्षमार्ग है। स्वयं आत्मा ही निश्चय से मोक्षमार्ग किस प्रकार का होता है? इसका प्रति उत्तर देते हुए आचार्यश्री ने कहा है-

रयणत्तयं ण वट्ठइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदवि यम्हि।

तम्हा तत्तियमइयो होदि हु मोक्खस्स कारणं आदा।। (40)

आत्मा को छोड़कर अन्य द्रव्य में रत्नत्रय नहीं रहता, इस कारण उस रत्नत्रयमयी जो आत्मा है, वही निश्चय से मोक्ष का कारण है।

कुंदकुंद स्वामी भी यह भेदा-भेदात्माक निश्चय-व्यवहारात्मक मोक्षमार्ग का

प्रतिपादन करते हुए कहते है-

दंसण णाण चरित्ताणी सेविदव्वाणि साहुणा णिच्चं।

ताणि पुण जाण तिण्णिवि अप्पाणं चेव णिच्छयदो।। (5)

साधु को व्यवहारनय से सम्यग्दर्शन, ज्ञान और चारित्र इन तीनों को भिन्न-भिन्न समझकर नित्य-सदा ही इनकी उपासना करनी चाहिए, अपने उपयोग में लाना चाहिए, किन्तु शुद्ध निश्चयनय से वे तीनों एक शुद्धात्म स्वरूप है, उससे भिन्न नहीं है ऐसा समझ लेना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि पंचेन्द्रियों के विषय और क्रोधादि कषायों से रहित जो निर्विकल्प समाधि है उसमें ही सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र ये तीनों होते हैं।

णिज्जावगो ये णाणं वादो झाणं चरित्त णावा हि।

भवसागरं तु भविया तरंति तिहि सण्णिवायेण।। (900)

खेवटिया ज्ञान है, वायु ध्यान है और नौका चारित्र है। इनके संयोग से ही भव्य जीव भवसागर से तिर जाते हैं।

णाणं पयासओ तओ सोधयो संजयो य गुत्तियरो।

तिण्हंपि य संपजोगे होदि हु जिण सासणे मोक्खे।। (901)

ज्ञान प्रकाशक है, तप शोधक है और संयम रक्षक है इन तीनों के संयोग से ही अर्थात् मिलने पर ही जिनशासन में मोक्ष प्राप्ति होती है।

तवेण धीरा विधुणंति पावं अज्झप्पजोगेण खावंति मोहं।

संखीण छुदरागा दोसा उत्तमा सिद्धिगदिं पयांति।। (903)

धीर मुनि तप से पाप नष्ट करते हैं, अध्यात्म योग से मोह का क्षय करते है अतः वे उत्तम पुरुष मोह रहित और राग-द्वेष रहित होते हुए सिद्ध गति प्राप्त कर लेते हैं।

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात विषयान् विषवत्त्यज।

क्षमार्जवदयातोषं सत्यं पियूषवद् भज।। सू. 2 अष्टावक्रगीता

हे प्रिय! यदि तू मुक्ति चाहता है तो विषयों को विष के समान छोड़ दे और क्षमा, आर्जव, दया, संतोष और सत्य को अमृत के समान सेवन कर।

एको विशुद्ध बोधव्योऽहमिति निश्चयवह्निना।

प्रज्वाल्याज्ञानगहनं वीतशोकः सुखी भव।। सूत्र 9

'मैं एक विशुद्ध बोध हूँ' ऐसी निश्चयरूपी अग्नि से गहन अज्ञान को जलाकर तू शोक रहित हुआ सुखी हो।

निरपेक्षो निर्विकारो निर्भरः शीतलाशयः।

अगाधबुद्धिरब्धो भव चिन्मात्रवासनः।। सूत्र 17

''तू निरपेक्ष है, निर्विकार है, स्व-निर्भर है, शांति और मुक्ति का स्थान है, अगाध बुद्धिरूप है, क्षोभ-शून्य है। अतः चैतन्य मात्र में निष्ठा वाला हो।''

समदुःखसुखपूर्ण आशानैराश्यौः समः।

समजीवित मृत्युः सन्नेमेव लयं व्रज।। सूत्र 4

''दुःख और सुख जिसके लिए समान है, जो पूर्ण है, जो आशा और निराशा में समान है, जीवन और मृत्यु में समान है, ऐसा होकर तू मोक्ष को प्राप्त हो।''

जहरीले इंसानों की पहचान है आपको!

हमारे दोस्तों का समूह भी मिले-जुले व्यक्तित्वों से भरा होता है। इनमें से आपके प्रति सच्चा कौन है, कौन सदा सकारात्मक रहता है और किसे आपकी खुशियों की रत्ती भर भी परवाह नहीं, यह जानना जरूरी है। आज के माहौल में सकारात्मक रहना आवश्यक है। जो सदा नकारात्मक रहते हैं, ऐसे लोग जहरीले यानी टॉक्सिक पर्सनैलिटी के माने जाते हैं। आइये, इन्हें इनकी हरकतों से पहचानने और बचने की कोशिश करते हैं।

आप अंदाजा लगाते रह जायेंगे-ऐसे लोग एक दिन अच्छे रहते हैं और अगले ही दिन चुप, उदास या परेशान दिखते हैं। आप कारण पूछेंगे, तो जवाब मिलेगा-कुछ नहीं हुआ। अब आप उन्हें खुश करने, कारण जानने या उनका मूड ठीक करने की हरसंभव कोशिश करने में लग जायेंगे और यही वे चाहते हैं। ऐसा मत कीजिये। आपसे अनजाने कोई भूल हुई भी हो, तो बताने पर ही तो माफी माँग सकेंगे न। अन्यथा आप किसी के मूड के लिए जिम्मेदार नहीं हैं, सो दूसरे काम में मन लगाइये।

आपको खुद को साबित करना होगा-ये लोग आपसे हर बार उनके प्रति आपके लगाव या समर्पण को साबित करने के लिए चुनौती देते रहेंगे। जैसे-अगर

तुम्हें मेरी परवाह है, तो आज कॉलेज नहीं जाओगे।

इसमें मुश्किल यह है कि इस तरह की माँगों का कोई अंत नहीं होगा। बार-बार, लगातार आप खुद को साबित करते रहेंगे, और ये लोग अपनी उंगलियों पर आपको नचाते रहेंगे।

माफी माँगना इन्हें नहीं आता-जहरीले व्यक्तित्व के लोग किसी भी घटना के बारे में हद से ज्यादा बातें करते जाते हैं ताकि वे किसी न किसी कोण से दूसरे को दोषी ठहरा सकें। इस रेलमपेल में वे खुद की भूल को आसानी से छुपा जाते हैं। शब्दों और चीख-पुकार का जाल काम आ जाता है।

इनके साथ किसी भी तरह का तर्क करना या किसी बात को लंबा खींचना बेकार है। अपनी ऊर्जा और शांति बचाकर निकल जायें।

आपकी परेशानी बड़ी, खुशी छोटी-ऐसे लोगों को आप इस गुण से आसानी से पहचान सकते हैं। इनको आप अपनी परेशानी बतायेंगे तो ये आपसे सहानुभूति जताने के जरिये इतनी बार दोहरायेंगे कि आप और दुःखी हो जायेंगे। वहीं खुशी में कोई कमी निकाल लेंगे। जैसे तुम्हें उतना पैसा नहीं मिलता, जितनी तुम पर अब जिम्मेदारी डाल दी गई है। (प्रमोशन होने पर उनकी टिप्पणी)।

इनके सामने अपने जीवन के उतार-चढ़ाव का जिक्र न करना ही ठीक है। निदान मिलने वाला तो है नहीं।

इन्हें आपकी रत्ती-भर परवाह नहीं-आपका दिन अच्छा ही बीता होगा, मेरा तो खराब था, जैसी तुलना करते समय इनका मकसद आपको खराब महसूस कराना है। अचानक ही ये जहरीले शब्दों के तीर चलायेंगे और आप बिना कुसूर आहत होंगे।

इस बात को साफ समझ लीजिये। बिना वजह आहत होने का कोई अर्थ नहीं। जब आप इन टॉक्सिक लोगों को पहचान लें, तो इनसे मिलना, बात करना बंद कर दें। जिनको केवल अपनी ही पड़ी हो, उनसे दोस्ती रखकर खुद को परेशान रखना फिजूल है।

मैं एक अद्वितीय व अनंत हूँ!

(मेरी एकत्वानुप्रेक्षा)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन तड़पत....., कसमें-वादे.....)

'मैं' हूँ एक, मैं अन्य न होता।
एक अद्वितीय; मैं अनंत भी होता/(एक अनेक व अभिन्न होता)।। (ध्रुव)

यह आकाश होता है एक...लोक-अलोक द्विविध/(अनंत) रूप।
तथाहि मैं एक अनंत होता...द्रव्य-गुण-पर्यायमय (होता)।। (1)

अनादि अनंत काल मध्य में...अनंत पंच परिवर्तन संसार।
चतुर्गति (व) चौरासी लक्ष्य योनि में...मैं एकला ही रहा सदाकाल।। (2)

जन्म-मरण (व) सुख-दुःख मेरे...द्रव्य-भाव-नोकर्म भी सारे।
सभी कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता...'मैं' ही एकला सभी में होता।। (3)

अन्य सभी बाह्य-निमित्त ही होते...सभी का प्रमुख (उपादान) मैं ही होता।
संसार में यथा एकला ही रहा...मोक्षमार्ग-मोक्ष में ही मैं तथा भी।। (4)

देव-शास्त्र-गुरु उपकारी मेरे...आहार-औषधि-उपकरण सारे।
द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव सारे...बाह्य निमित्त मैं प्रमुख होता।। (5)

'मैं' बिना मेरे ये संभव न होते...मेरे सप्त तत्त्व नवा पदार्थ।
द्वादश अनुप्रेक्षा में एकत्व भाव...प्रमुख होता अन्य सभी सहयोग।। (6)

मेरे बिना सभी शून्य मम हेतु...मोक्षमार्ग से ले मोक्ष हेतु।
पंचपरमेष्ठी से ले मोक्ष पर्यंत...मम अस्तित्व बिन मम न (हित) हेतु।। (7)

अतः 'मैं' मेरे लिए सर्वश्रेष्ठ...प्रिय-श्रेय-वरेण्य-वरिष्ठ।
स्व-उपलब्धि ही (मम) परम लक्ष्य/(मोक्ष)...इस हेतु आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र।। (8)

इस हेतु निश्चय-व्यवहार धर्म...ध्यान-अध्ययन व तप-त्याग।
सभी का ही 'मैं' प्रमुख कर्त्ता...'कनक' मैं नहीं, मैं चैतन्य कर्त्ता।। (9)

चितरी, दिनांक 31.07.2017, मध्याह्न 1.52

जो सत्य है उसे निर्भीक होकर लोगों से कहो

-स्वामी विवेकानंद

जो सत्य है, उसे निर्भीक होकर लोगों से कहो। उससे किसी को कष्ट होता है या नहीं, इस ओर ध्यान मत दो। दुर्बलता को कभी प्रश्रय मत दो। सत्य की ज्योति 'बुद्धिमान' मनुष्यों के लिए यदि अत्यधिक मात्रा में प्रखर होती है और उन्हें बहा ले जाती है, तो ले जाने दो। वे जितना अधिक शीघ्र बह जाये उतना अच्छा ही है। तुम अपनी अंतःस्थ आत्मा को छोड़ किसी और के सामने सिर मत झुकाओ। जब तक तुम यह महसूस नहीं कर लेते कि तुम देवों के देव हो तब तक तुम मुक्त नहीं हो सकते। मनुष्य का अध्ययन करो, मनुष्य ही जीवन्त काव्य है।

संदर्भ-

बार-बार होने वाले जन्म, जरा, मरणों के महादुःखों के अनुभव के लिए सहायता की अपेक्षा न रखना एकत्व और अनेकत्व ये दोनों ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के भेद से 4 प्रकार हैं। (चारित्र पृ. 171)

द्रव्य एकत्व जीवादिक पदार्थ में से किसी एक पदार्थ के विषय को लेकर अभेद बुद्धि रखना द्रव्य एकत्व है।

क्षेत्रएकत्व परमाणु के रहने योग्य प्रदेश के क्षेत्र एकत्व है।

कालएकत्व अभेद रूप समय को कालएकत्व कहते हैं।

भावएकत्व मोक्षमार्ग को भावएकत्व कहते हैं।

अनेकत्व जिस प्रकार अभेद विषय को एकत्व कहते हैं उसी प्रकार भेद विषय को अनेकत्व कहते हैं। संसार में न तो कोई भी पदार्थ एक है और न अनेक ही है किन्तु सामान्य की अपेक्षा से एक है और विशेष की अपेक्षा से अनेक है। जिस जीव ने बाह्य अभ्यंतर उपाधियों का त्याग कर दिया है तथा सम्यग्ज्ञान से एकत्व का निश्चय कर लिया है उसके एक यथाख्यात चारित्र की वृत्ति धारण करने से मोक्षमार्ग के भाव प्रगट होते हैं इसीलिए उसके वह एकत्व कहलाता है। उस एकत्व की प्राप्ति के लिए 'इस संसार में मैं अकेला हूँ' 'स्व' और 'पर' मेरा कोई नहीं है। मैं अकेला ही जन्म लेता हूँ और अकेला ही मरता हूँ। स्वजन और परजन कोई मनुष्य भी मेरी

व्याधियाँ-बुढ़ापा और मरण आदि के दुःखों को दूर नहीं कर सकता। बंधु, मित्र आदि श्मशान से आगे नहीं जा सकते। एक धर्म ही मेरा सहायक है और वही ऐसा है जो कभी नाश न होगा 'इस प्रकार चिंतवन करना एकत्वानुप्रेक्षा है। इस प्रकार चिंतवन करने से अपने कुटुंबी लोगों से प्रेम नहीं बढ़ता और अन्य लोगों में द्वेष नहीं बढ़ता। इस प्रकार राग-द्वेष का अभाव होने से निःसंगता बढ़ती है और निःसंगता बढ़ने से मोक्ष प्राप्त होता है।'

सयणस्स परियणस्स य मज्झे एक्को रुवंतओ दुहिदो।

वज्जदि मच्चुवसगदो ण जणो कोई समं एदि।। (700) मूलाचार

भतीचा, चाचा आदि स्वजन है। दास, दासी, मित्र आदि परिजन है। इनके मध्य में भी यह जीव असहाय है। अकेला ही यह जीव व्याधि से पीड़ित होता है, अकेला ही दुःखी होता है, रोता है और अकेला ही मृत्यु को प्राप्त होता है। अन्य कोई भी जन इसके साथ परलोक नहीं जाते।

एक्को करेइ कम्मं एक्को हिंडदि य दहिसंसारे।

एक्को जायदि मरदि य एवं चिंतेहि एयत्तं।। (701)

यह जीव अकेला ही शुभ-अशुभ कर्म बाँधता है, अकेला ही दीर्घ संसार में परिभ्रमण करता है। अकेला ही जन्म और मरण करता है। इस तरह एकत्व भावना का चिंतवन करो। यह एकत्व भावना हुई।

महाव्यसनसंकीर्णे दुःखज्वलनदीपिते।

एकाक्येव भ्रमत्यात्मा दुर्गे भवमरूस्थले।। (84) ज्ञानावर्ण

भयानक विपत्तियों से व्याप्त और दुःखरूप अग्नि से संतप्त इस दुर्गम संसार रूपी मरूस्थल (रेगिस्तान) में यह जीव अकेला ही परिभ्रमण किया करता है।

स्वयं स्वकर्मनिर्वृतं फल भोक्तुंशुभाशुभम्।

शरीरान्तरमादत्ते एकः सर्वत्र सर्वथा।। (85)

यह जीव स्वयं किये हुए कर्म का जो शुभ और अशुभ फल निर्मित हुआ है, उसको भोगने के लिए सब योनियों में सब प्रकार से अकेला रहकर असहाय होकर अन्य-अन्य शरीर को ग्रहण किया करता है। अभिप्राय यह है कि प्राणी अपने और कौटुम्बिक जन आदि के निमित्त से जो भी भला-बुरा कार्य करता है उससे संचित

हुए पुण्य और पाप के फल को एक वही भोगता है, इसमें उसका अन्य कोई भी सहायक नहीं होता है।

संकल्पानन्तरोत्पन्नं दिव्यं स्वर्गसुखामृतम्।
निर्विशत्ययमेवैकः स्वर्गश्रीरञ्जिताशय।। (86)

प्राणी, पूर्वोपार्जित पुण्य के उदय से स्वर्ग की लक्ष्मी से मन में अनुरंजित होकर संकल्प के पश्चात् उत्पन्न हुए दिव्य स्वर्गीय सुखरूप अमृत को अकेला ही भोगता है।

संयोग विप्रयोगे च संभवे मरणेऽथवा।
सुख दुःखविधौ चास्य न सखान्योऽरित देहिनः।। (87)

संयोग और वियोग में जन्म और मरण में तथा सुख और दुःख के विधान में इस जीव का दूसरा कोई भी मित्र नहीं है, सहभागी भी नहीं होता है।

वित्तपुत्रकलत्रादिकृते कर्म करोत्ययम्।
यत्तस्य फलमेकाकी भुङ्क्तेश्वभादिभूमिशु।। (88)

यह प्राणी धन, पुत्र और स्त्री आदि के निमित्त से जो कर्म करता है उसके दुःख सुख रूप को वह अकेला ही नरकादि पृथ्वियों में भोगता है।

सहाया अस्य जायन्ते भोक्तुं वित्तानि केवलम्।
न तु सोढुं स्वकर्मोत्थां निर्दयां व्यसनावलीम्।। (89)

स्त्री और पुत्र आदि जो भी इस प्राणी के सहायक होते हैं वे केवल उसके द्वारा उपार्जित धन के भोगने में ही सहायक होते हैं। परन्तु उस धन के संचय में उसने जिस कर्म को उपार्जित किया है उससे उत्पन्न हुए क्रूर दुःखों के समूह के भोगने में उनमें से कोई भी सहायक नहीं होता है।

अज्ञातस्वस्वरूपोऽयं लुप्तबोधादिलोचन।
भ्रमत्यविरतं जीव एकाकी विधिवञ्चितः।। (90)

ज्ञानादि रूप नेत्र से रहित होने के कारण अपने निज स्वरूप से अनभिज्ञ यह प्राणी कर्म से ठगा जाकर अकेला ही इस संसार में परिभ्रमण करता है।

यदैक्यं मनुते मोहादयमर्थैः स्थिरेतरैः।
तदा स्वं स्वेन बध्नाति तद्विपक्षः शिवीभवेत्।। (91)

यह जीव मोहवश होकर जब तक स्थिर और अस्थिर (विनश्वर) पदार्थों के

साथ अपनी एकता मानता है ये मेरे हैं और मैं इनका हूँ इस प्रकार की ममत्व बुद्धि रखकर उसको आत्मा से भिन्न नहीं समझता है तब तक वह अपने आपको उनसे स्वयं को बाँधता है-उनके आधीन रहकर व्याकुल होता है और इससे विपरीत प्राणी जो स्थिर और अस्थिर सब ही बाह्य पदार्थों को आत्मा से भिन्न समझकर उनमें अनुरक्त नहीं होता है, बंध से मुक्त होकर शाश्वतिक सुख का भोक्ता होता है।

एकाकित्वं प्रपत्रोऽस्मि यदाहं वीतविभ्रमः।
तदैव जन्मसंबंधः स्वयमेव विशीर्यते।। (92)

जब मैं विपरीत बुद्धि को छोड़कर बाह्य पर पदार्थों में आत्म बुद्धि न करके एकाकीपन को (अद्वैत भाव को) प्राप्त हो जाता हूँ। उसी समय मेरे संसार का संबंध स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

अभिप्राय यह है कि जब तक शरीरादि बाह्य पदार्थों को अपना मानकर उनमें मुग्ध रहता है तब तक वह कर्म बंधन में बद्ध होकर संसार में परिभ्रमण करता है और इसके विपरीत जब वह शरीरादि को आत्मा से भिन्न मानकर उनकी और से विरक्त होता हुआ आत्म स्वरूप में मग्न होता है तब वह नवीन कर्मबंध से रहित होकर पूर्व संचित कर्म की निर्जरा करता हुआ मुक्त हो जाता है।

एकः स्वर्गी भवति विबुधः स्त्रीमुखाम्भोजभृंग।
एकः श्वाभ्रं पिबति कललं छिद्यमानः कृपाणैः।।
एकः क्रोधाद्यनलकलितः कर्म बध्नात्यविद्वान्।
एकः सर्वावरणविगमे ज्ञानराज्यं भुनक्ति।। (93)

एक विद्वान् (विवेकी) स्वर्गवासी देव होकर देवांगनाओं के मुखरूप कमल का भ्रमर बन जाता है। उनके साथ दिव्य भोगों को भोगता है, इसके विपरीत एक प्राणी तलवारों से छेदा जाकर नरक के कीचड़ को पीता है-नरक में नारकी होकर (महान्) दुःख को भोगता है, एक अज्ञानी प्राणी क्रोधरूप अग्नि से संतप्त होकर कर्म को बाँधता है, तथा इसके विपरीत एक जीव समस्त आवरण से (ज्ञानावरण आदि आठों कर्मों से) रहित होकर ज्ञानरूप राज्य का उपभोग करता है-मुक्त होकर अनंतज्ञानादि से संयुक्त हो जाता है। तात्पर्य यह है कि यह जीव जैसा आचरण करता है तदनुसार वह अकेला ही या तो कर्मबंध में बँधकर नरकादि गतियों में परिभ्रमण

करता या फिर उक्त कर्मबंध से रहित होकर निराकुल सुख को भोगता है।

दो में है बंधन विवाह, दो में ही संसार।

एकत्व में सब नशे, पाये सच्चिदानंद सार।। (कनकनंदी कृत)

(1) उस काम का करना अच्छा नहीं जिसे करके पीछे पछताना पड़े और जिसके फल को रोते हुए भोगना पड़े। **-धम्मपद**

(2) सादा जीवन और उच्च विचार ही मनुष्य को महानता की ओर ले जाते हैं। **-महात्मा गाँधी**

(3) जिस प्रकार मैले दर्पण में मुख दिखाई नहीं देता, उसी प्रकार राग भाव से रंगे हुए हृदय में वीतराग शांत प्रभु का दर्शन नहीं होता, यह सुनिश्चित है।

-मुनि गणेश वर्णी-भारवि

हालाँकि 7 आदतें में अंदर से बाहर की ओर की नीति की अनुशंसा की गई है, परन्तु यह सबसे सफलतापूर्वक तब काम करती है, जब आप किसी बाहरी चुनौती से शुरू करते हैं और फिर अंदर से बाहर की ओर की नीति अपनाते हैं। दूसरे शब्दों में, अगर आपके सामने संबंधों को लेकर कोई समस्या है, जैसे संप्रेषण और विश्वास खत्म हो गया है, तो यह बतायेगी कि किस प्रकृति की अंदर से बाहर की ओर की नीति आवश्यक है, जिससे आपको यह व्यक्तिगत विजय मिल सके, जो आपको उस समस्या को दूर करने की सार्वजनिक विजय पाने में समर्थ बनाये। यही कारण है कि मैं अक्सर पहली, दूसरी और तीसरी आदतों को सिखाने से पहले चौथी, पाँचवीं और छठी आदतें सिखाता हूँ।

परस्पर-निर्भरता आत्मनिर्भरता से दस गुना ज्यादा मुश्किल है। इसमें बहुत अधिक मानसिक और भावनात्मक आत्मनिर्भरता की आवश्यकता होती है। जब दूसरा व्यक्ति जीत/हार की मानसिकता का हो, तब जीत/जीत के बारे में सोचना बहुत मुश्किल होता है। जब आपके भीतर का रोम-रोम अपनी बात समझाने के लिए चीख रहा हो, तब पहले समझने की कोशिश करना बहुत मुश्किल होता है। जब समझौता करना बहुत ज्यादा आसान हो, तब बेहतर तीसरे विकल्प की खोज करना बहुत मुश्किल होता है। इसे दूसरे ढंग से कहा जाये तो दूसरों के साथ रचनात्मक सहयोग के तरीके से सफलतापूर्वक काम करने के लिए प्रचुर आत्मनिर्भरता, आंतरिक

सुरक्षा और आत्म-नियंत्रण की आवश्यकता होती है। अगर ऐसा नहीं होगा तो जिसे हम परस्पर-निर्भरता कहते हैं, वह दरअसल प्रति-निर्भरता है, जहाँ लोग अपनी आत्मनिर्भरता व्यक्त करने का ठीक उलटा करते हैं या फिर यह सह-निर्भरता है, जहाँ उन्हें अपनी आवश्यकता को पूरा करने और अपनी कमजोरी को उचित ठहराने के लिए दूसरे व्यक्ति की कमजोरी की जरूरत होती है।

आप पहली तीन आदतों को संक्षेप में इस तरह से भी कह सकते हैं, 'वायदे करना और निभाना।' और आप अगली तीन आदतों को संक्षेप में इस तरह से कह सकते हैं, 'समस्या में दूसरों को शामिल करना और मिलकर समाधान खोजना।'

7आदतें एक नई भाषा का प्रतिनिधित्व करती है, हालाँकि इसमें एक दर्जन से भी कम अनूठे शब्द या वाक्यांश हैं। यह नई भाषा एक कोड बन जाती है, कम शब्दों में बहुत ज्यादा कहने की शॉर्टहैंड प्रणाली बन जाती है। जब आप दूसरे से कहते हैं, 'यह डिपॉजिट था या विद्ड्रॉअल?' 'यह रिएक्टिव है यां प्रोएक्टिव?' 'यह सिनर्जिस्टिक है या समझौता?' 'यह जीत/जीत है या जीत/हार या हार/जीत?' 'यह सबसे महत्वपूर्ण चीजों को पहले रखना है या सबसे महत्वहीन चीजों को पहले रखना है?' 'यह शुरुआत अंत को ध्यान में रखकर हो रही है या वर्तमान को?' मैंने इन बहुत खास कोड वर्ड्स में समाहित सिद्धांतों तथा अवधारणाओं की समझ और प्रतिबद्धता के द्वारा संस्कृतियों को रूपांतरित होते देखा है।

अखंडता वफादारी की तुलना में अधिक उच्च जीवन मूल्य है। या इसे बेहतर तरीके से कहा जाये तो अखंडता वफादारी का सर्वोच्च रूप है। अखंडता का अर्थ लोगों या संगठनों या परिवारों पर नहीं, बल्कि सिद्धांतों पर केंद्रित होना है। आप पायेंगे कि लोगों से संबंधित मुद्दों की जड़ यह है, 'क्या यह लोकप्रिय (स्वीकार्य, कूटनीतिक) है या यह सही है?' जब हम किसी काम को करते समय किसी व्यक्ति या समूह के प्रति अपनी वफादारी को प्राथमिकता देते हैं और इस वजह से उस काम को नहीं करते, जिसे हम सही महसूस करते हैं, तो हम अखंडता खो देते हैं। हो सकता है हम अस्थायी तौर पर लोकप्रियता हासिल कर ले या वफादारी कायम कर ले, परंतु लंबे समय में अखंडता की यह कमी उन संबंधों को भी कमजोर बना देगी। यह किसी व्यक्ति की पीठ पीछे बुराई करने की तरह है। इस तरह की आलोचना आप जिसके

सामने करते हैं, वह जानता है कि आप भिन्न दबावों और परिस्थितियों में उसकी भी पीठ पीछे बुराई कर सकते हैं। एक तरह से, पहली तीन आदतें अखंडता का प्रतिनिधित्व करती हैं और अगली तीन आदतें वफादारी का, परंतु वे पूरी तरह आपस में गुँथी हुई हैं। समय के साथ अखंडता से वफादारी उत्पन्न होती है। अगर आप इस क्रम को उलटने का प्रयास करत हैं और पहले वफादारी दिखाना चाहते हैं, तो आप पायेंगे कि आप सिर्फ तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं और अखंडता के साथ समझौता कर रहे हैं। लोकप्रिय बनने से विश्वसनीय बनना कहीं बेहतर है। अततः विश्वास और सम्मान से आमतौर पर प्रेम उत्पन्न होता है।

7 आदतों को जीना हर एक के लिए सतत संघर्ष है। हर व्यक्ति समय-समय पर हर आदत में लड़खड़ाता है और कई बार तो सभी आदतों में ऐसा एक साथ होता है। 7 आदतों को समझना तो आसान है, परंतु उन पर हमेशा अमल करना मुश्किल है। उनमें सहज बुद्धि है, परंतु उन पर अमल करना हमेशा सहज नहीं होता।

व्यक्तिगत रूप से आपको किस आदत पर अमल करने में सबसे ज्यादा मुश्किल होती है?-पाँचवीं आदत। जब मैं सचमुच थका हुआ हूँ और मुझे यह विश्वास होता है कि मैं सही हूँ, तो मैं सचमुच सुनना नहीं चाहता हूँ। हो सकता है मैं सुनने का अभिनय भी करूँ। मूलतः मैं उसी चीज का दोषी होता हूँ, जिसके बारे में मैं बात करता हूँ-समझने के बजाय जवाब देने के इरादे से सुनना। दरअसल कुछ हद तक मैं लगभग हर दिन सभी सात आदतों से संघर्ष करता हूँ। मैं उनमें से किसी को नहीं जीत पाया हूँ। मैं उन्हें जीवन के ऐसे सिद्धांतों के रूप में देखता हूँ, जिनमें हम दरअसल कभी पूरी तरह निपुण नहीं हो पाते हैं। हम उनमें महारत हासिल करने के जितने करीब आते हैं, हम उतने ही ज्यादा जागरूक होते हैं कि हमें अभी सचमुच कितनी दूर और जाना है। यह उसी तरह है कि आप जितना अधिक जानते हैं, उतना ही अधिक आपको यह पता होता है कि आप कितना नहीं जानते।

इसीलिये मैं अक्सर अपने विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को 50 प्रतिशत अंक उनके प्रश्नों की गुणवत्ता के लिए देता था और 50 प्रतिशत उनके सवालों के जवाब की गुणवत्ता के लिए। ज्ञान का उनका सच्चा स्तर इस तरीके से ज्यादा अच्छे ढंग से पता चलता है।

इसी तरह, 7 आदतें ऊर्ध्वमुखी चक्र का प्रतिनिधित्व करती हैं।

पहली आदत का उच्च स्तर इसी आदत के निम्न स्तर से बहुत अलग होता है। हो सकता है, शुरुआती स्तर पर प्रोएक्टिव बनने का अर्थ सिर्फ उद्दीपन और प्रतिक्रिया के बीच के स्थान की जागरूकता होना हो। अगले स्तर पर इसमें विकल्प शामिल हो सकते हैं, जैसे किसी के पीछे न पड़ना या बदला न लेना। अगले स्तर पर, इसमें फीडबैक देना शामिल हो सकता है। इससे अगले स्तर पर इसमें माफी माँगना शामिल हो सकता है। अगले स्तर पर माफ कर देना। इससे अगले स्तर पर माता-पिता को क्षमा करना। इससे भी अगले स्तर पर मृत माता-पिता को क्षमा करना और अगले स्तर पर, किसी भी बात को बुरा न मानना। अति प्रभावकारी लोगों की सात आदतें।

विनय V/S पूजा

(विनय तो अति व्यापक किन्तु पूजादि उसका एक छोटा-सा भाग)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

पूजा-प्रार्थना-आरती-वंदना, विनय के है एक अंश।
'विनय है मोक्षद्वार' मोक्ष विनय, पञ्चविध होते विशेष।।

लोकानुवृत्ति व काम विनय, अर्थ विनय व भय विनय।
नहीं होते है मोक्ष विनय, ये तो संसार वर्द्धक स्वार्थ विनय।। (1)

मोक्ष विनय होता पञ्च प्रकार, जो दर्शन-ज्ञान-चारित्र-तप।
उपचार विनय प्रमुख रूप में, इनके भेद-प्रभेद अनेक विध।।

शंकादि अष्ट दोष रहित व अष्ट अंग, अष्ट गुण सहित है दर्शन विनय।
पञ्च गुरु की भक्ति-पूजा-प्रार्थना, वंदना भी होता दर्शन विनय।। (2)

जिनशासन को यशस्वी बनाना, मिथ्या लाँछन को भी दूर करना।
अवज्ञा भाव को दूर करके, आदर भाव भी उत्पन्न करना।।

ज्ञान व ज्ञानी का आदर-सत्कार, बहुमान व गुणकीर्तन-पूजा।
अष्ट विध शुद्धि सह पञ्च विध स्वाध्याय, होता है ज्ञान विनय दूजा।। (3)

सम्यक् चारित्र व चारित्रधारी, साधु-साध्वियों की भक्ति सेवा करना।
न्यून चारित्रधारियों की निंदा नहीं करना, चारित्र विनय रूप में माना।।

तप व तपस्वी में आदर करना, आवश्यक क्रियाओं को सही पालना।
अंतरंग तप वृद्धि हेतु बहिरंग-तप को यथायोग्य पालन करना।। (4)

इसे कहते हैं तपो विनय, जो स्वर्ग-मोक्ष प्राप्ति के कारण।
उपचार विनय भी करने योग्य, जो आचार्य आदि के बहुमान।।

गुरु के आगमन में खड़े होना, उच्च आसन दान से विनय करना।
बैठने के बाद स्वयं नीचे बैठकर, भक्तिपूर्वक नमस्कार करना।। (5)

गमन समय में पीछे चलना, विनम्र अनुकूल मित प्रिय बोलना।
प्रमोद भाव युक्त (उनके) गुणों में अनुराग, प्रत्यक्ष-परोक्ष में विनय करना।।

परोक्ष में भी गुरु गुण वर्णन करना, आज्ञा पालन व नमस्कार करना।
(तथाहि) उपाध्याय-गणधर-स्थविर-प्रवर्तक-आर्यिका का यथायोग्य करना।। (6)

आहार-औषधि-उपकरण वसतिका, ज्ञान दान कर वैयावृत्ति करना।
उपसर्ग-परीषह दूर करना, नवकोटि से स्वयं करना व कराना।।

विनय है अंतरंग तपस्या बहिरंग तप से बहुगुणित श्रेष्ठ।
असंख्यात गुणित कर्म निर्जरा के कारण, तीर्थंकर पुण्य बंध कारक।। (7)

विनय स्वरूप व विनय फल, पूजा-प्रार्थना से भी अधिक व्यापक।
विनय सहित पूजा करणीय, विनय रहित पूजा न उपकारक।।

केवल स्वार्थ व रूढि-परंपरा से, विनय रिक्त पूजा न हितावह।
'वंदे तद्गुण लब्धये' हेतु विनय युक्त, भाव पूजा करे सूरी 'कनक'।। (8)

ग.पु. कॉलोनी, सागवाड़ा, दिनांक 30.06.2017, रात्रि 10.37

संदर्भ-

हिताहिताप्तिलुप्त्यर्थं तदङ्गानां सदाञ्जसा।
यो माहात्म्योद्भवे यत्नः स मतो विनयः सताम्।। (47) (धर्मा)

हित की प्राप्ति और अहित का छेदन करने के लिए, जो हित की प्राप्ति और

अहित के छेदन करने के उपाय है उन उपायों को सदा छल-कपट रहित भाव से महात्म्य बढ़ाने का प्रयत्न करना, उन उपायों की शक्ति को बढ़ाना, इसे साधुजन विनय कहते हैं।

लोकानुवृतिकामार्थभय निश्रेयसाश्रयः।
विनयः पञ्चधावश्यकार्योऽन्यो निर्जरार्थिभिः।। (48)

लोकानुवृत्ति हेतु विनय, काम हेतु विनय, अर्थ हेतुक विनय, भय हेतुक विनय और मोक्ष हेतुक विनय। व्यवहारी जनों के अनुकूल आचरण करना लोकानुवृत्ति हेतुक विनय है। जिससे सब इन्द्रियाँ प्रसन्न हो उसे काम कहते हैं। जिस विनय का आश्रय काम है वह काम हेतुक विनय है। जिससे सब प्रयोजन सिद्ध होते हैं उसे अर्थ कहते है। अर्थमूलक विनय अर्थ हेतुक विनय है। भय से जो विनय की जाती है वह स्वार्थ हेतुक विनय है और जिस विनय का आश्रय मुमुक्षु लेता है अर्थात् मोक्ष के लिए जो विनय की जाती है वह मोक्ष हेतुक विनय है। अतः जो मुमुक्षु कर्मों की निर्जरा करना चाहते हैं उन्हें मोक्ष हेतुक विनय अवश्य करना चाहिए। पंचपरमेष्ठी की द्रव्य-भाव पूजा, जिनशासन को यशस्वी बनाना, अवज्ञा भाव दूर कर आदर करना, यह सब दर्शन विनय है।

(ज्ञानदान/प्रवचन/शंका-समाधान संबंधी तुलनात्मक शोधपूर्ण कविता)

आहारदान से भी श्रेष्ठ ज्ञानदान की पद्धति (शुद्धि व गुणों से)

(चाल : आत्मशक्ति....., यमुना किनारे....., क्या मिलिये.....)

ज्ञानदान होता निरवद्य दान...सर्वज्ञ गणधर भी करते ज्ञानदान...
आचार्य उपाध्याय भी करते ज्ञानदान...सुपात्र श्रोता/(शिष्य) को करते दान...(स्थायी)...

आहारदानी में यथा चाहिए गुण...उससे भी अधिक ज्ञानदाता में गुण...
श्रोता में भी चाहिए अनेक गुण...विनम्र सत्यग्राही जिज्ञासु गुण...

आहारदाता में नवधा भक्ति चाहिए...सप्त गुणों से युक्त हाना चाहिए...
[1]श्रद्धा [2]भक्ति [3]संतोष [4]विज्ञान [5]शौच/(निर्लोभ)...[6]क्षमा व [7]शक्ति युक्त आहार देय...(1)...

यथायोग्य उक्त सभी भक्ति व गुण...ज्ञानदाताओं को भी अधिक होने योग्य...
अन्यथा अनवद्य न होगा ज्ञानदान...धवला ग्रंथ उक्त पाप रहित ज्ञानदान...

ज्ञानदानी होते प्राज्ञ, सर्व शास्त्रज्ञ...लोकज्ञता से युक्त प्रशमवान...
ख्याति पूजा लाभ लोभ रहित...नवीन-नवीन कल्पना शक्ति सहित...(2)...

शांत गंभीर हितकर वचन युक्त...परनिंदा अपमान कटुता रिक्त...
स्व-पर-विश्व कल्याण भाव सहित...संकीर्ण-कट्टरता अंधश्रद्धा रहित...

गुण-गुणी प्रशंसा अनुमोदना युक्त...श्रेष्ठ ज्ञानी गुरुओं को नमन युक्त...
स्व-पर मतों का भी ज्ञान सहित...तात्कालीन ज्ञान-विज्ञान युक्त...(3)...

सरल-सहज व नम्रता सहित...आत्मानुशासन व मर्यादा सहित...
शील-सदाचार व संयम युक्त...गंभीर शांत व उदारता सहित...

अनेकांतमय प्रज्ञा-सहित...स्याद्वादमय वचन सहित...
आत्मानुभवमय ज्ञान सहित...समतामय चारित्र सहित...(4)...

आत्म उपलब्धिमय परम लक्ष्य...आत्मविशुद्धि हेतु साधनरत...
ऐसे सच्चे गुरु भगवंत ज्ञानदाता...भेद-विज्ञान के वे होते उपदेष्टा...

आहारदान हेतु यदि शुद्धि चाहिए...सप्त गुणों से भी युक्त चाहिए...
निरवद्य महान् ज्ञान के हेतु...शुचिता-गुणवत्ता क्या नहीं चाहिए?!...(5)...

उक्त गुण बिना जो होता ज्ञानदान...वह दान भी नहीं होता महान्...
ऐसे दाता व पात्र न होते महान्...इसका फल भी न होता महान्...

इससे न होती आत्मा की शुद्धि...समता-शांति की न होती संवृद्धि...
संकीर्णता-कट्टरता की होती वृद्धि...संक्लेश-कलह आदि की होती वृद्धि...(6)...

शास्त्र बन जाता शस्त्र के सम...धर्म के नाम पर होता अधर्म...
ख्याति पूजा लाभ व वर्चस्व होते...इह-परलोक दुःखमय भी होते...

ज्ञानामृत पान करना तो विधेय...विष मिश्रित पानी न पीने योग्य...
वक्ता-श्रोता दोनों योग्य विधेय...शुद्ध-बुद्ध-आनंद 'कनक' का ध्येय...(7)...

चितरी, दिनांक 03.08.2017, रात्रि 12.16

संदर्भ-

स्वाध्याय-स्वाध्याय केवल शुद्ध आगम अर्थात् द्रव्य श्रुत का पढ़ना, रटना, स्वाध्याय नहीं है। परंतु द्रव्य श्रुत के माध्यम से भाव श्रुत द्वारा स्व-आत्म द्रव्य का अध्ययन करना, जानना, शोध करना, प्राप्त करना यथार्थ स्वाध्याय है।

प्रज्ञातिशय प्रशस्ताध्यावसायः,

परमसंयमस्तोवृद्धिनिरतिचार विशुद्धि रित्येवमाद्यर्थः।

प्रज्ञा में अतिशय लाने के लिए, अध्यवसाय को प्रशस्त करने के लिए परम संवेग के लिए, तपवृद्धि व अतिचार शुद्धि के लिए संशयोच्छद व परवादियों की शंका का अभाव आदि के लिए स्वाध्याय तप आवश्यक है। (राजवार्तिक)

दव्व सुयादो भावं भावदो होइ सव्व सण्णाणं।

संवेयण वित्ति केवल णाण तदो भणियो।। (1) (नय चक्र)

गाहिओ सोसुदणाणे पच्छा सवेयणेण कायव्वो।

जोणहु सुदमवलंबइ सो मुज्झइ अप्प सब्भावे।। (34) (नय चक्र)

द्रव्य श्रुत से भाव श्रुत होता है। भाव श्रुत के भेद विज्ञान होता है। उससे संवेदन, आत्म संवित्ति और केवलज्ञान होता है।

पहले श्रुतज्ञान के द्वारा आत्मा को ग्रहण करके संवेदय के द्वारा उसका ध्यान करना चाहिए। जो श्रुतज्ञान का अवलंबन नहीं लेता है वह आत्म स्वभाव में मूढ़ रहता है।

जिणवयण मोसहमिणं विसय सुहं विरेयणं अमिद भूयं।

जर मरण वाहि हरणं वय करणं सव्व दुक्खणं।। (दंसण पाहुड)

यह जिनवचन रूप औषधि इन्द्रिय विषय से उत्पन्न सुख को करने वाला है तथा जन्म-मरण रूप रोग को दूर करने के लिए अमृत सदृश है और सर्व दुःखों के क्षय का कारण है। शास्त्रं बदोड़े शांति सैरने निगर्व नीति मेल्वातु मुक्ति स्त्री चित्ते निजात्म चिंतने निलवेलक तंल्लदा शास्त्रदि।।

दुस्त्रीचिंतने दुर्मुखं कलहमुं गर्व मनंगोंडज।

शास्त्रं शस्त्र में शास्त्रिकनला रत्नाकरा धीस्वरा।। (रत्नाकार शतक)

शास्त्र का ज्ञान प्राप्त कर शांति और सहिष्णुता को धारण करना, अहंकार से

रहित होना, धार्मिक बनना, मृदु बातें करना, मोक्ष चिंता तथा स्वात्म चिंता में निरत रहना, श्रेष्ठ कर्त्तव्य है। इसके विपरीत शास्त्रीय ज्ञान प्राप्त कर स्त्रियों की चिंता, क्रोध, मान, माया आदि से विकसित स्पर्धा और अहंकार के उपयोग से शास्त्र शस्त्र बन जाता है और शास्त्रज्ञ भी शस्त्रधारी हो जाते हैं। अभिप्राय यह है कि शास्त्र ज्ञान का उपयोग आत्महित के लिए करना चाहिए।

जिस स्वाध्याय के माध्यम से आत्म तत्त्व का परिज्ञान होता है, हिताहित ज्ञान प्रगट होता है, कषाय इंद्रियों का दमन होता है, संसार शरीर भोगों से वैराग्य होता है, मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति होती है, वात्सल्य, प्रेम, विनय, सरलता, देव, गुरु, शास्त्र के प्रति बहुमान, शांति प्रगट होती है, उसको स्वाध्याय कहते हैं। अन्यथा उसका स्वाध्याय केवल द्रव्य स्वाध्याय है जो मोक्षमार्ग के लिए अकिंचित्कर हैं।

आध्यात्मिक रहस्य को मानना-जानना-आत्मसात् करना ही मुख्य ध्येय है। इसके लिए सरल माध्यम रूपी भाषा चुनना चाहिए। यदि भाषा ही दुरुह हो तो अति गहन आध्यात्मिक विषय का परिज्ञान कैसे होगा? साध्य स्वरूप सत्य-तथ्य, ध्येय, उपादेय, ग्रहणीय को महत्व देना चाहिए न कि केवल साधन स्वरूप भाषा को।

सत्य-तथ्य पूर्ण अमूर्तिक आध्यात्मिक ज्ञान अभूतपूर्व, अभावित, अश्रुत, सूक्ष्म, गहन, गंभीर, विस्तृत, अनंत होने के कारण इसे अधिकांश साधारण व्यक्ति, पढ़े-लिखे व्यक्ति, पंडित, प्रोफेसर, वैज्ञानिक, लेखक, साहित्यकार, यहाँ तक कि रूढ़िवादी; पंथवादी धार्मिक जन से लेकर साधु-संत, आचार्य तक न जानते हैं, न मानते हैं, न अनुभव करते हैं न प्रचार-प्रसार करते हैं। इसलिए आध्यात्मिक ज्ञान दुरुह, दुर्लभ है, इसलिए यह ज्ञान-अनुभव जिसे है वह विश्व में श्रेष्ठ है, ज्येष्ठ है, पूजनीय है, आदर्श है। उस महान् विभूति को प्रायः संसार समझ नहीं पाता है, बहुमान-आदर नहीं दे पाता है, सदुपयोग नहीं कर पाता है। तथापि ऐसे महान् व्यक्ति स्वयं को छोटा नहीं माने या नहीं मानते हैं। वह मानते हैं कि दूसरों में योग्यता नहीं होने के कारण मुझे समझ नहीं पाते हैं। ये मेरी कमियाँ नहीं है परंतु मेरी महानता को समझने की शक्ति दूसरों में नहीं होने से दूसरों की कमियाँ हैं। जैसा कि सूर्य को उल्लू नहीं देख पाता है तो इसमें सूर्य का दोष नहीं है अपितु उल्लू की अयोग्यता है। इसलिए ऐसे ज्ञानी को दूसरों से प्रभावित नहीं होना चाहिए और पंथ-मत, रूढि, लोकरञ्जन,

भीड़ (ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि) के अनुसार भी स्वयं को परिवर्तित नहीं करना चाहिए।

ज्ञान प्राप्ति के विभिन्न उपाय

महान् ज्ञान को प्राप्त करने के योग्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से युक्त शिष्य एवं गुरु की आवश्यकता अनिवार्य है। क्योंकि शिष्य एवं गुरु के अंतरंग तथा बहिरंग संपूर्ण कारणों के सम्यक् समवाय से ही ऐसा महान् बोधि लाभ संभव है। यथा-

सर्व दुःख नाशकारी शिक्षा

दुःखद्विभेषि नितरामभिवाञ्छसि सुखमतोऽहमप्यात्मन्।
दुःखापहारि सुखकरमनुशास्मि तवानुमतमेव।। (2) आत्मानु.

हे आत्मन! तू दुःख से अत्यंत डरता है और सुख की इच्छा करता है, इसलिए मैं भी तेरे लिए अभीष्ट उसी तत्त्व का प्रतिपादन करता हूँ जो कि तेरे दुःख को नष्ट करके सुख को करने वाला है।

यद्यपि कदाचिदस्मिन् विपाकमधुरं तदात्वकटु किंचित्।
त्वं तस्मान्मा भैषीर्यथातुरो भेषजादुग्रात्।। (3)

यद्यपि इस (आत्मानुशासन) में प्रतिपादित किया जाने वाला कुछ सम्यग्दर्शनादि का उपदेश कदाचित् सुनने में अथवा आचरण के समय में थोड़ा सा कडुआ (दुःखदायक) प्रतीत हो सकता है, तो भी वह परिणाम में मधुर (हितकर) ही होगा। इसलिए हे आत्मन! जिस प्रकार रोगी तीक्ष्ण (कडुवी) औषधि से नहीं डरता है उसी प्रकार तू भी उससे डरना नहीं।

जिस प्रकार ज्वर आदि से पीड़ित बुद्धिमान मनुष्य उसको नष्ट करने के लिए चिरायता आदि कडुवी भी औषधि को प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण करता है उसी प्रकार संसार के दुःख से पीड़ित भव्य जीवों को इस उपदेश को सुनकर प्रसन्नता पूर्वक तदनुसार आचरण करना चाहिए। कारण यह कि यद्यपि आचरण के समय वह कुछ कष्टकारक अवश्य दिखेगा तो भी उसका फल मधुर (मोक्ष प्राप्ति) होगा।

हितोपदेशी दुर्लभ

जना धनाश्च वाचालाः सुलभाः स्युर्वुयोत्थिताः।

दुर्लभा ह्यन्तरार्द्रास्ते जगदभ्युज्जिहीर्षवः।। (4)

जिनका उत्थान (उत्पत्ति एवं प्रयत्न) व्यर्थ है ऐसे वाचाल मनुष्य और मेघ दोनों ही सरलता से प्राप्त होते हैं। किन्तु जो भीतर से आर्द्र (दयालु और जल से पूर्ण) होकर जगत् का उद्धार करना चाहते हैं ऐसे वे मनुष्य और मेघ दोनों दुर्लभ हैं।

विशेषार्थ–जो मेघ गजरते तो हैं, किन्तु जलहीन होने से बरसते नहीं हैं, वे सरलता से पाये जाते हैं। परन्तु जो जल से परिपूर्ण होकर वर्षा करने के उन्मुख हैं, वे दुर्लभ ही होते हैं। ठीक इसी प्रकार से जो उपदेशक अर्थहीन अथवा अनर्थकारी उपदेश करते हैं वे तो अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं, किन्तु जो स्वयं मोक्षमार्ग में प्रवृत्त होकर दयार्द्रचित्त होते हुए अन्य उन्मार्गगामी प्राणियों को उससे उद्धार करने वाले सदुपदेश करते हैं वे कठिनता से ही प्राप्त होते हैं। ऐसे ही उपदेशक का प्रयत्न सफल होता है।

हितोपदेशी का स्वरूप

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः।
प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः।।
प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया।
ब्रुयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः।। (5)

जो त्रिकालवर्ती पदार्थों को विषय करने वाली प्रज्ञा से सहित हैं, समस्त शास्त्रों के रहस्य को जान चुके हैं, लोक व्यवहार से परिचित हैं, अर्थ-लाभ और पूजा-प्रतिष्ठा आदि की इच्छा से रहित है, नवीन-नवीन कल्पना की शक्ति रूप अथवा शीघ्र उत्तर देने की योग्यता रूप उत्कृष्ट प्रतिभा से सम्पन्न है, शांत है, प्रश्न करने से पूर्व में ही वैसे प्रश्न के उपस्थित होने की संभावना से उसके उत्तर को देख चुका है, प्रायः अनेक प्रकार के प्रश्नों के उपस्थित होने पर उनको सहन करने वाला है अर्थात् न तो घबराता है और न उत्तेजित्त ही होता है, श्रोताओं पर प्रभाव डालने वाला है, उनके (श्रोताओं के) मन को आकर्षित करने वाला अथवा उनके मनोगत भाव को जानने वाला है, तथा उत्तमोत्तम अनेक गुणों का स्थानभूत है; ऐसा संघ का स्वामी आचार्य दूसरों की निन्दा न करके स्पष्ट एवं मधुर शब्दों में धर्मोपदेश देने का अधिकार होता है।

सच्चे गुरु

श्रुतमविकलं शुद्धाः वृत्तिः परप्रतिबोधने
परिणतिरूरूद्योगोमार्ग प्रवर्तनसद्विधो।
बुधनुतिरनुत्सेकोलोकज्ञतामृदुताऽस्पृहा
यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्येचसोऽस्तुगुरुः सताम्।।

जिसके परिपूर्ण श्रुत है अर्थात् जो समस्त सिद्धांत का जानकर है, जिसका चारित्र अथवा मन, वचन व कार्य की प्रवृत्ति पवित्र है; जो दूसरों को प्रतिबोधित करने में प्रवीण है, मोक्षमार्ग के प्रचार रूप समीचीन कार्य में अतिशय प्रयत्नशील है, जिसकी अन्य विद्वान् स्तुति करते हैं, तथा जो स्वयं भी विशिष्ट विद्वानों की प्रशंसा एवं उन्हें नमस्कारादि करता है, जो अभिमान से रहित है, लोक और लोकमर्यादा का जानकार है, सरल परिणामी है, इस लोक संबंधी इच्छाओं से रहित है, तथा जिसमें और भी आचार्य पद के योग्य गुण विद्यमान है; वही हेयोपादेय-विवेक ज्ञान के अभिलाषी शिष्यों का गुरु हो सकता है।

सच्चे शिष्य

भव्यः किं कुशलं ममेति विमृशन् दुःखाद् भृशं भीतवान्,
सौख्यैषीश्रवणादिबुद्धिविभवः श्रुत्वा विचार्य स्फुटम्।
धर्म शर्मकरं दयागुणमयं युक्त्यागमाभ्यां स्थितं,
गृहन् धर्मकथां श्रुतावधिकृतः शास्यो निरस्ताग्रहः।। (7)

जो भव्य है; मेरे लिए हितकारक मार्ग कौनसा है, इसका विचार करने वाला है; दुःख से अत्यंत डरा हुआ है, यथार्थ सुख का अभिलाषी है, श्रवण आदि रूप बुद्धि वैभव से संपन्न है तथा उपदेश को सुखकारक और उसके विषय में स्पष्टता से विचार करके जो युक्ति व आगम से सिद्ध है ऐसे सुखकारक दयामय धर्म को ग्रहण करने वाला है; ऐसा दुराग्रह से रहित शिष्य धर्मकथा के सुनने में अधिकारी माना गया है।

यहाँ धर्मोपदेश के सुनने का अधिकारी कौन है, इस प्रकार श्रोता के गुणों का विचार करते हुए सबसे पहले यह बतलाया है कि भव्य होना चाहिए। जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र को प्राप्त करके भविष्य में अनंत चतुष्टय स्वरूप से

परिणत होने वाला है वह भव्य कहलाता है। यदि श्रोता इस प्रकार का भव्य नहीं है तो उसे उपदेश देना व्यर्थ ही होगा। कारण कि जिस प्रकार पानी के सींचने से ही मिट्टी गीलेपन को प्राप्त हो सकती है उसी प्रकार पत्थर नहीं हो सकता, अथवा जिस प्रकार नवीन घट के ऊपर जल बिन्दुओं के डालने पर वह उन्हें आत्मसात् कर लेता है उस प्रकार घी आदि से चिक्कणता को प्राप्त हुआ घट उन्हें आत्मसात नहीं कर सकता है- वे इधर-उधर बिखरकर नीचे गिर जाती हैं। ठीक यही स्थिति उस श्रोता की भी है- जिस श्रोता का हृदय सरल है वह सदुपदेश को ग्रहण करके तद्नुसार प्रवृत्ति करने में प्रयत्नशील होता है, किन्तु जिसका हृदय कठोर है उसके ऊपर सदुपयोग का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। अतएव सबसे पहले उसका भव्य होना आवश्यक है। दूसरी विशेषता उसकी यह निर्दिष्ट की गई है कि उसे हिताहित का विवेक होना चाहिए। कारण कि मेरा आत्मकल्याण किस प्रकार से हो सकता है, यह विचार यदि श्रोता के रहता है तब तो वह सदुपदेश को सुनकर तद्नुसार कल्याण मार्ग में चलने के लिए उद्यत हो सकता है। परन्तु यदि उसे आत्महित की चिंता अथवा हित और अहित का विवेक नहीं है तो मोक्ष मार्ग में प्रवृत्त नहीं हो सकेगा। किन्तु जब और जिस प्रकार का प्रतिकूल उपदेश उसे प्राप्त होगा तद्नुसार वह अस्थिर से आचरण करता रहेगा। इस प्रकार से वह दुःखी ही बना रहेगा। इसलिए उसमें आत्महित का विचार और उसके परीक्षण की योग्यता अवश्य होना चाहिए। इसी प्रकार उसे दुःख का भय और सुख की अभिलाषा होना चाहिए, अन्यथा यदि उसे दुःख से किसी प्रकार का भय नहीं है या सुख की अभिलाषा नहीं है तो फिर भला वह दुःख को दूर करने वाले सुख के मार्ग में प्रवृत्त ही क्यों होगा? नहीं होगा। अतएव उसे दुःख से भयभीत और सुखाभिलाषी भी अवश्य होना चाहिए। इसके अतिरिक्त उसमें निम्न प्रकार बुद्धि का वैभव या श्रोता के आठ गुण भी होना चाहिए-

शुश्रुषा श्रवणं चैव ग्रहणं धारणं तथा।
स्मृत्यूहापोहनिर्णीतिः श्रोतुरष्टौ गुणान् विदुः।।

सबसे पहले उसे उपदेश सुनने की उत्कंठा (शुश्रुषा) होनी चाहिए, अन्यथा तद्नुसार आचरण करना तो दूर रहा किन्तु वह उसे रूचिपूर्वक सुनेगा भी नहीं। अथवा शुश्रुषा से अभिप्राय गुरु की सेवा का भी हो सकता है, क्योंकि वह भी ज्ञान

प्राप्ति का साधन है। इसके अनन्तर श्रवण (सुनना), सुने हुए अर्थ को ग्रहण करना, ग्रहण किये हुए अर्थ को हृदय में धारण करना, उसका स्मरण करना (रखना) उसके योग्यायोग्य का युक्तिपूर्वक विचार करना, इस विचार से जो योग्य प्रमाणित हो उसे ग्रहण करके अयोग्य अर्थ को छोड़ना, तथा योग्य तत्त्व के विषय में दृढ़ता से रहना, ये श्रोता के आठ गुण है जो उसमें होने चाहिए। उपर्युक्त गुणों के अतिरिक्त श्रोता में हठाग्रह का अभाव भी होना चाहिए, क्योंकि वह यदि हठाग्रही है तो वह यथावत् वस्तु स्वरूप का विचार नहीं कर सकेगा। कहा भी है-

आग्रहीवत् निनीषति युक्ति तत्र यत्र मतिरस्य निविष्टा।
पक्षपातरहितस्य तु युक्तिर्यत्र तत्र मतिरेति निवेशम्।।

अर्थात् दुराग्रही मनुष्य ने जो पक्ष निश्चित कर रखा है वह युक्ति को उसी ओर ले जाना चाहेगा। किन्तु जो आग्रह से रहित होकर निष्पक्ष दृष्टि से विचार करना चाहता है वह युक्ति का अनुसरण करके उसके ऊपर विचार करता और तद्नुसार वस्तु-स्वरूप को निश्चय करता है। इस प्रकार जिस श्रोता में ये गुण विद्यमान होंगे वह सरूचिपूर्वक धर्मोपदेश को सुन करके तद्नुसार आत्महित के मार्ग में अवश्य प्रवृत्त होगा।

सुखार्थी का कर्त्तव्य

पापद् दुःख धर्मात्सुखमिति सर्वजन सुप्रसिद्धमिदम्।
तस्माद्विहाय पापं चरतु सुखार्थी सदा धर्मम्।। (8)

पाप से दुःख होता है और धर्म से सुख होता है यह बात सब जनों में भले प्रकार प्रसिद्ध है-इसे सब ही जानते हैं। इसलिए जो भव्य प्राणी सुख की अभिलाषा करता है उसे पाप को छोड़कर निरंतर धर्म का आचरण करना चाहिए।

सर्व प्रेप्सति सत्सुखाप्तिमचिरात् सा सर्वकर्मक्षयात्,
सद्वृत्तात् स च तच्च बोधानियतं सोऽप्यागमात् स श्रुतेः।
सा चाप्तात् स च सर्वदोषरहितो रागादयस्तेऽप्यतः,
तं युक्त्या सुविचार्य सर्वसुखदं सन्तः श्रयन्तु श्रिये।। (9)

सब प्राणी शीघ्र ही यथार्थ सुख को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं, वह सुख

की प्राप्ति समस्त कर्मों का क्षय हो जाने पर होती है, वह कर्मों का क्षय भी सम्यक्चारित्र के निमित्त से होता है, वह सम्यक्चारित्र भी सम्यग्ज्ञान के अधीन है, वह सम्यग्ज्ञान भी आगम से प्राप्त होता है, वह आगम भी द्वादशाङ्ग रूप श्रुत के सुनने से होता है, वह द्वादशाङ्ग श्रुत भी आप्त से आविर्भूत होता है, आप्त भी वही हो सकता है जो समस्त दोषों से रहित है तथा वे दोष भी राग-द्वेष रूप है। इसलिये सुख के मूल कारणभूत आप्त का (देव का) युक्ति (परीक्षा) पूर्वक विचार करके सज्जन मनुष्य बाह्य एवं अभ्यंतर लक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए संपूर्ण सुख देने वाले उसी आप्त का आश्रय करें।

यहाँ यह बतलाया है कि क्षुधा-तृषा आदि अठारह दोषों से रहित आप्त की दिव्य ध्वनि को सुनकर गणधरों के द्वारा द्वादशाङ्ग श्रुत की रचना की जाती है। उसको सुनकर आरातिय आचार्य आगम का प्रणयन करते हैं जिससे कि अभ्यास से साधारण प्राणियों को हिताहित का बोध प्राप्त होता है। इस प्रकार जब प्राणी को हिताहित विवेक के साथ वस्तुस्थिति का ज्ञान हो जाता है तब उसका सम्यक्चारित्र (तप-संयमादि) की ओर झुकाव होता है और इससे वह संपूर्ण कर्मों को आत्मा से पृथक् करके शीघ्र ही अविनश्वर निराकुल सुख को प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार परंपरा से इसके मनोरथ की पूर्ति का मूल कारण रागादि दोषों से रहित सर्वदर्शी आप्त ही ठहरता है। अतएव सुखाभिलाषी प्राणियों को ऐसे ही आप्त (प्रामाणिक वक्ता) का स्मरण, चिंतन एवं उपासना आदि करनी चाहिए।

सर्वज्ञ, प्रामाणिक, आप्त से सुनने मात्र से शास्त्रों की पढ़ाई (रीडिंग) मात्र से या विभिन्न इंद्रियों से उसके योग्य विषयों को ग्रहण मात्र से ज्ञान की परिपक्वता की पूर्णता नहीं हो जाती है जैसा कि भोजन निगलकर पेट में पहुँचाने मात्र से उस भोजन से कैलोरी/रस/ऊर्जा प्राप्त नहीं हो जाती है; जब तक की भोजन पचता नहीं है वैसा ही जानकारियाँ/पढ़ाई, सुनना आदि ज्ञान रूप से तब तक परिणमन नहीं कर लेता है; जब तक उसे मनन, चिंतन, अनुप्रेक्षा, परीक्षण, निरीक्षण, ध्यानादि के माध्यम से आत्मसात् करके, अनुभव करके, प्रायोगिक नहीं किया जाता है। सामान्य जानकारियाँ आदि को स्मृति, अनुभव ज्ञान आदि में परिणमन के उपायों का वर्णन निम्नाक्त है-

मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्।। (13)

(पृ. 67 स्व के सत्र)

मति, स्मृति संज्ञा, चिंता और अभिनिबोध इत्यादि अन्य पदार्थ नहीं है अर्थात् मतिज्ञान के ही नामान्तर है। मतिज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम रूप अंतरंग निमित्त से उत्पन्न हुए उपयोग को विषय करने के कारण मतिज्ञान एक है तथापि कुछ विशेष कारणों से उसमें उपरोक्त भेद हो जाते हैं।

1. मति-'मननं मतिः' जो मनन किया जाता है उसे मति कहते हैं। मन और इंद्रिय से वर्तमान काल के पदार्थों का ज्ञान होना मति है।

2. स्मृति-'स्मरणं स्मृति' स्मरण करना स्मृति है। पहले जाने हुए पदार्थों का वर्तमान में स्मरण आने को स्मृति कहते हैं।

3. संज्ञा-'सज्ञानं संज्ञा' वर्तमान में किसी वस्तु को देखकर यह वही है इस प्रकार स्मरण और प्रत्यक्ष के जोड़ रूप ज्ञान को संज्ञा या प्रत्यभिज्ञान कहते हैं।

4. चिन्ता-किन्हीं दो पदार्थों के कार्य-कारण आदि संबंध के ज्ञान को चिंता कहते हैं। इसको तर्क भी कहते हैं। जैसे-अग्नि के बिना धूम नहीं होता है, आत्मा के बिना शरीर व्यापार, वचन व्यापार नहीं हो सकते हैं, पुद्गल के बिना स्पर्श, रस, गंध, वर्ण नहीं हो सकते हैं। इस प्रकार कार्य कारण संबंध का विचार करना चिंता है। संक्षिप्ततः व्याप्ति के ज्ञान को चिंता कहते हैं।

5. अभिनिबोध-एक प्रत्यक्ष पदार्थ को देखकर उससे संबंध रखने वाले अप्रत्यक्ष का बोध-ज्ञान होना अभिनिबोध (अनुमान) है। जैसे-पर्वत पर प्रत्यक्ष धूम्र को देखकर उससे संबंध रखने वाली अप्रत्यक्ष अग्नि का ज्ञान होना। 'इति' शब्द से प्रतिज्ञा, बुद्धि, मेधा आदि को ग्रहण करना चाहिए। दिन या रात्रि में कारण के बिना ही जो स्वतः प्रतिभास हो जाता है वह प्रतिभा है। जैसे प्रातः मुझे इष्ट वस्तु की प्राप्ति होगी या कल मेरा कोई इष्ट संबंधी आयेगा आदि।

अर्थ ग्रहण करने की शक्ति को 'बुद्धि' कहते हैं। पाठ ग्रहण करने की शक्ति का नाम 'मेधा' है। कहा भी हैं आगमाश्रित ज्ञान मति है। बुद्धि तत्कालीन पदार्थ का साक्षात्कार करती है। प्रज्ञा अतीत को तथा मेधा त्रिकालवर्ती पदार्थों का परिज्ञान करती है। नवीन-नवीन उन्मेषशालीनी प्रतिभा है।

अंतर्मंमन से उत्पन्न विचारों का भाव संदेश में छुपी सच्चाई और गहराई को प्रदर्शित करता है। इन दोनों के मिश्रण से सत्यता प्रमाणित होती है। भाषण के बनावटी अंदाज के अभ्यास और अभिनय करने के प्रयास से दर्शकों को खोखलेपन का अहसास होने लगता है। अलग अंदाज या नजाकत से चलने के लिए सरस या फैशन शो का आयोजन किया जाता है। सामान्य तौर पर नजाकत से चलना खलता है। हाथ-पैरों को थिरकाने के लिए नाचने के मंच तैयार किये जाते हैं। बिना वजह हाथ-पैर थिरकाना अच्छा नहीं लगता। बिना किसी मौके नजाकत और दक्षता का प्रदर्शन नहीं करना चाहिए।

याद रखें, यदि आपके जूते, उच्चारण का तरीका और अंदाज लोगों का बेवजह ध्यान खींच रहे हैं तो कोई-न-कोई गड़बड़ जरूर है। यदि भाषण के दौरान वक्ता ने प्रभावशाली भाव प्रकट किये हैं। तो दर्शक जरूर कहेंगे, 'क्या शानदार तरीके से बयान किया है!' 'बात एकदम ठीक है।' ये बिलकुल ठीक कह रहे हैं। मैं इनके विचार का समर्थन करता हूँ।

भाव महत्त्व के मुताबिक होना चाहिए

मँजे हुए कलाकार और वक्ता को पहले से मालूम नहीं होता कि वह किस विचार पर कैसा भाव और अंदाज अपनायेगा। भाषण के दौरान आज प्रस्तुत किये गये भाव अगले भाषण में बिलकुल अलग हो सकते हैं। दरअसल, मँजे हुए कलाकारों और वक्ताओं के भाव दिन के मिजाज पर आधारित होते हैं। इसमें आवेग और बुद्धिमानी की भी अहम भूमिका होती है। 'बुद्धिमानी' शब्द पर विशेष ध्यान दें। प्रकृति भी हर बार एक जैसा सूर्योदय और बर्फ की चादरें नहीं बिछाती। इसी प्रकार एक निपुण वक्ता भी हर बार एक जैसा अंदाज और भाव पेश नहीं करता है।

इसका मतलब यह बिलकुल नहीं है कि अंदाज और भाव के बारे में सोचा ही नहीं जाये। यदि ऐसा होता तो इस अध्याय की आवश्यकता ही क्या होती! जब कमांडर टुकड़ी के किसी जवान की ओर इशारा कर उसे एक कदम आगे आने को कहता है तो कमांडर की मंशा केवल उसी जवान को नसीहत देने की होती है। इसी प्रकार सर्वजन के समक्ष बोलने की कला सीखने वाले व्यक्ति को सभी आवश्यक

प्रतिभाओं का आकलन करते रहना चाहिए। यदि किसी एक प्रतिभा को विकसित करने में ज्यादा कठिनाई हो रही है तो उसे नजरअंदाज नहीं करना चाहिए, बल्कि उसके अभ्यास पर विशेष ध्यान देना चाहिए। भाषण देने की कला से संबंधित सभी सिद्धांतों को याद कीजिये, पहचानिये कि किस मौके पर भाषण में नीरसता, व्यर्थता, भद्दापन जैसे खोट महसूस हो रहे हैं। इन कमियों को दूर करने का निरंतर प्रयास कीजिये। एक कमी दोबारा न दोहराने का प्रयास कीजिये। आत्मचेतन और स्वयं की चेतना को समझना अलग-अलग मुद्दे हैं।

यह वक्ता के विवेक पर आधारित होता है कि भाषण के दौरान स्वाभाविक अंदाज और भाव कैसे विकसित किये जाये और किस प्रकार अभ्यास के लिए समय निकाला जाये। हर असाधारण कलाकार और वक्ता ध्यान से अनुसरण करता है, सीखता है और अभ्यास करता है, साथ ही भाव में स्वाभाविकता लाने के लिए निरंतर जी-तोड़ मेहनत करता है। यह अभ्यास तभी सफल माना जाता है, जब अभिनय करते वक्त भाव स्वाभाविक हो जाये और बोलते वक्त सही उच्चारण के लिए सोचना न पड़े। मंच पर अभिनय करने वाले कलाकार और भाषण देने वाले वक्ता में एक ही भाव को कई तरह से व्यक्त करने का गुण होना चाहिए। दरअसल भावों को व्यक्त करने क भिन्न तरीकों की कोई सीमा नहीं है, इसलिए भाव व्यक्त करने की सूची तैयार करने से अच्छा है, स्वाभाविक रूप से भा पैदा करने की कला का निरंतर अभ्यास किया जाये। इस कला में निपुण होने के लिए निरंतर अभ्यास की भूमिका बेहद महत्वपूर्ण है।

यहाँ एक सावधानी बरतने की जरूरत है। हमने आपको सलाह दी है कि भाषण देते वक्त मुद्रा और अंदाज स्वाभाविक होना चाहिए; लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि खुद का अंदाज विकसित करने पर ध्यान ही न दिया जाये और अभ्यास की महत्ता को नजरअंदाज किया जाये। मजबूत माँसपेशियों वाले हाथ को हल्की कसरतों से लचीला बनाया जा सकता है। शरीर में लचीलेपन से सहज अंदाज विकसित होता है, जबकि जटिल शरीर कड़े व्यक्तित्व का अहसास कराता है। धँसे हुए सीने वाला व्यक्ति कमजोर नजर आता है। इसके विपरीत सुडौल कंधे, बाहर की ओर उभरा सीना और तनी गर्दन वाला व्यक्ति आकर्षक महसूस होता है।

इस प्रकार स्वस्थ शरीर, आत्मविश्वास और लचीलापन प्रभावशाली अंदाज के आधार होते हैं। इन गुणों से भाषण में विविधता आती हैं और विविधता के बिना भाषण को प्रभावशाली नहीं बनाया जा सकता। अब्राहम लिंकन जैसा बड़ा और भद्दा शरीर होने के बावजूद भाषण की कला के शिखर पर पहुँचने वाला वक्ता मामूली इंसान नहीं हो सकता। केवल शुद्ध आत्मा और साफ विचारों वाला व्यक्ति ही इस मुकाम पर पहुँच सकता है। ऐसे कई अपवाद हर क्षेत्र में देखने को मिल जाते हैं। व्यक्तित्व के तेज, गंभीरता, ईमानदारी और विचारों की शुद्धता से दर्शक प्रभावित होते हैं। भद्दे डील-डौल के बावजूद महान् वक्ता बनने के लिए अब्राहम लिंकन जैसे गुणों को विकसित करना पड़ता है।

दर्शकों के समक्ष प्रभावशाली तरीके से पेश आने का अंदाज सीखने के लिए शीशे के सामने खड़े होकर अभ्यास करें; लेकिन इस अभ्यास को एक सीमा तक ही करना चाहिए। चाल में भद्देपन को दूर करने के लिए शीशे के सामने चलकर देखे और कमी को दूर करने की कोशिश करें। मंच पर उसी सामान्य अंदाज से पेश आये, जैसे घर आये मेहमानों के साथ आया जाता है। यदि आपकी शारीरिक रचना प्रभावशाली नहीं है तो नृत्य का अभ्यास कीजिये, व्यायाम कीजिये और बेहतर अंदाज की कल्पना कीजिये।

एक ही मुद्रा में ज्यादा देर तक खड़ा नहीं रहना चाहिए। महान् विचार के साथ शरीर की मुद्रा में भी बदलाव करना चाहिए। भाषण देते वक्त तनाव-मुक्त रहना चाहिए। अंदाज विकसित करने का कोई नियम नहीं है। इसे निजी पसंद और स्वाद के मुताबिक विकसित करना चाहिए। मंच पर भूल जाये कि आपके हाथ भी है। इनका इस्तेमाल केवल जरूरत के वक्त करे, लेकिन प्रभावशाली ढंग से। निःसंदेह, भाषण देते वक्त कुछ समय के लिए हाथों को पीछे की ओर मोड़कर जोड़ लेने या सीने पर रखकर जोड़ लेने से खास फर्क नहीं पड़ता। भाषण में सबसे ज्यादा महत्व विचारों का होता है, हाथ और पैरों की स्थिति से कुछ खास फर्क नहीं पड़ता।

पिछले अभ्यास को एक बार फिर दोहराते हैं। अभ्यास के महत्व को नजरअंदाज न करें। आपका अंदाज और भाव स्वाभाविक होना चाहिए, चाहे अंदाज खुद को गलत ही क्यों न लगे। अंदाज कितना भी अप्राकृतिक क्यों न हो, अभ्यास के जरिये

सुधारा जा सकता है।

अंदाज विकसित किये बिना आकलन नहीं किया जा सकता। झिझक दूर कीजिये, अंदाज विकसित कीजिये और अभ्यास के जरिये कमियों को सुधारिये। महान् कलाकारों और वक्ताओं के अंदाज का अध्ययन कीजिये। प्रकृति के व्यवहार और प्राकृतिक घटनाओं पर ध्यान दीजिये। पेड़ की पत्तियाँ हवा के हल्के से झोंके से भी हिलने लगती हैं। इसी प्रकार चेहरे की माँसपेशियाँ और आँखों की चमक में भाव के साथ बदलाव लाने का अभ्यास कीजिये। एमरसन ने कहा है, 'मैं जिस व्यक्ति से मिलता हूँ, वह मुझे खुद से ज्यादा महान् नजर आता है। इसीलिये मैं उनसे कुछ सीख पाता हूँ।' अतः अपनी आँखें सदा खुली रखनी चाहिए। एमरसन के अनुसार, 'हमारी आँखें सौंदर्य में डूबी रहती हैं, लेकिन इनमें दूरदर्शिता की कमी होती है।' इस पुस्तक को एक तरफ रख दीजिये, बाहर निकलिये और किसी बच्चे की माँ से खाना माँगते हुए देखिये। लोगों को सड़क पर झगड़ते देखिये, गतिमान जीवन को करीब से समझिये। क्या आप जानते हैं कि जीत का भाव कैसा होता है? चुनाव में जीत के बाद हाथ उठाते नेताओं की विजयी मुद्रा को गौर से देखिये। क्या आपने लोगों को भीख माँगते देखा है? भीख माँगते लोगों का संयुक्त चित्र लीजिये और उसका गौर से अध्ययन कीजिये। लोग भीख माँगते, उधार लेते और झूठ बोलते वक्त कैसे भाव प्रस्तुत करते हैं। इन भावों का ध्यान से अध्ययन कीजिये और अभ्यास के द्वारा स्वभाव में शामिल करने की कोशिश कीजिये।

भगवान् की पूजा से एक पक्षीय लाभ किन्तु साधु की सेवा द्विपक्षीय लाभ

(चाल : हे राम!....., आत्मशक्ति से....., क्या मिलिये....., देहाची तिजोरी....., सायोनारा.....)

सच्चिदानंद होते है भगवान्, उनकी पूजा से उन्हें न लाभ।
पूजक को ही मिलते लाभ, ऐसा कहे सर्वज्ञ देव।। (1)

साधक होते साधु अतः, उनकी सेवा से उभय लाभ।
साधु व सेवक दोनों को ही, लाभ मिले कहते जिनेंद्र देव।। (2)

अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्य से, संपन्न होते सर्वज्ञ देव।
क्षुधा तृषा आदि अठारह दोष से, रहित होते सर्वज्ञ देव।। (3)

भय-आशा व स्नेह-लोभ से, विमुक्त होते सर्वज्ञ देव।
अतः उनकी भक्ति पूजा से, उन्हें न होता कुछ लाभ।। (4)

यथा सूर्य को दीपक दिखाने से, न होता सूर्य प्रकाशित।
दीपक तथा सूर्य से प्रकाशित, होते अन्य जन/(सामान)।। (5)

तथाहि भगवान् की पूजा-भक्ति से, लाभान्वित होते भक्तजन।
स्व-स्व शुभ-भाव-व्यवहार से, स्वयं को मिलता है लाभ।। (6)

साधु होते है छद्मस्थ-साधक, होते शरीर व कर्म सहित।
अठारह दोष अभी न हुए सर्व नाश, उन्हें लगती भूख व प्यास।। (7)

उपसर्ग-परिषह होते उन्हें, अतः उन्हें सहना होता कष्ट।
अतः उन्हें चाहिए भोजन-औषधि, चटाई आदि उपकरण।। (8)

अन्यथा उन्हीं की साधना सही, हो पाना होगा अति कठिन।
धर्म से विचलित होना है संभव, हो सकते तन-मनादि रुग्ण।। (9)

अतः जो भक्ति से उनकी सेवा-व्यवस्था करते है भक्त।
वे भी पुण्यार्जन करते साधु, साधना से क्रमशः हो जाते मुक्त।। (10)

धर्मतीर्थ प्रवर्तन करते साधु/(तीर्थंकर) दान-तीर्थ प्रवर्तक है दानी।
धर्मरूपी रथ के दो चक्र हैं, जिससे रथ को मिलती गति।। (11)

साधु ही बनते भगवान् आगे, अतः प्राथमिक भगवान् साधु।
साधु की सेवा अतः जीवन्त धर्म, इस हेतु 'कनक' बनाया काव्य।। (12)

चितरी, दिनांक 08.08.2017, रात्रि 12.02
(यह कविता मणिभद्र (चितरी) के अनुरोध से बनी।)

संदर्भ-

दान

चारित्र्य मोहनीय कर्म के उदय से लोभ कषाय के वशवर्ती होकर श्रावक

संपूर्ण बाह्य परिग्रह का त्याग नहीं कर पाता है, वह गृह में रहकर असि-मषि-कृषि-व्यापारादि आरंभ करके परिग्रह संचय करता है। भोग-उपभोग भी करता है। उससे जो पाप संचय होता है उस पाप को नष्ट करने के लिए, कषायों को क्षीण करने के लिए देवगुरु, शास्त्र की सेवा, संरक्षण के लिए, आत्मविशुद्धि के लिए, सातिशय पुण्य संपादन के लिए और परंपरा से आत्मोत्थ सहज-सरल अतीन्द्रिय सुख के लिए ज्ञानामृत के आस्वादन के लिए (1) आहार (2) औषध (3) शास्त्र (4) अभयदान शक्ति के अनुसार दान देता है। जो यथाशक्ति दान नहीं देता है वह 'दाणं पूजा मुक्खं सावय धम्म ण सावया तेण विणा' इस सूत्र के कारण श्रावक ही नहीं है। पुरुषार्थ सिद्धिउपाय में आध्यात्मिक महर्षि अमृतचन्द्र जी कहते हैं।

गृहमागताय गुणिने मधुकरवृत्या परान्न पीडयते।
वितरति यो नाऽतिथये स कथं नहिं लोभवान भवति।।

जो रत्नत्रय एवं मूल गुणादि से सहित और अन्य पीड़ा नहीं देते हुए मधुमक्खी के समान जो आहार ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार महान् गुण संपन्न महामुनि जब घर पर आते हैं, उनको जो श्रावक आहारदान नहीं देते हैं वह कैसे लोभी नहीं हैं, अर्थात् वह निश्चय से महालोभ कंजूस है।

दिण्णइ सुपत्त दाणं विसेसतो होइ भोग सग्गमही।
णिवाण सुहंकमसो णिद्दिट्ठं जिणवरि देहिं।। (6) (रयणसार)
खेत्तविसेसे काले ववियं सुवीयं फलं जहा विपुलं।
होइ जहा तं जाणइ पत्तविसेसेसु दाणं फलं।। (1)
इह णियसु सुवित्त बीजं जो ववई जिणुत्तसत्तखेत्तेसु।
सो तिहुवण रज्जफलं भुंजदि कल्लाण पंचफलं।।

जो भक्तिपूर्वक, सुपात्र को दान देता है विशेष से उन्हें भोगभूमि स्वर्ग सुख मिलता है और क्रमशः परम निर्वाण सुख की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार स्वयं जिनेन्द्र भगवान् कहे हैं।

जैसे उत्तम खेत में बोया हुआ उत्तम बीज काल विशेष को प्राप्त होकर विपुल फल को देता है उसी प्रकार पात्र विशेष को दिया हुआ बीज स्वरूप अल्प दान भी काल प्राप्त होने पर स्वर्ग मोक्षरूपी विपुल फल को प्राप्त करता है। जो अपने

न्यायपूर्वक उपार्जित धनरूपी बीज को जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित जिनप्रतिमा मंदिर जिनगुरु रूपी सप्त क्षेत्र में बोता है उसको त्रिभुवनरूपी राज्यफल मिलता है एवं पंचकल्याणक धारी तीर्थंकर पद को प्राप्त करता है।

जो मुनि भुत्तवसेसं भुंजइ सो भुंजाए जिणुवदिट्ठ।
संसार सार सोक्खं कमसो णिव्वाण वर सोक्खं।। (11) (रयणसार)

जो भव्य मुनीश्वरों के आहारदान के पश्चात् अवशेष अन्न को भक्तिपूर्वक खाता है वह संसार से सारभूत उत्तम सुख को प्राप्त करता है और क्रमशः निर्वाण सुख भी प्राप्त करता है।

सर्वोवांछति सौख्यमेव तनुचत्तन्मोक्ष एवं स्फूटं।
दृष्टयादित्रय एवं सिद्धयतिस तन्निर्गंथ एवं स्थितम्।। (पदमनंदी पंच...)
तदवर्तिर्वपुरुषोऽस्य वृत्तिरशनात्तद्दीयते श्रावकैःकाले।
क्लिष्ट तरेऽपि मोक्षपदवी प्रायस्ततो वर्तते।। (8)

सब प्राणी सुख की इच्छा करते हैं वह सुख स्पष्टतया मोक्ष में ही है। वह मोक्ष सम्यग्दर्शनादि स्वरूप रत्नत्रय के होने पर ही सिद्ध होता है। वह रत्नत्रय साधु को होता है। उक्त साधु की स्थिति भोजन के निमित्त से होती है और वह भोजन श्रावकों के द्वारा दिया जाता है। इस प्रकार इस अतिशय क्लेश युक्त काल में भी मोक्षमार्ग की प्रवृत्ति प्रायः उन श्रावकों के निमित्त से ही हो रही है।

दानांश

तूर्याशो वा षडंशो वा दशांशो वा निजार्थतः।
दीयते यातु सा शक्तिर्वर्या मध्या कनीयस।। (धर्मरत्नाकार अ. 12)

जो अपने धन में अर्थात् दैनिक आय में से चतुर्थ भाग दान देता है वह उत्कृष्ट दानी है जो षष्टांश दान देता है वह मध्यम दानी है जो दशांश दान देता है वह जघन्य दानी है।

धर्मेस्थैर्यं स्यात्कस्यचिच्चंचलयस्य।
प्रौढ़ं वात्सल्यं बृहणं सद्गुणानाम्।।
दानेन श्लाघा शासनस्यातिगुर्वी।

दातृणामित्थं दर्शनाचारशुद्धि।। ध.रं.

दान देने से किसी चंचल धर्म मार्ग से च्युत होते हुए साधर्मी की उसमें स्थिरता होती है धार्मिकों में प्रौढ़ (अतिशय) वात्सल्य प्रगट होता है। धार्मिकों में सद्गुणों की वृद्धि होती है तथा दान देने से जिनशासन की बड़ी प्रशंसा होती है। इस प्रकार दाता जन के दर्शनाचार की शुद्धि होती है।

औदार्यवर्य पुण्य दक्षिण्यमन्यत्।
समशुद्धो बोधः पातकात्स्याज्जुगुप्सा।।
आख्यातं मुख्यं सिद्धधर्मस्य।
लिंगं लोकभेयस्तद्दातुरेवोपपन्नम्।। (108)

श्रेष्ठ उदारता, पवित्रता, मृदुता या सरलता निर्मलता पाप से ग्लानि तथा लोकप्रियता से अनादि सिद्ध धर्म के चिह्न कहे गये हैं ये सब गुण दाता को ही प्राप्त होता है।

तीर्थोन्नतिः परिणतिश्च परोपकारे।
ज्ञानादि निर्मल गुणावलिकाभिवृद्धिः।।
वित्तादि वस्तुविषये च विनाश बुद्धि।
संवादिता भवति दानवतात्मशुद्धि।। (109)

दान देने से तीर्थ की उन्नति, दाता की परोपकार परिणति (प्रवृत्ति) ज्ञानादि निर्मल गुण समूह की वृद्धि धन आदि वस्तुओं में नश्वरता का विचार और दाता की आत्मशुद्धि भी है।

सीदंति पश्यतां येषां शक्तानामपि साधवः।
न धर्मो लौकिकोऽप्येषां दूरे लोकोत्तराः स्थितः।। (110)

दुःख को दूर करने में समर्थ होकर जो श्रावक साधुजन को कष्ट में देखकर भी उनके दुःख को दूर नहीं करते हैं, उनके लौकिक धर्म भी संभव नहीं है, फिर भला लोकोत्तर धर्म तो उनसे बहुत दूर है। ऐसा समझना चाहिए।

ज्ञानवान ज्ञानदानेन निर्भयोऽभयदानतः।
अन्नदानात्सुखी नित्यं निर्व्याधिर्भेषजाद्भवेत्।।

ज्ञान दान से दानी विशिष्ट क्षायोपशम के माध्यम से मतिश्रुत, अवधि, मनःपर्याय ज्ञानी होता है। श्रुतकेवली होता है एवं शेष में केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष जाता है।

अभयदान से इहलोक-परलोक में निर्भय होता है। अन्नदान से इहलोक-परलोक से सुखी होता है। औषधदान देने से शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक रोग से रहित होकर परम स्वास्थ्य रूप अमृत रूप पद को प्राप्त करता है।

यस्यान्यानैः संतृप्ताः साधवः साधयंत्यमी।
स्वाध्यायादि क्रिया सार्वी तस्य पुण्यं तदुद्भवम्।।

जिस दाता के अन्न पानी से तृप्त हुए मुनिजन आत्म हितकर सब स्वाध्यायादि क्रियाओं को करते हैं, उसमें उत्पन्न हुए पुण्य उस दाता को प्राप्त होता है।

दान अभाव से दोष

सीदंतो यतयो यदण्यनुचितं किंचिज्जलान्नादिकं।
स्वीकुर्वति विशिष्ट भक्ति विकलाः कालादि दोषादहो।।
मालिन्य रचयंति यज्जिनमतस्यास्थानशय्यादिन।
श्राद्धानमिदमेति दूषण पदंशक्तानुपेक्षा कृपाय।। (401)

रोगादि से पीड़ित साधुजन विशिष्ट भक्ति से रहित होते काल आदि के दोष से यदि अपने पद के अयोग्य जल व अन्नादिक का स्वीकार करते हैं तथा अयोग्य वसति व शय्या आदि का ग्रहण करके जिनमत में मलिनता को उत्पन्न करते हैं तो यह दोष शक्ति होने पर भी उपेक्षा करने वाले श्रावक पर आता है। उसे श्रावकों का दोष समझना चाहिए।

दान तीर्थ और धर्म तीर्थ की अपेक्षा तीर्थ दो प्रकार का है। दान तीर्थ के माध्यम से शरीर की रक्षा होती है और शरीर के माध्यम से धर्मपालन होता है।'शरीरमाध्यम खलु धर्मसाधनम्' धर्मपालन से इहलोक में अलौकिक सुख मिलता है। इसलिये श्रावकों को धर्मतीर्थ प्रवर्तन के लिए दान देना चाहिए।

दान पूजादि क्या पापबंध का कारण?

शंका-पूजा दानादिक से आरंभ होने से हिंसा होती है और उससे पापबंध होता है। इसलिये दान पूजादिक नहीं करना चाहिए।

ननुदधिदुग्ध गंधमाल्यादिना भगवतः पूजाभिदाने
पापमप्युपार्ज्यते लेशतः सावद्य सद्भावात् इत्याशंक्याह।

श्री जिनेन्द्र भगवान् की दही-दूध-गंध-फूल-मालादि से पूजा करने से पाप उत्पन्न होता है क्योंकि उस पूजादि से (में) सावद्य है। (पापात्मक आरंभादिक है।)

समाधान-पूजातिशय पूज्य भगवान् आपकी पूजा करने से भव्य जीवों को सातिशय महत् पुण्य उपार्जन होता है। यद्यपि पूजादिक सामग्री लाना, धोना, स्वच्छतादि करने से पाप उत्पन्न होता है तथापि वह पाप इतना कम है कि पूजादि से उत्पन्न पुण्य से उसकी शक्ति नष्ट हो जाती है। वह अपना कार्य करने के लिए अशुभ कर्मफल देने के लिए असमर्थ हो जाता है। जैसे स्पर्शन इन्द्रिय को तृप्त करने वाले ठंडे पानी से भरा समुद्र में एक कण विष पड़ने से उस संपूर्ण समुद्र को वह विष कण दूषित नहीं कर पाता है।

प्रतिकूलमादि कृत्वा विघ्नं कुर्वन्ति धर्मदानस्य।
उपदिशन्ति दुर्बुद्धिं दुर्गतिगमनकारकामशुभाम्।। (563)

यदि स्त्री पुत्र स्वजन आदि अपने प्रतिकूल हो जाते हैं तो फिर वे लोग धर्म स्थानों में दान देने में विघ्न करते हैं तथा नरकादिक दुर्गतियों के कारणभूत और अत्यंत अशुभ दुर्बुद्धि का उपदेश देते हैं।

भावार्थ-प्रतिकूल होने से पुत्रादिक धर्म स्थानों में तो दान का निषेध कर देते हैं और नरकादिक दुर्गतियों में ले जाने वाले दान का वा कार्यों का उपदेश देते हैं।

सो कह सयणो भण्णइ विग्धं जो कुणइ धम्मदाणस्स।
दाऊण पाव वुद्धी पाडइ दुक्खायरे णरए।।
स कथं स्वजनो भण्यते विघ्न यः करोति धर्मदानाय।
दत्वा पापबुद्धिं पातयति दुःखाकरे नरके।। (564)

विचार करने की बात है कि स्वजन होकर भी जो धर्म कार्यों में दिये हुए दान का निषेध करता है और पाप रूप बुद्धि का उपदेश देकर अनेक दुःखों से भरे हुए नरक में डालना चाहता है वह अपना स्वजन कैसे हो सकता है?

भावार्थ-उसे तो पूर्ण शत्रु समझना चाहिए।

सो सयणो सो बंधू सो मित्तो जो सहिज्जओ धम्मे।
जो धम्म विग्घयारी सो सत्तू णत्थि संदेहो।।
स स्वजनः स बंधुः स मित्र यः सहायकः धर्मे।

यो धर्म विघ्नकारी स शत्रुः नास्ति सन्देहः।। (656)

इस संसार में जो पुरुष अपने धर्म का पालन करने में सहायक होता है उसी को स्वजन समझना चाहिए उसी को बंधु समझना चाहिए और उसी को मित्र समझना चाहिए। जो पुरुष धर्म कार्यों में विघ्न करता है धर्म पालन करने में विघ्न करता है वह पुरुष शत्रु ही है इसमें किसी प्रकार का संदेह नहीं है।

ते धण्णा लोयतए तेहिं णिरुद्धाइं कुगई गमणाणि।
वित्तं पत्तं चित्तं पाविवि जाहि दिण्ण दाणाइं।।
ते धन्या लोक त्रये तैः निरुद्धानि कुगति गमनानि।
वित्त पात्रं चित्तं प्राप्यापिः दत्तदानानिः।। (566)

जिन पुरुषों को यथेष्ट धन की प्राप्ति हुई है चित्त में दान देने की बुद्धि प्राप्त हुई है और सुपात्रों का लाभ प्राप्त हुआ है। इन तीनों संयोगों को पाकर जो सुपात्रों को दान देते रहते हैं वे पुरुष तीनों लोकों में धन्य समझे जाते हैं और ऐसे ही लोग नरकादिक दुर्गतियों को सदा के लिए रोक देते हैं।

मुणिभोयणेण दव्वं जस्सगयं जुव्वणं च तवयरणे।
सण्णसेण य जीवं जस्सं गयं किं गयं तस्सा।। (564)
मुनि भोजनेन द्रव्यं यस्य गतं यौवन च तपश्चरणे।
सन्यासेन तु जीवितं यस्य गतं किं गतं तस्य।। (567)

जिस महापुरुष का धन मुनियों के भोजन कराने में चला गया जिसकी युवावस्था तपश्चरण करने में चली गयी और जिसका जीवन संन्यास (समाधिमरण) धारण कर चला गया उसका क्या गया? अर्थात् उसका तो कुछ भी नहीं गया।

भावार्थ-जिसने अपना धन पात्र दान में लगा दिया उसने आगे के जन्म के लिए अनंतगुणी संपत्ति वा स्वर्ग संपदा प्राप्त करने का साधन बना लिया। तपश्चरण करते हुए जिसकी युवावस्था चली गयी उसने उत्तम सुगंधित देवों के शरीर को प्राप्त करने का या मोक्ष प्राप्त करने का साधन बना लिया तथा जिसने समाधिमरण पूर्वक मरण किया उसने अजर-अमर पद प्राप्त करने का साधन बना लिया। इस प्रकार ऐसे जीवों को थोड़ी-सी विभूति के बदले अतुल विभूति प्राप्त होती है।

आगे और भी दान की प्रेरणा करते हैं।

जह जह वड्ढह लच्छी तह तह दाणाइं देह पत्तेसु।
अहवा हीयइ जह जह देइ विसेसेण तह तह यं।।
यथा यथा वर्द्धते लक्ष्मीः तथा तथा दानानि देहि पात्रेषु।
अथवा हीयते यथा यथा देहि विशेषेण तथा तथा एव।। (568)

इसलिये श्रावकों को उचित है कि यह धन जितना-जितना बढ़ता जाये उतना-उतना ही सुपात्रों को अधिक दान देता जाये। यदि कदाचित् धन घटता जाये तो जितना-जितना घटता जाये उतना-उतना ही विशेष रूप से अधिक दान देता जाये।

भावार्थ-लक्ष्मी के बढ़ने पर तो अधिक दान देना स्वाभाविक है। परंतु जब लक्ष्मी घटने लगे तब समझना चाहिए कि यह लक्ष्मी अब तो जा रही है और चली ही जायेगी इसलिये इसको और कामों में क्यों जाने दिया जाये इसको तो सुपात्र दान देने में ही देना चाहिए। यही समझकर लक्ष्मी के घटने पर भी विशेष रीति से सुपात्रों को अधिक दान देना चाहिए।

जिनपूजा और पात्र दान न देने वालों की दुर्गति

जेहि ण दिण्णं दाणं ण चावि पुज्जा किया जिणिंदस्स।
ते हीणदीण दुग्गय भिक्खंण लहंति जायंता।।
ये न दत्तं दानं न चापि पूजा कृतां जिनेद्रस्य।
ते हीन, दीन, दुर्गति, भिक्षा न लभन्ते याचमानाः।। (569)

जो पुरुष न तो कभी भगवान् जिनेंद्र देव की पूजा करते हैं और न कभी सुपात्रों को दान देते हैं वे पुरुष अत्यंत दीन-हीन हो जाते हैं उनकी अवस्था अत्यंत दुर्गति रूप में परिणत हो जाती है और माँगने पर भी उनको भीख नहीं मिलती।

पर पेसणाइं णिच्चं करंति भत्तीए लह य णिय देहं।
पूरंति ण णियय घरे परवस गासेण जीवंति।।
पर पेषणादिकं नित्यं कुर्वन्ति भवत्तया तथा च निजोदरम्।
पूरयन्ति न जिनगृहे पर वशग्रासेन जीवान्ति।। (570)

जिन जीवों ने कभी जिनेंद्र देव की पूजन नहीं की है और न कभी पात्रों को दान दिया है ऐसे जीव भक्तिपूर्वक दूसरों का अन्न पीस-पीसकर अपना पेट भरते है

तो भी उनको पेट भरने योग्य अन्न अपने घर में नहीं मिलता है। वे परवश होकर दूसरों के अन्न के टुकड़ों से ही जीवित रहते हैं।

खंधेण वहंति णरं गासत्थं दीह पथ समासंता।
तं चेव विण्णवंता मुहकय कर विणय संजुत्ता।।
स्कंधेन वहन्ति नरं ग्रासार्थं दीर्घ पथ समासक्ता।
तमेव विनमन्तः मुखकृत कर विनय संयुक्ताः।। (571)

जो पुरुष जिनपूजा और पात्रदान नहीं करते वे जीव परलोक में जाकर अन्न के टुकड़ों के लिए मनुष्यों को अपने कंधों पर रखकर (पालकी डोली पीनस आदि में बिठाकर) बहुत दूर तक ले जाते हैं तथा अपने मुख की दीन आकृति बनाकर और हाथ जोड़कर उसकी बहुत बड़ी विनय करते जाते हैं।

पहु तुम्ह समं जायं कोमल अंण्णाइ सुट्ठु सुहियाइं।
हय मुहू पियाइं काऊं गालंति पाया सहत्थेहिं।।
प्रभो युष्माभिः समं जातानि कोमलांगानि सुष्ठु सुभगानि।
इति मुखप्रियाणि कृत्वा संवहन्ते पादान् स्वहस्ताभ्याम्।। (572)

जिनपूजन और पात्र दान न करने वाले पुरुष परलोक में अपने हाथ से दूसरों के पैर दाबते फिरते है और मुँह से बड़े मधुर शब्दों के द्वारा प्रिय वचन कहते जाते हैं कि हे प्रभो आपके शरीर के अंग बड़े ही कोमल है, बड़े ही श्रेष्ठ है और बहुत ही सुंदर है।

रक्खंति गोगवाइं छेलयखर तुरय छेत्त खलिहाणं।
कुण्णंति कप्पडाइं घडंति पिडउल्लयाइं च।।
रक्षन्ति गोगवादिकं अजाखरतुरग क्षेत्रखलिनान्।
कुर्वन्ति कर्पटादिकं घटन्ते पिढरादिकानि।। (573)

दान-पूजा न करने वाले पुरुष परभव में गाय और भैंस, बकरी, गधा, घोड़ा, खेत-खलिहान आदि की रखवाली करते रहते हैं और कितने ही लोग खाट पीढ़ी आदि बढ़ई के छोटे-छोटे काम किया करते हैं।

धावंति सत्थहत्था उण्हं च गणंति तह य सीयाइं।
तुरय मुह फेण सित्ता रयलित्ता गलियपायेसा।।

धावन्तिशस्त्र हस्ता उष्णं न गणयन्ति तथा च शीतादि।
तुरग मुख फेन सिक्ता रजो लिप्ता गलित प्रस्वेदाः।। (574)

दान-पूजा न करने वाले कितने ही जीव हाथ में शस्त्र लेकर दौड़ते हैं, राजा-महाराजाओं की सवारी के आगे-आगे दौड़ते हैं, उस समय न तो वे धूप व गर्मी को गिनते हैं और न शीत व ठंड को गिनते हैं। उस समय उनका शरीर घोड़ों के मुख से निकलते हुए फेन से भर जाता है, धूल उनके शरीर पर लिपट जाती है और पसीने की धार बंध जाती है।

पिच्छिय पर महिलाओ घणथण मय णयण चंद वयणाइं।
ताडेइ णियंसीसं झूरइ हिययम्मि दीण मुहो।।
प्रेक्ष्य परमहिलाः धनस्तन मदनयन चन्द्रवदानि।
ताडयति निज शीर्षं झूरयति हृदये दीनमुखाः।। (575)
पर संपया णिएऊं पणमइ हा किं मया ण दिण्णाइं।
दाणाइं पर पत्ते उत्तम भत्ती य जुत्तण।।
पर सम्पदः दुष्टवा प्रणमति हाकिं मया न दत्तानि।
दानानि प्रवर पात्रे उत्तम भक्त्या युक्तेन।। (576)

जिनपूजन और पात्र दान न देने वाले पुरुष परभव में जाकर इतने दीन-दुःखी होते हैं कि वे लोग जिनके स्तन अत्यंत कठिन है जिनके नेत्रों में मद छाया हुआ है और चंद्रमा के समान जिनका सुंदर मुख है ऐसी पर स्त्रियों को देखकर अपने मस्तक को धुना करते हैं और दीनमुख होकर अपने हृदय में रोया करते हैं। इसके सिवाय दूसरों की संपत्ति को देखकर वे लोग रो-रोकर कहते हैं कि हाय-हाय क्या हमने पहले भव में उत्तम भक्तिपूर्वक उत्तम पात्रों को दान नहीं दिया था। यदि पहले भव में हमने भी पात्र दान दिया होता तो हमें भी ऐसी संपत्तियाँ अवश्य प्राप्त होती।

एवं णाऊण फुडं लोहो उवसामिऊण णियचित्ते।
णिय वित्ताणुस्सारं दिज्जइ दाणं सुपत्तेसु।।
एवं ज्ञात्वा स्फुटं उपशम्य निज चित्ते।
निज वित्तानुसारं देहि दानं सुपात्रेषु।। (577)

इस प्रकार पात्र दान के फल को जानकर और पात्र दान न देने के फल को

जानकर अपने हृदय में लोभ को दबाना चाहिए, लोभ नहीं करना चाहिए और अपने धन-संपत्ति के अनुसार सुपात्रों को अवश्य दान देना चाहिए।

कमाये हुए द्रव्य को किस प्रकार खर्च करना

जं उप्पज्जइ दव्वं तं कायव्वं च बुद्धिवंत्तेण।
छहणायगयं सव्वं पढमो भावो हि धम्मस्स।।
यदुत्पाद्यते द्रव्यं तत्कर्तव्यं च बुद्धिमता।
षड्भागगतं सर्व प्रथमो भागो हि धर्मस्य।। (578)

बुद्धिमान गृहस्थों को उचित है कि वे जितना धन उत्पन्न करे उसके छह भाग करें। उसमें से पहला भाग धर्म के लिए निकाल दें।

वीओ भावो गेहे दायव्वो कुडंव पोसणत्थेण।
तइओ भावो भोए चउत्थओ सयण वग्गम्मि।।
द्वितीयो भागो गृहे दातव्यः कुटुम्ब पोषणार्थम्।
तृतीयो भागो भोगे चतुर्थः स्वजन वर्गे।। (579)

दूसरा भाग अपने कुटुम्ब के भरण-पोषण के लिए अपने घर वालों को देना चाहिए। तीसरा भाग अपने भोगों के लिए रखना चाहिए और चौथा भाग अपने स्वजन परिवार के लिए रखना चाहिए।

सेसा जे वे भावा ठायव्वा होंति ते वि पुरिसेण।
पूजा महिमा कज्जे अहवा कालावकालस्स।।
शेषौ यौ द्वौ भागौ स्थपनीयौ भवतः तावपि पुरुषेण।
पूजामहिमा कार्ये अथवा कालापकालाय।। (580)

इस प्रकार ऊपर लिखे अनुसार चार भाग तो काम में लाने चाहिए और शेष बचे हुए दो भाग उस पुरुष को जमा रखना चाहिए। वे बचे हुए दोनों भाग भगवान् जिनेन्द्र की विशेष पूजा करने में लगाना चाहिए अथवा किसी प्रभावना के कार्य में धर्म की महिमा बढ़ाने के कार्य में लगाना चाहिए अथवा वे बचे हुए दोनों भाग किसी आपत्तिकाल के लिए रख छोड़ना चाहिए।

सम्यग्दर्शन घातक व्यक्ति

जिनाभिषेके जिनवै प्रतिष्ठा जिनालये जैन सुपात्रतायाम्।
सावद्यलेशोवदतेस पापोंस निन्दकोदर्शनघातकश्च।। (सार-संग्रह)

जो व्यक्ति जिनेन्द्र भगवान् का अभिषेक, चैत्य-चैत्यालय निर्माण-प्रतिष्ठा एवं सुपात्र दान में पाप होता है, ऐसा जो प्रतिपादन करता है वह जिनधर्म का निंदक है, सम्यग्दर्शन का घातक है। उपरोक्त क्रियाओं में कुछ आरंभादि कारणों से अत्यंत कम पापबंध होता है परंतु उससे अत्यंत आत्मविशुद्धि होती है, सम्यग्दर्शन की निर्मलता बढ़ती है, सातिशय पुण्य बंध होता है जो कि परंपरा से मोक्ष का कारण है। इस महाफल के आगे जघन्य पाप निष्फल हो जाता है।

अशुभ भाव

हिसंइसु कोहाइसु मिच्छा णाणेसु पक्खवाएसु।
मिच्छारिएसु मएसु दुरहिवेससु असुहलेसेसु।। (62)
विकहाइसु सद्दहज्झाणेसु असुहगेसु दंडसु।
सल्लेसु गारवेसु य जो वट्ठइ असुह भावे सो।। (रयणासार गा.)

हिंसादिक में, क्रोधादि में, मिथ्याज्ञान में, पक्षपात में, मत्सर भाव में, मद में, मिथ्याभिप्रायमत में, अशुभ लेश्या में, विकथा में, आर्त्त-रौद्र ध्यान में, अशुभ कारण दण्ड में, मिथ्या माया-निदानशल्य में, चार प्रकार के मद में जो प्रवर्तमान होता है, उसे अशुभ भाव कहते हैं। इन्हीं अशुभ भावों से पाप का आस्रव होता है।

दुःखं शोको वधस्तापः क्रन्दनं परिवेदनं।
परात्म द्वितीयस्थानि तथा च परपैशुन।।
छेदनं भेदनं चैव ताडनं दमनं तथा।
तर्जनं भर्त्सनं चैवं सद्यो विशसनं तथा।।
पापकर्मोपजीवित्वं वक्रशीलत्वमेव च।
शस्त्रप्रदानं विश्रम्भं धातनं विष मिश्रणं।
श्रृंखला वागुरा पाश रज्जुजालादि सर्जनं।
धर्म विध्वसंनं धर्मप्रत्येहकरणं तथा।।

तपस्वी गर्हणं शीलं व्रतप्रच्यावनं तथा।

इत्यसदवेदनीययस्य भवन्त्या स्त्रव हेतवः।। (तत्त्वसार अध्याय 4)

अर्थ-दुःख अनिष्ट संयोग होने पर दुःख करना।

शोक-इष्ट वियोग होने पर दुःख करना।

वध-प्राणों का वध करना।

ताप-लोक निंदादि के होने पर संताप करना।

क्रंदन-अश्रुपात करते हुए रुदन करना।

परिवेदन-दूसरों को दया उत्पन्न हो ऐसा जोर-जोर से रोना। जिससे देखकर दूसरा भी रोने लगे।

परपैशुन-दुर्भावना से दूसरों पर दोषारोपण करना।

छेदन-शरीर के अवयवों का छेदन करना। जैसे-बैलों का नाक छेदनादि।

ताड़न-लाठी से मारना।

दमन-दूसरों को भय दिखाना।

तर्जन-दूसरों को दुःख देना।

भर्त्सना-कठोर अभद्र वचनों से दूसरों की निंदा करना।

सद्यो विशंसन-छल कपटपूर्वक दूसरों को धोखा देना।

हिंसादि पापकर्म से आजीविका चलाना, कुटिल भाव-मायाचार में प्रवृत्ति, हिंसाजनक शस्त्र दूसरों को काम में देना, विश्वासघात करना, स्वतः दूसरों को विषादि सेवन करके-कराके मरण को प्राप्त होना या दूसरों को प्राप्त कराना। पशु-पक्षियों को बंधन में डालना, तपस्वी-साधुओं की निंदा करना, झूठे अपवाद लगाना। व्रत नियमों का भंग करना और दूसरे धर्मात्मा पुरुषों को भी व्रत, नियम, संयमादि शुभ-क्रियाओं को करने नहीं देना। इसी प्रकार अनेक धर्मनीति विरुद्ध कार्य करना यह सब असातावेदनीय कर्मबंध के कारण हैं।

सचित्त विरत प्रतिमा पाँचवीं प्रतिमा है। इस प्रतिमा में श्रावक सचित्त भोजन नहीं करता है परन्तु इसके पहले-पहले के प्रतिमा धारी भी सचित्त भोजन कर सकते हैं। यह सचित्त विरत प्रतिमा धारी फलादि को अचित्त करके भोजन करता है यथा-

भक्षणेऽत्र सचितस्य नियमो न तु स्पर्शने।

तत्स्वहस्तादिना कृत्वा प्रासुकं चात्र भोजयेत्।। (17) लां.सां.

सचित्त प्रतिमा में सचित्त के भक्षण न करने का नियम है, सचित्त को स्पर्शन करने का नियम नहीं है। इसीलिये अपने हाथ से उसे प्रासुक करके भोजन में ले सकता है।

यदि पहली प्रतिमा से चौथी प्रतिमा तक पंचम गुणस्थानवर्ती श्रावक भी सचित्त भोजन कर सकता है और पंचम प्रतिमाधारी सचित्त को अचित्त करके भोजन कर सकता है तब क्या वह धार्मिक कार्यों में आनुषंगिक रूप में जो स्थावर जीवों की हिंसा हो जाती है उसके भय से उन धार्मिक क्रियाओं को छोड़ सकता है? यदि केवल फल-पुष्पों के लिए हठग्राहिता है तो अभिषेक के लिए आहारदान के लिए जल को अचित्त करके प्रयोग में भी नहीं ले सकता है क्योंकि इनमें भी तो सचित्त जल को अचित्त किया जाता है।

श्रावक संकल्पपूर्वक त्रस जीवों की हिंसा का त्यागी है। अप्रयोजनभूत अनावश्यक एकेन्द्रिय जीव की भी विराधना नहीं करता है परन्तु गृहस्थ कार्यों से स्थावर जीवों के साथ आरंभी उद्योगी विरोधी रूप त्रस जीवों की भी हिंसा हो जाती है। यदि गृहस्थ कार्यों के लिए त्रस तथा स्थावर जीवों की हिंसा तक हो जाती है तब धर्म के लिए आनुषंगिक स्थावर हिंसा अतिग्रहीत नहीं है। जो कुछ हिंसा होती है वह हिंसा भी संकल्पपूर्वक या दूषित भाव से नहीं की जाती है। इसीलिये तो समंतभद्र स्वामी ने कहा है कि-

दही, दूध, गंध, पुष्प मालादि से पूजा करने पर जो पाप होता है वह पाप पुण्य के अनुपात से बहुत ही कम होने पर सावद्य/पापकारक नहीं है।

यथा-ननु दधिदुग्धगन्धमाल्यादिना भगवतः पूजाभिधाने पापमप्युपार्ज्यते लेशतः सावद्य सद्भावादित्याशंक्याहः।

पूज्यं जिनं त्वार्चयतो जनस्य सावद्यलेशो बहुपुण्यराशौ।

दोषाय नालं कणिका विषस्य न दूषिका शीतशिवाम्बुराशे। (3)

(स्वयंभूस्तोत्र पृ. 71)

पूज्यमित्यादि-पूज्यमाराध्यं जिनमर्हन्तं त्वा त्वां वासुपूज्यं अर्चयतः पूजयतः

जनस्य भव्यप्राणिगणस्य सावद्यलेशः अवद्यं पापं सह अवद्येन वर्तते इति सावद्यं कर्मः। तस्य लेशो लवः पूजां कुर्वतो यः संपन्नः स दोषाय पुण्योपार्जन प्रवृत्तदोषः पापोपार्जन तस्मै न अलं न समर्थो भवति, कस्मिन्? बहुपुण्यराशौ प्रचुरपुण्यपुञ्जे तेनोपहतशक्तित्वास्तस्य। केवेत्याहकणिका मात्रालवो विषस्य न दूषिका न मारणात्मकविषधर्म संपादिका। क्व? शीतशिवाम्बुराशे शीतं च शीतलं च स्पर्शनेन्द्रिय प्रल्हादकरं तश्च तदम्बु च जलं तस्य राशिः संधातो यत्रासौ शीतशिबाम्बुराशिः समुद्रस्तस्मिन्।

हे नाथ! पूजा की सामग्री जुटाते समय आरंभादि के कारण पूजा करने वाले मनुष्य के जो अल्पतम द्रव्य हिंसा होती है तथा सराग परिणति के कारण अल्पतम भाव हिंसा होती है उससे पूजा करने वाले का कुछ अहित नहीं होता क्योंकि वीतराग जिनेन्द्र की पूजा करने से जो विशाल पुण्य उत्पन्न होता है उसके समक्ष वह अल्पतम हिंसा नगण्य होती है ठीक उसी तरह जिस तरह कि शीतल और आनंददायी जल के समुद्र में विष की एक कणिका।

जिस प्रकार आहारदान करने में पानी छानना, गर्म करना, आग जलाना, फल बनाना, बर्तन साफ करना, चौका साफ करना, वस्त्र धोना, स्नान करना आदि से त्रस स्थावरों की भी हिंसा हो जाती है तथापि यह पाप उद्देश्यपूर्वक नहीं किया जाता है परन्तु उद्देश्य महान् एवं पवित्र होने के कारण आहारदान में जो पाप होता है वह दोषकारक नहीं है, क्योंकि आहारदान में गुरु के प्रति अनुराग होता है, पुण्यबंध होता है पाप की निर्जरा होती है, परम्परा से स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होती है इसी प्रकार अभिषेक पूजा तीर्थयात्रा आदि से जानना चाहिए।

चावल में यदि पुष्प फलादि की स्थापना करके ही काम लिया जाय तब उसमें भी उपरोक्त गुणों के साथ-साथ दोष भी है। जहाँ पर जिस स्थान में पुष्प-फलादि नहीं है, वहाँ पर उसकी स्थापना तंदुल में करके पूजा में प्रयोग करना चाहिए। जहाँ पर और जब आगमोक्त शुद्ध पुष्प-फलादि है तो उसका भी प्रयोग विवेकपूर्वक करना चाहिए, ऐसा आगम में वर्णन पाया जाता है। यदि पुष्पादि में दोष है तो स्थापित पुष्पादि में भी दोष लगेगा। जिस प्रकार यशोधर के द्वारा आटे के मुर्गे की बलि चढ़ाने से उसको उसके पाप से अनेक भव तक अनेक यातनाएँ सहन करनी पड़ी। इसी प्रकार पुष्प, फलादि चढ़ाने में दोष मानने पर स्थापित पुष्प फलादि के चढ़ाने में भी उतना ही दोष

लगेगा और एक विचारणीय विषय है कि साक्षात् अर्हंत भगवान् है उनकी तो पूजा नहीं करते और मूर्ति में स्थापित अर्हंत भगवान् की ही पूजा करते हैं तो यह उचित एवं विवेकपूर्ण कार्य नहीं है। इसी प्रकार यथार्थ आगमोक्त प्रासुक शुद्ध अष्ट द्रव्य है उससे श्रावक पूजा न करके स्थापित अष्ट द्रव्य से पूजा करता है तो यह भी असम्यक् है। शक्ति एवं उपलब्धि होते हुए भी यदि चावल में स्थापित पुष्पगिरी में स्थापित दीपक एवं नैवेद्य से पूजा करते है तो इससे मायाचारी एवं झूठ का भी दोष लगता है। इतना ही नहीं आगम को नहीं मानने पर आगम का भी अपलाप होता है, आज्ञा सम्यक्त्व में भी दोष लगता है।

कुछ लोग आगम को जानते हैं और मानते भी हैं तथापि स्थानीय परंपरा या मंदिर परंपरा के कारण आगमोक्त पद्धति से अभिषेक, पूजा आदि नहीं कर पाते हैं। कुछ व्यक्ति अपने ग्राम में परंपरा के कारण आगमोक्त पूजा आदि नहीं कर पाते हैं परन्तु बाहर कहीं जाकर यदि आगमोक्त पद्धति से पूजादि होती है तो वहाँ जाकर कर लेते हैं।

अनंत ज्ञान-ज्ञेय V/S अनंत अज्ञान-अज्ञानी

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

अनंत है ज्ञान अनंत ज्ञेय, अनंत है कर्म अनंत अज्ञान।
सर्वज्ञ ही जानते हैं संपूर्ण ज्ञेय, अन्य कोई न जानते संपूर्ण ज्ञेय।। (1)

द्रव्य है षट् प्रकार अनंत गुणमय, हर गुण में ही होती अनंत पर्यायें।
सप्त-तत्त्व नव-पदार्थ लोक-अलोक, इन सबको जानते केवल सर्वज्ञ।। (2)

हर जीव में होते असंख्य प्रदेश, हर प्रदेशों में बंधे कर्म भी अनंत।
भाव-व्यवहार कर्मनुसार भी होते, कर्मों से रहित शुद्ध-बुद्ध भी होते।। (3)

तीव्र कर्म से परतंत्र जीव जो होते, उनके भाव-व्यवहार अनियंत्रित ही होते।
क्रोध, मान, माया, लोभ के आधीन होते, ईर्ष्या, तृष्णा, घृणा के गुलाम होते।। (4)

स्व-पर अहितकर भाव-व्यवहार करते, मन-वचन-काय से अयोग्य करते।
अस्त-व्यस्त-संत्रस्त जीवन जीते, हिताहित विवेक से रहित होते।। (5)

(ऐसा) एक जीव के अज्ञान होता अनंत, मुक्त जीव के ज्ञान होता अनंत।
(कर्माधीन) हर जीव के ज्ञान होते विभिन्न, अनंत मुक्त जीवों के ज्ञान (होते) एक समान।। (6)
सर्वज्ञ तो अनंत अज्ञानी को जानते, अनंत अज्ञानी एक सर्वज्ञ को न जानते।
एक दृष्टिवान लाखों वस्तु देखता, लाखों अंधे भी एक वस्तु न देखते।। (7)
ऐसी है विचित्र परिणति जीवों की, संसार में एक सम दशा न कभी भी।
समता भाव ही अतः होता है श्रेष्ठ, सर्वज्ञ बनना ही 'कनकनंदी' का लक्ष्य।। (8)

चितरी, दिनांक 20.07.2017, रात्रि 11.46

पंडित और मशालची, दोनों सुझे नाहीं।
औरन को करे चाँदना, आप अंधेरे माहीं।।

संदर्भ-

सत्य से विपरीत मान्यता श्रद्धा/प्रतीति विश्वास रूप परिणाम व भावों को मोह/मिथ्यात्व कहते हैं। सत्य का पूर्ण साक्षात्कार सर्वज्ञ वीतरागी देव करते हैं। सर्वज्ञ भगवान् ने दिव्य ध्वनि मूलक उस परम सत्य का प्रमाण, नय, निक्षेपों के द्वारा प्रतिपादन किया है, उनके द्वारा प्रतिपादित सत्य अर्थात् जो उनके द्वारा कहे हुए द्रव्य, तत्त्व पदार्थों में विश्वास नहीं करता, श्रद्धा नहीं करता वह मिथ्यादृष्टि है क्योंकि उसकी श्रद्धारूप दृष्टि विपरीत होने के कारण वह पदार्थ को भी विपरीत रूप श्रद्धान करता है। सिद्धांत चक्रवर्ती नेमीचन्द्र आचार्य गोम्मट्टसार में कहते हैं-

मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं च ण सद्दहदि।
सद्दहदि असब्भावं उवइट्ठं वा अणुवइः।। (18) (गो. सार)

The wrong-believing soul does not believe in the nobel doctrine preached (By the conquerons) and believes in the nature of things as it really is not whether it be preached or not by (the teaching or description of any one).

मिथ्यादृष्टि जीव 'उपदिष्ट' अर्थात् अर्हंत आदि के द्वारा कहे गये, 'प्रवचन' अर्थात् आप्त आगम और पदार्थ ये तीन इनका श्रद्धान नहीं करता है। प्रवचन अर्थात् जिसका वचन प्रकृष्ट है ऐसा आप्त, प्रकृष्ट का वचन प्रवचन अर्थात् परमागम। प्रकृष्ट

रूप से जो कहा जाता है वह प्रवचन अर्थात् पदार्थ। इन निरूक्तियों से प्रवचन शब्द से आप्त, आगम और पदार्थ तीनों कहे जाते है तथा वह मिथ्यादृष्टि असद्भाव अर्थात् मिथ्या रूप प्रवचन यानी आप्त आगम पदार्थ का 'उपदिष्ट' अर्थात् आप्ताभासों के द्वारा कथित अथवा अकथित का भी श्रद्धान करता है।

पदमक्खरं च एक्कं पि जो ण रोचेदि सुत्त णिद्दिट्ठं।
सेसं रोचंतो वि हु मिच्छादिट्ठी मुणेयव्वा।। (39) (भगवती आराधना)

श्रुत में कहा गया है कि एक पद का अर्थ अथवा एक अक्षर का भी अर्थ जो प्रमाणभूत मानकर श्रद्धा नहीं करता है वह बाकी के श्रुतार्थ को या अश्रुतांश को प्रमाण जानता हुआ भी मिथ्यादृष्टि ही है। बड़े पात्र में रखे हुए बहुत दूध को भी छोटी से विषकणिका बिगाड़ती है। इसी तरह अंधश्रद्धा का छोटा सा अंश भी आत्मा को मलिन करता है।

मदि सुदणाण बलेण दु सच्छंदं बोल्लेदे जिणुवदिट्ठं।
जो सो होदि कुदिट्ठी ण होदि जिण मग्ग लग्गरवो।। (2) (रयणसार कुंदकुंदाचार्य)

जो मतिज्ञान श्रुतज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से प्राप्त हुए मतिज्ञान-श्रुतज्ञान के कारण उद्धत होकर स्वयं के मनमाने ज्ञान के द्वारा अपने मत अर्थात् पक्ष को लेकर स्वच्छंद होकर कपोल कल्पित मत का प्रतिपादन करते हैं, जिनवाणी को नहीं मानते हैं वे मिथ्यादृष्टि अज्ञानी जिनधर्म से बाह्य हैं। यदि जिनागम को दिखाने पर यथार्थ वस्तु का श्रद्धान करने लगता है और पूर्व कल्पित मत-पक्ष का त्याग करता है तब वह सम्यग्दृष्टि बन जाता है अन्यथा मिथ्यादृष्टि रहता है।

मिच्छत्तं वेदंतो जीवो विवरीय दंसणो होदि।
ण य धम्मं रोचेदि हु महुरं खु रसं जहा जरिदो।। (17)

उदय में आये मिथ्यात्व का वेदन अर्थात् अनुभवन करने वाला जीव विपरीत दर्शन अर्थात् अतत्त्व श्रद्धा से युक्त होता है। वह न केवल अतत्त्व की ही श्रद्धा करता है, अपितु अनेकान्तात्मक, धर्म, वस्तु स्वभाव, मोक्ष के कारणभूत रत्नत्रयात्मक धर्म को भी पसंद नहीं करता।

दृष्टांत-पित्त ज्वर से ग्रस्त व्यक्ति मीठे-दूध रसादि को पसंद नहीं करता, उसी तरह मिथ्यादृष्टि को धर्म नहीं रुचता है।

इंदिय विसय सुहादिसु मूढमदी रमदि न लहदि तत्त्वं।

बहुदुक्खमिदि ण चिंतदि सो चेव हवदि बहिरप्पा।। (29) (रयणसार)

जो मूढ़मति इन्द्रिय जनित सुख में रमण करता हुआ उसको सुख मानता है, बहु दुःखप्रद नहीं मानता है, वह आत्म तत्त्व को प्राप्त नहीं कर सकता है, वह बहिरात्मा मिथ्यादृष्टि है।

पूर्व संचित मिथ्यात्व कर्म के उदय से जो स्वयंमेव विपरीत भाव होता है उसे निसर्ग व अगृहीत मिथ्यात्व कहते हैं, जो कुगुरु के उपदेश से विपरीत भाव होते है उसे अधिगमज व गृहीत मिथ्यात्व कहते हैं। मिथ्यात्व के कारण जीव अवस्तु में वस्तुभाव, अधर्म में धर्मभाव, कुगुरु में गुरुभाव, कुशास्त्र में सुशास्त्र भाव को धारण करता है। बहिरात्मा केवल शरीर पोषण करता है, अतीन्द्रिय आत्मोत्थ सुख से बहिर्मुख होकर विषय सुख में ही लीन रहता है। बाह्य-भौतिक हानि वृद्धि में अपनी हानि-वृद्धि मानकर सुखी-दुःखी होता है। सामान्य से मिथ्यात्व एक प्रकार होते हुए भी विशेष अपेक्षा अर्थात् द्रव्य-भाव से दो प्रकार, एकांत, विपरीत, संशय, विनय, अज्ञान की अपेक्षा पाँच प्रकार भी होता है। इसमें सांख्य चार्वाक मत मिलाने से 7 प्रकार का मिथ्यात्व होता है। विशेष रूप से क्रियावादियों के 180, अक्रियावादियों के 84, अज्ञानवादी के 67 और वैयनिकवादियों के 32 इस प्रकार मिथ्यावादियों के 363 भेद होते हैं।

कोई एकांत से काल, ईश्वर, आत्मा नियति और स्वभाव स्वतंत्र-स्वतंत्र रूप से कर्त्ता मानते हैं।

कुछ मिथ्यावादियों का स्वरूप

एकांतकालवादी-काल ही सबको उत्पन्न करता है, काल ही सबका नाश करता है, सोते हुए प्राणियों को काल ही जगाता है, सो ऐसे काल को ठगने में कौन समर्थ हो सकता है? इस प्रकार काल से ही सब कार्य मानना, कालवाद कहलाता है।

एकांत नियतिवादी-जो जिस समय जिससे जैसा जिसको नियम से होना है वह उस समय उससे वैसे उसके ही होता है ऐसा नियम से सभी वस्तु को मानना नियतिवाद कहलाता है।

किसी भी कार्य के लिए पाँच कारणों की आवश्यकता-इसी प्रकार कोई मिथ्यावादी एक-एक कारण से कार्य उत्पत्ति को मानते हैं परंतु प्रत्येक कार्य सम्यक् अंतरंग-बहिरंग भावों से सद्भाव से एवं विरोधी कारणों के अभाव से होता है।

कालो सहा व णियइ पुव्वकयं पुरिस कारणेगंता।
मिच्छंतं ते चेव उ समासओ होंति सम्मत्त।। (53) (सन्मतिसूत्र)

प्रत्येक कार्य के लिए (1) काल (2) स्वभाव (3) नियति (4) पूर्वकृत (5) पुरुषार्थ। इन पाँचों कारणों का सम्यक् समन्वय चाहिए और प्रत्येक कार्य के लिए पाँचों को मानना सम्यक्त्व है। एक-एक को कार्योत्पत्ति में कारण मानना मिथ्यात्व है। काल रूपी कारण केवल बाह्य उदासीन कारण है, उपादान अथवा प्रेरक कारण नहीं है।

यदि काल को ही संपूर्ण कार्यों का कर्त्ता मानेंगे तब क़ाल को ही कर्मबंध होना चाहिए, काल को ही सुख-दुःख होना चाहिए, काल को ही मोक्ष पद की प्राप्ति होनी चाहिए, परंतु यह आगम, प्रत्यक्ष एवं अनुमान विरुद्ध है क्योंकि इस प्रकार उपलब्ध नहीं है।

इसी प्रकार नियति को ही यदि कार्य के लिए कारण मानेंगे तब काल, स्वभाव, पूर्वकृत, पुरुषार्थ रूप चार कारणों के लोप का प्रसंग प्राप्त होता है परंतु विकल अर्थात् न्यून कारण से कार्य नहीं हो सकता है। द्रव्य में परिणमन के लिए उदासीन रूप काल का अभाव होने पर द्रव्य में परिणमन नहीं होगा, स्वभाव के अभाव से द्रव्य का ही लोप होगा। पूर्वकृत के अभाव से एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक एवं मिथ्यात्व से चौदह गुणस्थान तक जीव की अवस्था विशेष का अभाव होने से संसार का अभाव हो जायेगा, जिससे प्रत्येक जीव शुद्ध-बुद्ध, नित्य निरंजन स्वरूप हो जायेंगे जो कि प्रत्यक्ष विरुद्ध है।

कर्म नहीं है तो कर्म नष्ट करने के लिए पुरुषार्थ की क्या आवश्यकता है? संसार के अभाव से प्रतिपक्षभूत मोक्ष का भी अभाव हो जायेगा। संसार-मुक्त जीवों का अभाव होने से प्रतिपक्षभूत अजीव द्रव्य का अभाव हो जायेगा तब सर्व शून्यता का प्रसंग आयेगा जो कि अनुपलब्ध है।

यदि केवल नियति को ही कार्य में कारण मानेंगे तो पुरुषार्थ के अभाव होने से लौकिक व अलौकिक कार्य के लिए जीव बुद्धिपूर्वक अथवा अबुद्धिपूर्वक क्रिया करता है उसका लोप होगा, पुरुषार्थ के अभाव से मोक्ष का भी अभाव हो जायेगा। परंतु जो अनंत केवली हुए हैं वे सभी पुरुषार्थपूर्वक, बुद्धिपूर्वक, गृहस्थ जीवन का त्यागकर, शरीर स्थित पोषाक निकालकर, केशलोंच कर, निर्ग्रंथ रूप धारण कर, कठोर अंतरंग-बहिरंग तपश्चरण कर मोक्ष पदवीं प्राप्त किये हैं।

भिन्नता एवं उच्चारण की शुद्धता

इंसान के अंतर्मन से ईश्वर बोलता है। **-हैसियोड, वर्क्स एंड डेज**

जिस तरह भाषण पेश करने के कई अंदाज होते हैं,
उसी तरह शब्द चुनने के भी कई तरीके होते हैं। **-होमर, इलियड**

आमतौर पर 'उच्चारण', 'स्वराघात' और 'संधि-योजन' को एक-दूसरे का पर्यायवाची माना जाता है; लेकिन सही उच्चारण में तीन भिन्न प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं, अतः कुछ इस तरह इसे परिभाषित किया जा सकता है-किसी शब्द या शब्दों के समूह को उच्चारण, स्वराघात और संधि-योजन के आधार पर प्रस्तुत करना चाहिए।

भिन्न और सटीक उच्चारण भाषण की कला का सबसे महत्वपूर्ण अंग होता है। बिना सोचे-समझे शब्दों को लापरवाही से इस्तेमाल करने वाले वक्ता का भाषण विचारों के उद्देश्य को समझाने में नाकाम साबित होता है। बताने का क्या मतलब होता है? बताने का मतलब होता है-भाव की स्पष्टता और भाव शब्दों के सही चयन या शब्दों की कमी के साथ स्पष्ट रूप से कैसे व्यक्त किया जा सकता है? अस्पष्ट उच्चारण की वजह या तो शारीरिक विकलांगता होती है या फिर गलत उच्चारण की आदत। ऑपरेशन के जरिये शारीरिक विकलांगता का इलाज किया जा सकता है, लेकिन सही उच्चारण की आदत विकसित करने के लिए दृढ़ निश्चय और कठिन प्रयास की जरूरत होती है। व्यक्ति की इच्छा-शक्ति से बड़ा कुछ नहीं होता।

उच्चारण में खोट की आदत का प्रचलन आम है, लेकिन इसमें सुधार बहुत दुर्लभ। आमतौर पर हिन्दी के शब्दों का गलत इस्तेमाल बेहद कष्टदायक महसूस होता है। कुरेन के अनुसार, 'उच्चारण में खोट यदि भाषा का कत्ल नहीं करता है तो उसे

ढेर तो कर ही डालता है।'

यदि कोई वक्ता भाषण देते वक्त शब्दों के अक्षरों को खाने लगे तो कष्ट स्वाभाविक हो जाता है। 'हिंदुस्तान' बोलते समय 'ह' का स्वर छोड़कर सीधे 'इ' से बोलना बेहद अखरता है। इन खामियों को न सुधार सकने वाला वक्ता सही और सटीक उच्चारण का अभ्यास नहीं कर सकता। ऐसे वक्ता को भाषण देने का हक नहीं मिलना चाहिए। यदि वक्ता भाषा में सुधार लाने में असमर्थ है तो बेहतर है कि चुप रहे।

उच्चारण से संबंधित लाइलाज दोष को छोड़कर, वैसे आजकल उच्चारण से संबंधित बहुत कम लाइलाज दोष हैं, केवल इच्छा-शक्ति और अभ्यास से उच्चारण को निपुण बनाया जा सकता है। आत्मविश्वास और जी-तोड़ मेहनत से कई व्यक्तियों ने असंभव कार्य को अंजाम देकर महान् उदाहरण पेश किये हैं। नॉथन शेफर्ड ने कहा है, 'आपके लिए धरती पर कुछ नहीं बना, जरूरत है कि आप कड़ी मेहनत से उपलब्धियाँ हासिल करें।'

उच्चारण

उच्चारण का अर्थ है-स्वर के प्राथमिक आधार को प्रभावशाली अंदाज के साथ जोड़ना। हिन्दी शब्दकोश के लाखों शब्दों के सही उच्चारण का अभ्यास करने की कल्पना बेहद भयावह लगती है; लेकिन इसकी शुरुआत करना बहुत आसान है। सही उच्चारण करने की शुरुआत करें, धीरे-धीरे एक शब्द से दूसरे शब्द की ओर बढ़ें, भाषा के सभी आधारभूत स्वरों का अभ्यास करें।

कई महान् वक्ताओं की भाषण-शैली और उच्चारण में खोट के चार प्रमुख कारण रहे हैं-आधारभूत स्वरों को नजरअंदाज करना, लगभग एक समान स्वरों के बीच महीन अंतर को अनदेखा करना, कंठ का फूहड़पन एवं लापरवाही से इस्तेमाल और इच्छा-शक्ति की कमी। अपनी इंद्रियों पर काबू रखने वाला व्यक्ति इन कमियों को दूर करने और उम्मीद के मुताबिक सुधार लाने का सामर्थ्य रखता है।

व्यंजनों का गलत स्वर भाषा में खोट की मुख्य वजह होती है, विशेष तौर पर संयुक्त स्वर में खोट बेहद अखरता है।

आमतौर पर अलग-अलग स्वरों को कुशलता से प्रस्तुत न कर पाने के दोष से उच्चारण में खोट पैदा हो जाता है। उदाहरण के तौर पर, अधिकतर व्यक्ति 'चूहा' बोलते वक्त अंक के स्वर का इस्तेमाल करते हैं। 'फूल' का उच्चारण अंग्रेजी के fool के समान किया जाता है। आमतौर पर 'बवाल' की जगह 'बबाल' बोला जाता है। इसी तरह हिन्दी भाषा में कई शब्दों के भ्रष्ट स्वर विकसित हो गये हैं।

इस तरह की चूक असावधानी की वजह से होती है। लापरवाही इसकी मुख्य वजह नहीं है, दरअसल ज्यादातर व्यक्ति शब्दों के सही या गलत उच्चारण पर ध्यान ही नहीं देते हैं। इसके अलावा अपने द्वारा बोले गये शब्दों को सुनने की आदत भी विकसित नहीं की जाती है।

स्वराघात

स्वराघात का मतलब है-शब्द का उच्चारण करते वक्त सही अक्षर पर बल देना। दरअसल इसी कला को वास्तविक रूप में उच्चारण कहा जाता है। इसी के अभाव में उच्चारण में खोट पैदा होता है। यदि 'ईश्वर' बोलते समय 'ई' की जगह 'इ' का स्वर निकाला जाये तो स्वाभाविक तौर पर शब्द का प्रभाव फीका हो जायेगा।

शब्दकोश में मौजूद शब्दों के सही उच्चारण के लिए जीवन भर सीखना पड़ता है और प्रचलन के मुताबिक उच्चारण की शैली में बदलाव का भी अभ्यास करना पड़ता है। सतर्क कान, शब्दों की उत्पत्ति की जानकारी और शब्दकोश को समझने की आदत इस प्रतिभा पर मजबूत पकड़ बनाने में कारगर सिद्ध होती है।

संधि-योजन

संधि-योजन का मतलब है-अक्षरों का स्पष्ट उच्चारण। स्वर और व्यंजनों के गलत उच्चारण से अस्पष्टता महसूस होती है, जैसे-'फूल' और fool दो अलग स्वरों को एक साथ या विराम के साथ बोलने से भी शब्द का अर्थ बदल जाता है। संधि-योजन में गलती करने का मतलब है-अक्षरों का अधूरा उच्चारण या फिर अनावश्यक स्वर का इस्तेमाल। 'जरूरतमंद' की जगह 'जरूरतीमंद' बोलना पूर्ण रूप से गलत-संधि-योजन है; 'स्वरूप' की जगह 'सरूप' बोलना स्वाभाविक रूप से खलता है। जैसे कि पहले भी बताया गया है, दो शब्दों को एक साथ मिलाने वाले स्वर को

नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। 'हर्षोल्लास' शब्द का उच्चारण करते वक्त विशेष ध्यान देना चाहिए कि 'हर्ष' और 'उल्लास' शब्द को जोड़ने वाली मात्रा का ही उच्चारण हो, न कि संपूर्ण 'उ' अक्षर का। शब्द के किसी एक अक्षर का स्वर बदलने से पूरे शब्द का उच्चारण प्रभावित हो जाता है।

किसी एक स्वर या व्यंजन में स्पष्टता का अहसास न होना वक्ता के लिए अपराध समान है। इस प्रकार शब्द के अर्थ को हानि पहुँचती है। सरूप, बारूदा, चूहा, इश्वर, इमान, ईमान, इंतजार, जख्म, जुलम कुछ ऐसी ही आम गलतियों के सामान्य उदाहरण हैं।

दोष-युक्त संधि-योजना की मुख्य वजह असावधानी और होंठों की जटिलता होती है। अक्षरों के सही उच्चारण के अभ्यास से इस कमी को दूर किया जा सकता है। होंठों में लचक का अभ्यास करने से एक साथ बोले जाने वाले शब्दों का सही उच्चारण और स्वर सीखा जा सकता है; लेकिन होंठों में इस लचीलेपन के लिए जहाँ एक तरफ कड़े अभ्यास की जरूरत होती है, वहीं इच्छा-शक्ति भी निपुणता हासिल करने में अहम भूमिका निभाती है।

अपनी परिभाषा पर लौटते हुए हम ध्यान देते हैं कि अक्षरों के सही संधि-योजन से सही स्वर उत्पन्न होता है और इस अभ्यास से उच्चारण को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। इस अभ्यास के दौरान विशेष तौर पर खयाल रखे कि स्वर को जरूरत से ज्यादा न खींचा जाये। शब्दों के जुड़ाव को सहज रखना बहुत आवश्यक है।

भाषण तैयार करने के बाद विशेष रूप से ध्यान दे कि किन स्वरों, व्यंजनों, शब्दों और वाक्यों पर बल देने की आवश्यकता है और किन पर नहीं। शब्द के सही और सटीक उच्चारण के लिए प्रमाणित शब्दकोश से सही जानकारी हासिल करें।

विश्व की समस्त समस्याओं के समाधानोपायः अनेकांत स्याद्वाद

(चाल : आत्मशक्ति.....)

परम उदारता गुण ग्राहकता सिखाता केवल अनेकांत ही।
तदनुकूल कथन-लेखन सिखाता केवल स्याद्वाद ही।।

दोनों का प्रयोग वे करते जो होते उदार व गुणग्राही।
सनम्र सत्यनिष्ठ-समता-सहिष्णुता युक्त प्रगतिशील शुद्धभावी।। (1)

उक्त गुण युक्त वे होते हैं जो न होते हैं अंध श्रद्धावान्।
क्रोध मान माया लोभ से हीन जो न होते है कुटिल-शंकावान्।।

कट्टर-स्वार्थी-क्रूर-अज्ञानी जो संवेदनशीलता से रहित है।
हिताहित विवेक व कल्पना शक्ति हीन उक्त (दोनों) प्रयोग से रहित है।। (2)

सत्य स्वरूप को पूर्णतः जानने हेतु चाहिए अनंत ज्ञान।
सामान्य मानव होते (हैं) अल्पज्ञ उसे चाहिए अतः अनेकांत ज्ञान।।

एक बार/(वाक्य) में संपूर्ण कथन नहीं हो सकता है कभी।
अतएव कथन व लेखन हेतु भी चाहिए स्याद्वाद पद्धति ही।। (3)

अन्यथा विषमता व वाद-विवाद तर्क-वितर्क व कुतर्क आदि।
होते हैं झगड़ा-कलह-फूट से लेकर युद्ध-आतंक आदि।।

व्यक्ति-समाज से लेकर राष्ट्र-अंतर्राष्ट्रीय में ये सभी होते।
राजनीति-कानून-समाज नीति से लेकर धर्मक्षेत्र में ये सभी होते।। (4)

इन सभी समस्याओं के समाधान उपाय केवल-अनेकांत-स्याद्वाद।
अन्यथा कोई समस्या समाधान संभव नहीं शिक्षा से ले धर्म तक।।

कानून-राजनीति-संविधान से लेकर विज्ञान व युद्ध तक।
उक्त सभी समस्याओं के समाधान हेतु नहीं हो सकते समर्थ।। (5)

यह परम शाश्वतिक-वैश्विक सिद्धांत जो सर्वज्ञ द्वारा उपदिष्ट।
जो इसे मानते-आचरते वे निश्चय से पाते समस्याओं से मुक्त।।

ऐसे जीव ही इह-परलोक में करते निश्चय से विशेष विकास।
अंत में सर्वज्ञ बनकर पाते अनंत सुखमय ऐश्वर्य/सिद्धत्व।। (6)

अतः अनेकांत-स्याद्वाद को हर जीव को करना चाहिए स्वीकार।
'आइंस्टीन' ने भी इसे स्वीकारा 'कनकनंदी' को तो लगे सबसे प्यारा।। (7)

चितरी, दिनांक 01.08.2017, रात्रि 9.35

विश्वगुरु सापेक्ष (अनेकान्त सिद्धान्त) वस्तु स्वरूप की सिद्धि

अर्पितानर्पितसिद्धेः।। (32) त.सू.

The contradictary characteristics are established from different points of view.

मुख्यतया और गौणता की अपेक्षा एक वस्तु में विरोधी मालूम पड़ने वाले दो धर्मों की सिद्धि होती है।

द्रव्य में अनन्त गुण एवं पर्याय होती हैं। उन अनन्त गुणों एवं पर्यायों का कथन एक साथ नहीं हो सकता है, परन्तु उस द्रव्य को जानना अनिवार्य है, क्योंकि द्रव्य के यथार्थ ज्ञान बिना रत्नत्रय की उपलब्धि नहीं हो सकती एवं रत्नत्रय के बिना मोक्षमार्ग नहीं हो सकता, मोक्षमार्ग के बिना मोक्ष नहीं मिल सकता और मोक्ष के बिना शाश्वतिक सुख नहीं मिल सकता है। इसीलिये यहाँ पर वस्तु स्वरूप के यथार्थ परिज्ञान की सर्वश्रेष्ठ व्यावहारिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक प्रणाली का वर्णन किया गया है।

धर्मान्तर को विवक्षा से प्राप्त प्राधान्य अर्पित कहलाता है। अनेक धर्मात्मक वस्तु के प्रयोजन वश जिस धर्म की विवक्षा की जाती है या विवक्षित जिस धर्म को प्रधानता मिलती है, उसे-अर्थरूप को अर्पित (मुख्य) कहते हैं।

अर्पित से विपरीत अनर्पित (गौण) है। प्रयोजक के प्रयोजन का (वक्ता की इच्छा का) अभाव होने से सत् (विद्यमान) पदार्थ की भी अविवक्षा हो जाती है। अतः उपसर्जनीभूत (गौण) पदार्थ अनर्पित (अविवक्षित) कहलाता है। वस्तु स्वरूप को जानने की जो गौण-मुख्य व्यवस्था है उसका व्यावहारिक सटीक वर्णन अमृतचन्द्र सूरि ने पुरुषार्थसिद्धि ग्रन्थ में वर्णन किया है। यथा-

एकेनाकर्षती श्लथयंती वस्तुतत्त्वमितरेण।
अन्तेन जयति जैनी नीतिर्मथाननेत्रमिव गोपी।। (225)

जिस प्रकार ग्वालिन दही को बिलोती हुई एक रस्सी को अपनी ओर खींचती है, दूसरी रस्सी को ढीली करती है। यद्यपि रस्सी एक होने पर भी रई में लिपटी हुई रहने के कारण दो भागों में बँट जाती है, उसे गोपिका दोनों हाथों में पकड़कर दही बिलोती है। जिस समय वह एक हाथ से एक ओर की रस्सी को अपनी ओर खींचती है, उसी समय दूसरे हाथ की रस्सी को ढीली कर देती है अर्थात् उसे आगे बढ़ा देती

है, इस प्रकार परस्पर एक को खींचने से दूसरी को ढीली करने से वह मक्खन (लोणी) निकाल देती है। यदि ग्वालिनी एक साथ दोनों छोर को समान बल से खींचती एवं छोड़ती तो मथनी गतिशील नहीं बनती और मक्खन भी नहीं निकलता। इसी प्रकार वस्तु स्वरूप के परिज्ञान के लिए विवक्षित विषय को मुख्य कर दिया जाता है एवं अविवक्षित विषय को गौण किया जाता है। इसका मतलब यह नहीं कि विवक्षित गुण, धर्म वस्तु में है एवं अविवक्षित गुण, धर्म वस्तु से पृथक् होकर लोप हो गये हो। इसको ही जैन धर्म में नयवाद या स्याद्वाद कहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक युग के महामेधावी वैज्ञानिक आईंस्टीन ने भी इस अनेकान्त सिद्धान्त को स्वीकार किया है। वे भी मानते हैं कि प्रत्येक वस्तु का कथन सापेक्ष दृष्टि से होना चाहिए। आईंस्टीन यहाँ तक मानते हैं कि जब तक जीव असर्वज्ञ रहेगा तब तक वह सम्पूर्ण सत्य को नहीं जान सकता, केवल आंशिक सत्य को जान सकता है। इस आंशिक सत्य को आंशिक सत्य मानना सम्यक् है एवं आंशिक सत्य को ही पूर्ण सत्य मान लेना मिथ्या है। यथा-

Einstain says, 'we can only know the relative truth the real truth is know only to the universal observer.

आईंस्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार हम जब जो जानते हैं, वह सम्पूर्ण सत्य (Absolute truth) नहीं है, किन्तु सापेक्षिक सत्य है। (Relative truth) है, सम्पूर्ण सत्य सर्वदर्शी सर्वज्ञ के द्वारा ही जाना जा सकता है।

सन्मति सूत्र में सिद्धसेन दिवाकर ने बताया कि अनेकान्त केवल वस्तु स्वरूप को प्रतिपादन करने वाली दार्शनिक प्रणाली नहीं है, परन्तु लोक व्यवहार को सुचारू रूप से व्यवस्थित करने के लिए लौकिक प्रणाली भी है।

जेण विणा लोगस्स वि ववहारो सव्वहा ण णिव्वडई।
तस्स भुवणेक्कगुरुणो णमो अणेगंतवायस्स।। (69)

जिस अनेकान्तवाद के बिना लोकव्यवहार भी नहीं चलता है उस जगत् का एकमेव गुरु अनेकान्तवाद को मेरा नमस्कार हो।

जैसे रामचन्द्र एक मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वे लव, कुश की अपेक्षा पिता, दशरथ की अपेक्षा पुत्र, लक्ष्मण की अपेक्षा बड़े भाई, सीता की अपेक्षा पति, जनक की अपेक्षा

दामाद (जमाई), सुग्रीव की अपेक्षा मित्र, रावण की अपेक्षा शत्रु, हनुमान की अपेक्षा प्रभु आदि अनेक धर्म से युक्त थे। राम एक होते हुए भी दशरथ की अपेक्षा पुत्र होते हुए भी लव-कुश की अपेक्षा पिता रूप विरोधी गुण से युक्त थे। तो भी अपेक्षा की दृष्टि से कोई प्रकार का विरोध नहीं है। इसी प्रकार अन्यान्य गुण अपने-अपने स्थान पर अविरुद्ध एवं उपयुक्त है। विशेष ज्ञान के लिए मेरा 'अनेकान्त दर्शन' का अध्ययन करें।

100 संख्या 10 संख्या की अपेक्षा अधिक होते हुए भी 1000 संख्या की अपेक्षा कम है। जैसे-सेवफल नारियल से छोटा होते हुए भी आँवले की अपेक्षा बड़ा है। आँवला सेवफल से छोटा होने पर भी इलायची की अपेक्षा बड़ा है। घी निरोगी के लिए शक्तिदायक होते हुए भी ज्वर रोगी के लिए हानिकारक है। अग्नि चिमनी में रहते हुए उपकारक है, परन्तु पेट्रोल-टंकी में डालने पर अपकारक है। अग्नि एक होते हुए भी पाचकत्व, दाहकत्व, प्रकाशकत्व आदि गुणों के कारण अनेक भी हैं।

यह अनेकान्त मानसिक अहिंसा है, क्योंकि इसमें एकान्तवाद, हठाग्रह, पूर्वाग्रह नहीं है। अनेकान्त सिद्धान्त दूसरों के सत्यांश को भी स्वीकार करता है। अनेकान्त का सिद्धान्त है Right is Mine अर्थात् जो सत्य है वह मेरा है। उसका दावा यह नहीं कि Mine is Right अर्थात् मेरा जो है वह सत्य है। अनेकान्त वस्तु स्वरूप तथा भावात्मक अहिंसा है तथा स्याद्वाद कथन प्रणाली या वचनात्मक अहिंसा है। इस अनेकान्त का स्पष्टीकरण करने के लिए और कुछ सरल उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं। जैसे-दो इंच लंबी वाली रेखा एक इंच वाली रेखा से लंबी है तथा तीन इंच लंबी रेखा से छोटी भी है। अनामिका अंगुली कनिष्ठा से बड़ी है, परन्तु मध्यमा से छोटी भी है। इसी प्रकार दिशा आदि में भी जान लेना चाहिए। जैसे एक व्यक्ति के लिए दूसरा व्यक्ति पूर्व में है तो पहला व्यक्ति उसके लिए पश्चिम में होगा।

Master Theory

Unified theory of universe (Theory of everything)

"अनेकान्त वन्दन (स्याद्वाद का स्वरूप)"

(Theory of relativity-सापेक्ष सिद्धान्त, एकीकृत सिद्धान्त)

(तर्ज : 1. बिन गुरु ज्ञान नहीं... 2. चालीसा... 3. मन तड़पत हरि दर्शन को)

दोहा- विश्व गुरु अनेकान्त से, हो व्यापक विचार,
लोकालोक में व्याप्त है, जिसकी महिमा अपार।

चौपाई- एकान्तवादी तुम जगो, करलो अपना सुधार,
सापेक्षवाद सतवाद से, हो जाओ भव पार।।

हे अनेकान्त सत्य स्वरूप, हे सनातन विश्व स्वरूप,
जीव-अजीव में व्याप्त स्वरूप, समस्त नय प्रमाण स्वरूप।
लोकालोक में व्याप्त रूप, मूर्तिक अमूर्तिक तेरा स्वरूप।
एकानेक व अनन्त रूप, सर्वव्यापी है शिव स्वरूप।।

उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य रूप, खण्ड विखण्डित एक स्वरूप,
अस्ति-नास्ति अव्यक्त रूप, सप्तभंग मय तेरा रूप।
सर्वत्र व्याप्त है तेरा रूप, सार्वभौम है नित्य स्वरूप,
बन्ध मोक्ष भी तेरा रूप, सापेक्षवाद है तेरा स्वरूप।।

निरापेक्ष है मिथ्या रूप, सापेक्ष दृष्टि सत्य स्वरूप,
तेरी कृपा से होता सम्यक्, मिथ्यात्व है तुमसे पृथक्।
तेरे वियोगे अनन्त भव, जन्म-मरणे दुःख ही भोग,
कुवाद समस्त नाशन कर्त्ता, समाधान के तुम हो भर्त्ता।।

तुम बिन है न लौकिकाचार, तुम बिन है न सदाचार,
तुम बिन है सब तर्क-कुतर्क, तुम बिन है स्वर्ग भी नर्क।
तुम बिन है न न्याय प्रणाली, तुम बिन है न कार्य प्रणाली,
तुम बिन है न सम्यक् मार्ग, तुम बिन है न मोक्षमार्ग।।

तुम तो आदि अन्त रहित, सर्व सत्य में सर्वत्र व्याप्त,
चेतन में तुम चेतन रूप, अचेतन में उसी ही रूप।
सर्वज्ञ द्वारा तुम सुज्ञात, सुदृष्टि द्वारा तुम पूजित,
तुम्हें न माने मिथ्यादृष्टि, तुम बिन न चलती सृष्टि।।

सूर्य न देखे जन्मान्ध व्यक्ति, अज्ञानी न जाने तुम्हारी शक्ति,

'कनकनन्दी' के साध्य-साधन, तुमसे ही मैं होता हूँ धन्य।
त्रैलोक्यनाथ के शासन तन्त्र, तुम्हें नमूँ मैं हे विश्वतंत्र।।

अनेकान्त-स्याद्वाद का स्वरूप

सर्वोदयी-विश्वशान्तिकर अनेकान्त एवं स्याद्वाद

(राग : 1. रघुपति राघव..., 2. यमुना किनारे..., 3. सायोनारा...)

अनेकान्त सिखाता है व्यापक बनो... (हर) गुण-पर्यायों की सूक्ष्मता जानो।
स्याद्वाद सिखाता है सत्यवादी बनो... हित-मित-प्रिय सत्य बखानो।।

हर द्रव्य में होते अनन्त गुण...अतएव हर द्रव्य अनेकान्त पूर्ण।
तथा ही हर कार्य अनेकान्तमय...अनेक कारणों से होता कार्यमय/(तन्मय)।।

(हर) प्रदेश आकाश के होती अनेक दिशा...चार या दश भी होती है दिशा।
तथा ही अणु की (भी) होती दश दिशा...अविभागी अणु की होती दश दिशा/(यह दशा)।।

अनन्त आकाश की (भी) होती दश दिशा...विश्वगुरु अनेकान्त देता यह शिक्षा।
एक जीव में होते अनन्त गुण...अतएव एक जीव अनन्त भिन्न।।

अनन्त सिद्ध एक समान होते...समान अपेक्षा एक भी होते।
अपेक्षा से बारह भेद भी होते...क्षेत्र काल गति लिंगादि से होते।।

संसारी-मुक्त भी नहीं है भिन्न...शुद्ध नय द्रव्य अपेक्षा प्रमाण।
कर्म अपेक्षा अनन्त है भिन्न...मार्गणा गुणस्थान अपेक्षा विभिन्न।।

ऐसा ही हर द्रव्य-गुणों में मानो...संकीर्ण दुराग्रह भाव को हनो।
ताना-बाना मय यथा होता है वस्त्र...तथा ही हर कार्य द्रव्य अशेष।।

अनेकान्त से होता व्यापक ज्ञान...उदार सहिष्णु निष्पक्ष ज्ञान।
जिससे भाव भी होता तन्मय...आचरण भी होता तथा तन्मय।।

अनेकान्त की अभिव्यक्ति स्याद्वाद...सप्तभंग मय होता स्याद्वाद/(विभेद)।
अस्ति-नास्ति आदि सापेक्ष कथन...शेष धर्मों न करे हनन।।

जीव स्वापेक्षा है अस्तित्ववान्...अजीव अपेक्षा होता नास्तित्ववान्।
दोनों कथन में नहीं विरोध...एकान्तवाद में होता विरोध।।

दश दिशायें न विरोध करती...एक/(हर) स्थान में दशों ही होती।
द्रव्य में अनन्त गुण रहते...विरोधी गुण भी साथ रहते।।

अनन्त गुणों के कथन निमित्त...स्याद्वाद बनता है अनन्त।
अनेकान्त है वैश्विक रूप...भाव-अहिंसामय वस्तु स्वरूप।।

दिव्य सन्देश यह तीर्थंकरों का...विश्व कल्याण व सर्वोदय का।
विनाशक यह सर्व द्वन्द्वों का...अमोघ उपाय प्रेम-शान्ति का।।

इसके बिना न सम्यक् होता...व्यवहार या न निश्चय होता।
न होता ज्ञान-आचरण सम्यक्...दृष्टिकोण न होता सम्यक्।।

आइन्स्टीन का हुआ योगदान...सापेक्ष-सिद्धान्त माना विज्ञान।
जिससे विज्ञान का हुआ विकास...वैश्विक मान्यता मिली विशेष।।

सदा सर्वदा सर्व स्मरणीय...सदा सर्वदा सर्व आचरणीय।
कथनीय लेखनीय वन्दनीय...'कनक' द्वारा सदा सेवनीय।।

स्व-प्राचीन ज्ञान-विज्ञान व परंपरा को भी सही नहीं जानते भारतीय!

(विदेशिओं के अंधानुकरण करते हैं भारतीय)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

विश्वगुरु भारत के लोग, नहीं हो पाये है उन्नत सभ्य।
नैतिक-धार्मिक-आध्यात्मिक दृष्टि से, नहीं हो पाये हैं अभी भी योग्य।। (1)

तीर्थंकर, बुद्ध, राम, कृष्ण व साधु सज्जन ज्ञानी-विज्ञानी।
गणितज्ञ-आयुर्वेद कलाविदों (व न्याय-राजनीति) हम थे सबसे अग्रणी।। (2)

अनेक कारणों से भारत रहा गुलाम अनेकों शताब्दी तक।
स्वतंत्रता के सप्त दशक तक भी, नहीं हो पाया विकसित देश।। (3)

सत्य-तथ्य हितकर विषयों को भी, नहीं जान पाते स्व-संस्कृति के।
जब तक पाश्चात्य लोग उसे नहीं स्वीकार करते शोध-बोध से।। (4)

यथा उठना-बैठना, खाना-पीना, खेल-कूद (मिट्टी में) से ले प्राणायाम-योगासन।
पूजा-प्रार्थना, ध्यान-अध्ययन से लेकर सादा जीवन व स्वावलंबन।। (5)

राजनीति, कानून, मानवाधिकार पशुक्रूरता निवारण सुरक्षा पर्यावरण।
तन-मन स्वच्छता से ले सार्वजनिक स्थलों के स्वच्छता के काम।। (6)

आत्मा-परमात्मा से लेकर (अणु व) विश्व का वर्णन पाया जाता ग्रंथों में।
स्व-पर-विश्व कल्याण की प्रार्थना रोज करते भारत देश में।। (7)

तथापि इसके सत्य-तथ्य को नहीं जानते व नहीं मानते।
आत्मबोध से लेकर आत्म शांति नहीं केवल दिखावा ही करते।। (8)

अपवाद से लाखों में कोई एक महापुरुष (जो) उक्त विषयों में दक्ष होते।
उन्हें भी अयोग्य मानकर उनका भी अनादर, अपमान करते।। (9)

भेड़-भेड़िया चाल से केवल उच्च-आदर्श हीन जीवन ढोते।
अस्त-व्यस्त व संत्रस्त जीवन काटकर मानव जीवन व्यर्थ करते।। (10)

ऐसी प्रवृत्तियाँ शिक्षा से लेकर कानून राजनीति, व्यापार में होती।
महान् आदर्श ज्ञान-विज्ञानमय धर्म क्षेत्र में भी पाई जाती।। (11)

दीन-हीन अहंकार सहित होते, स्वाभिमान सोऽहं-अहं (आत्म) भाव रहित।
नैतिक सदाचार ही नहीं पालते, क्या पालेंगे धर्म आध्यात्मिक सहित।। (12)

मातृभाषा का भी सही ज्ञान नहीं, क्या जानेंगे संस्कृत-प्राकृत।
लौकिक, व्यवहार भी सही नहीं पालते, क्या साधेंगे मोक्ष पुरुषार्थ।। (13)

राग, द्वेष, मोह, घृणा, तृष्णा, ईर्ष्या वैर-विरोध व निंदा अपमान करते।
नम्र, सत्यग्राही, उदारभावी, प्रामाणिक, कर्त्तव्यनिष्ट भी नहीं बनते।। (14)

ढोंग, पाखंड, आडम्बर, दंभ-दिखावा, मनमानी अंधानुकरण करते।
स्वयं को ही श्रेष्ठ-ज्येष्ठ मानकर, अन्य से तुच्छ (नीच) भाव-व्यवहार करते।। (15)

उक्त कमियों को त्यागकर के, भारत को बनाने हेतु विश्वगुरु।
'सूरी कनक' ने दया से द्रवित हो, काव्य लिखा है पथ्यकर कटु।। (16)

चितरी, दिनांक 19.07.2017, रात्रि 12.18 व प्रातः 7.57

उच्च शिक्षा में सुधार पर बड़ी-बड़ी बातें हो रही हैं। भारत को फिर से विश्वगुरु बनाने के लिए कोशिशें की जा रही हैं। शिष्टमंडल विदेशी विश्वविद्यालयों के दौरे भी कर रहे हैं। लेकिन, क्या हमने कभी हमारे गौरवशाली अतीत और ज्ञान की ओर भी ध्यान दिया है? इसकी उपेक्षा कर, विदेशी भ्रमणों से शिक्षा के लिए क्या हासिल कर पायेंगे हम...?

देश में छिपे ज्ञान के सहारे ही उठेगा स्तर!

-प्रो. डी.पी. शर्मा, स्वतंत्र टिप्पणीकार

दार्शनिक लेखक 'मैक्समूलर' क्यों हमारे ग्रंथों को सैकड़ों साल पहले अनुवाद कर अपने देश ले गया? क्यों नासा के वैज्ञानिक संस्कृत को दुनिया की सर्वाधिक वैज्ञानिक भाषा मानते हैं? क्यों वे भारत से 1000 संस्कृत के विद्वानों की माँग नासा में प्रशिक्षण के लिए करते हैं।

सरकारी विश्वविद्यालयों में तो अध्यापक स्थायी होने से पहले 'अकादमिक राजनीति' और फिर स्थायी होने के बाद सिर्फ 'राजनैतिक अकादमिक' कार्यों के लिए संघर्ष करने में व्यस्त रहते हैं।

आज देश-प्रदेश के हर कोने में उच्च शिक्षा में सुधार के जुमले रूपी प्रयास जोर पकड़ रहे हैं। सरकारी खजानों को यह सोचकर विदेश भ्रमण के लिए खोल दिया गया है कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सरकारी एवं गैर सरकारी नवचेतना चंद महीनों में सब कुछ बदलकर रख देगी। भारत उच्च शिक्षा के क्षेत्र में एक बार पुनः नालंदा युग में पहुँच जायेगा। जुमले के तौर पर इसे प्रशंसनीय माना जा सकता है क्योंकि हम भारतीयों की यह खास बात है कि हम 'ज्यादा बोलने एवं काम कम करने' की बीमारी से पीड़ित हो चले हैं। इसी वजह से हमने अपनी क्षमताओं को भुला दिया और दुनिया हम पर हावी होती चली गई। दुःखद तो यह है कि हमने इसे अपनी नियति मान लिया है। कुछ खास आविष्कारों को छोड़ दे तो सोचिये कि आखिर पश्चिम का हर कूड़ा-करकट, हर जुमला, हर आविष्कार, हर कथन, हर किताब हमारे लिए प्रशंसनीय और अनुकरणीय क्यों बन जाते हैं? और हमारा खुद का ज्ञान तुच्छ या गैर प्रमाणिक एवं अवैज्ञानिक क्यों मान लिया जाता है? योग जब देश में था तो अप्रमाणिक व पुरातनपंथी था फिर विदेश से नवीन पैकेट में 'योगा' बनकर लौटा

तो प्रमाणिक एवं आधुनिक वैज्ञानिक हो गया यहाँ तक की संयुक्त राष्ट्र ने इसके लिए एक विश्व दिवस भी घोषित कर दिया। यहाँ पर ये सवाल उठाना हमारे लिए जरूरी है कि आखिर दार्शनिक व लेखक 'मैक्समूलर' क्यों हमारे ग्रंथों को सैकड़ों साल पहले अनुवाद करके अपने देश ले गया? क्यों नासा के वैज्ञानिक हमारी संस्कृत को दुनिया की सबसे अधिक वैज्ञानिक भाषा मानते हैं? क्यों वे भारत से 1000 संस्कृत के विद्वानों की माँग नासा में प्रशिक्षण के लिए करते हैं और संस्कृत को वैज्ञानिकों के लिए अनिवार्य करने पर माँग करते हैं? क्यों उन्होंने संस्कृत को कंप्यूटर की 'कृत्रिम प्रबुद्धता' के लिए सबसे अधिक उपयोगी भाषा करार दिया? कुछ समय पूर्व राजस्थान विश्वविद्यालय के जैन धर्म, बौद्ध एवं हिन्दू धर्म ग्रंथों का प्रबंधन पाठ्यक्रम में शामिल करने प्रशंसनीय कदम उठाया। जब अमरीका की 'सेटों हॉल यूनिवर्सिटी' गीता को अनिवार्य रूप से हर छात्र का पढ़ने के लिए नीति बना सकती है तो भारतीय विश्वविद्यालय क्यों नहीं? ज्ञात रहे कि यह कैथोलिक यूनिवर्सिटी 1856 में अमरीका के न्यूजर्सी शहर में स्थापित हुई थी जहाँ मुस्लिम बौद्ध, यहूदी और ईसाई छात्र पढ़ते हैं। एक भी हिन्दू छात्र ने यहाँ पर शिक्षा ग्रहण नहीं की। यहाँ गीता का अनुवाद प्रोफेसर स्टीफेन मिचैल ने किया है। यह तो एक मात्र उदाहरण है जो बताता है कि हम क्या थे और क्या हो गये? आज भारत सरकार विदेशी विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा के नियामक संस्थानां के अधिकारियों के शिष्टमंडलीय भ्रमणों को खूब प्रोत्साहित कर रही है। कभी मंत्रियों के साथ तो कभी बड़े शिक्षा नियंत्रक/नियामक संस्थानों जैसे यूनिवर्सिटी ग्रांट कमीशन, ऑल इंडिया काउंसिल फॉर टेक्निकल एजुकेशन, नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्निकल टीचर्स ट्रेनिंग एंड रिसर्च इत्यादि के साथ ये भ्रमण हो रहे हैं। अनाप-शनाप बजट के मालिक ये संस्थान अभी तक कोई ऐसा चमत्कार नहीं कर पाये जिससे अमरीका, यूरोप अथवा ऑस्ट्रेलिया का कोई छात्र हमारे यहाँ शिक्षा के लिए चलकर आया हो। इसीलिए कहता हूँ कि ये भ्रमण अधिकांशतः जुमलों तक ही सीमित रहते हैं। हाल में टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंस और एसोचैम के एक सर्वे ने ये खुलासा किया लगभग 45,000 करोड़ रुपया भारतीय छात्र हर साल विदेशी विश्वविद्यालयों को फीस के रूप में देते हैं और इनमें से कुछ ही वापिस देश लौटते हैं। तब सवाल उठता है कि हमारे उच्च शिक्षण संस्थान आखिर किधर जा रहे

हैं? आज अमरीका के हार्वर्ड, एमआईटी, स्टेनफोर्ड जैसे टॉप रैंक विश्वविद्यालय निजी क्षेत्र से हैं तो फिर भारत के निजी क्षेत्र के विश्वविद्यालय ऐसे क्यों नहीं? सरकार से ज्यादा उम्मीद करना व्यर्थ है। सरकारी विश्वविद्यालयों में तो अध्यापक स्थायी होने से पहले 'अकादमिक राजनीति' और फिर स्थायी होने के बाद सिर्फ 'राजनैतिक अकादमिक' कार्यों के लिए संघर्ष करने में व्यस्त रहते हैं। इस बात पर भी गौर करना जरूरी है कि तकनीकी (अंतरिक्ष, मिसाइल, सॉफ्टवेयर) एवं प्रतिभा कौशल की दृष्टि से कमतर ऑस्ट्रेलिया, 2016 में सब देशों से अधिक यानी 45,000 भारतीय छात्रों को उच्च तकनीकी शिक्षा में प्रवेश देने में सफल रहा और भारत के उच्च शिक्षण संस्थानों की सीटें खाली पड़ी रह गई जिनमें आईआईटी भी शामिल है। इस सारे माजरे से स्पष्ट है कि इन प्रयासों एवं भ्रमणों से भारतीय विश्वविद्यालयों को कुछ भी हासिल नहीं होगा और आखिर ऐसे हजारों भ्रमणों, करोड़ों के सरकारी बजट की बर्बादी के बाद भी हमारे उच्च शिक्षा संस्थान वर्ल्ड रैंकिंग में फिसड्डी क्यों बने हुए हैं? कहीं तो कुछ गलत है। क्यों अमरीका के लोग भारतीय प्रतिभाओं से स्पर्धा करते हैं? क्यों गूगल एवं माइक्रोसॉफ्ट जैसे संस्थानों के चेयरमैन पद पर भारतीयों को बिठाया जाता हैं? क्यों अमरीकी संसद में भारतीय पीएचडी छात्रों को वापस भारत भेजने के खिलाफ कानून बनाने की पहल की जाती हैं? हम एवं हमारे छात्रों में कुछ तो है परन्तु वो हमारे उच्च शिक्षा संस्थानों में क्यों नहीं?

यूएन की रिपोर्ट के मुताबिक अपर्याप्त स्तनपान की वजह से हर साल दम तोड़ देते हैं एक लाख बच्चे

बच्चों को ठीक से स्तनपान न कराने की वजह से देश को 90 हजार करोड़ रुपये का नुकसान

भारत में अपर्याप्त स्तनपान की वजह से असामयिक मृत्यु व अन्य नुकसान से अर्थव्यवस्था को 14 अरब डॉलर (89,446 करोड़ रुपये) का नुकसान हो सकता है। यूएन की एक रिपोर्ट के मुताबिक देश में हर साल करीब एक लाख बच्चे बीमारियों का शिकार होकर मौत की आगोश में सो जाते हैं। अगर माँयें अपने बच्चों को पर्याप्त मात्रा में स्तनपान करवाये तो ये मौतें रोकी जा सकती हैं।

ग्लोबल ब्रेस्टफीडिंग कलेक्टिव के सहयोग से यूनीसेफ और विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) ने 'ग्लोबल ब्रेस्टफीडिंग स्कोरकार्ड' के नाम से रिपोर्ट जारी की है। इसमें कहा गया हैं कि स्तनपान से न केवल बच्चां की मौत के दो बड़े कारणों डायरिया और न्यूमोनिया से बचाने में मदद मिलती है, बल्कि महिलाओं की मौत के दो बड़े कारणों ओवरी और स्तन के कैंसर से माँओं की भी रक्षा होती है। सिर्फ चीन, भारत, नाइजीरिया, मैक्सिको और इंडोनेशिया में ही अपर्याप्त स्तनपान की वजह से हर साल 2,36,000 बच्चों की मौत हो जाती है। इन मौतों एवं संबंधित नुकसान की वजह से इन पाँच देशों को आने वाले वक्त में हर साल 119 अरब डॉलर (करीब 759 लाख करोड़ रुपये) का आर्थिक नुकसान पहुँचने की आशंका है।

रिपोर्ट कहती है कि छह महीने से कम उम्र के बच्चों में स्तनपान दर 55 प्रतिशत होने के बावजूद भारत की बड़ी आबादी हर साल असामयिक मौत का शिकार हो रही है जिनमें खासकर 5 साल से कम उम्र के बच्चे बड़ी तादाद में शामिल हैं। रिपोर्ट में कहा गया है कि अनुमानतः हर साल 99,499 बच्चे डायरिया और न्यूमोनिया की वजह से मौत के मुँह में समा जाते हैं, जिन्हें पर्याप्त मात्रा में स्तनपान करवाकर बचाया जा सकता है।

स्तनपान से बच्चों को गंभीर बीमारियों से बचाया जा सकता है-कम स्तनपान के कारण बच्चों के साथ-साथ कैंसर और टाइप-2 डायबिटीज की शिकार महिलाओं की मौत से देश की अर्थव्यवस्था को 7 अरब डॉलर (करीब 44,586 करोड़ रुपये) के नुकसान का अनुमान है। इस वजह से भारत को अपनी जीडीपी का 0.70 प्रतिशत का घाटा हो सकता है। डब्ल्यूएचओ के डायरेक्टर जनरल टेड्रोस ऐडनाम ग्रेब्रेयरस ने कहा, 'स्तनपान से बच्चों को जीवन की सर्वोत्तम संभावित शुरुआत मिलती है। इससे उन्हें कई संभावित बीमारियों से बचाया जा सकता है।' इस स्कोरकार्ड में जिन 194 देशों का मूल्यांकन किया गया है, उनमें से कोई भी देश स्तनपान के तय मानकों पर खरा नहीं उतर रहा। इसके मुताबिक 6 माह से कम उम्र के केवल 40 प्रतिशत बच्चों को ही केवल स्तनपान कराया जा रहा है। वहीं ऐसे केवल 23 देश हैं जहाँ केवल स्तनपान करने वाले बच्चे 60 प्रतिशत है।

प्राचीन लिपी समझने के लिए 10 लाख रुपये प्रति शब्द देगा यह म्यूजियम

चीन के एक म्यूजियम ने सोशल साइटों पर कहा है कि अगर आप प्राचीन शब्दों को अच्छी तरह समझ लेते हैं, तो हमारे यहाँ आईये। वहाँ के हेनान प्रांत के एन्यांग शहर स्थित नेशनल म्यूजियम ऑफ चाइनीज राइटिंग ने दुनियाभर में अपील जारी की है। उसके अनुसार उनके यहाँ 'ऑरकल बोन्स' (प्राचीन चीन में हड्डी पर भविष्यवाणी लिखी जाती थी) हैं, जिन पर कुछ लिखा है। वे करीब 3,000 वर्ष पुरानी और शान्ग राजवंश के दौर की है। उन पर जो शब्द लिखे है, उनके प्रत्येक शब्द का मतलब समझाने वाले को 10 लाख रुपये दिये जायेंगे।

ऑरिकल बोन्स का इस्तेमाल शान्ग राजवंश में (1600 से 1046 ईसा पूर्व) में भविष्यवाणी करने, सैनिकों की विजय और राज्य की समृद्धि के बारे में लिखने में किया जाता था। औरैकल बोन्स ऐसे गड्ढे में रखी जाती थी, जहाँ सूर्य की किरणें सीधी पड़े। अगर उनमें दरार आ जाती, तो लिखने वाले को जवाब मिल जाता था। जिस औरैकल बोन्स में दरार पड़ती, उन्हें गड्ढे से बाहर निकाल लिया जाता था।

नासा ने निकाली प्लैनेटरी प्रोटेक्शन ऑफिसर की नौकरी, चौथी ग्रेड के जैक ने दिया आवेदन

9 साल के बच्चे ने नासा से माँगी नौकरी, एलियन से बचाना चाहता है धरती, खुद को बताया गार्डियन ऑफ द गैलेक्सी

नासा ने कुछ ही दिन पहले प्लैनेटरी प्रोटेक्शन ऑफिर के पद पर वैकेंसी की घोषणा की थी। इसकी दुनियाभर में चर्चा थी। एक ओर धरती बचाने की जिम्मेदारी, दूसरी ओर सवा करोड़ के सालाना पैकेज की नौकरी। इस पद के लिए आवेदन की अंतिम तारीख 14 अगस्त है। जाहिर है ऐसे में इस स्पेस एजेंसी में आवेदनों की बाढ़ आ गई। इन्हीं में से एक प्यारी-सी चिट्ठी जैक डेविस की थी। नौ साल का यह बच्चा भी दुनिया बचाना चाहता है। उसे नौकरी तो नहीं मिली पर नासा ने जवाब भेजकर उसका हौसला जरूर बढ़ाया।

मैंने स्पेस और एलियन की सभी फिल्में देखी हैं, मैं बन सकता हूँ

गार्डियन ऑफ द गैलेक्सी-प्रिय नासा, मेरा नाम जैक डेविस है और मैं प्लैनेटरी प्रोटेक्शन ऑफिसर के पद के लिए अप्लाई करना चाहता हूँ। मैं 9 साल का भले हूँ लेकिन मेरा मानना है कि मैं इस नौकरी के योग्य हूँ। एक कारण ये भी है कि मेरी बहन कहती है, मैं एक एलियन हूँ। मैंने स्पेस और एलियन से संबंधित लगभग सभी फिल्में देख रखी है। मैंने 'मार्वल्स एजेंट्स ऑफ शील्ड' के सभी शो देखे है और जल्द ही 'मैन इन ब्लैक' भी देख लूँगा। मैं वीडियो गेम्स खेलने में माहिर हूँ। मैं युवा हूँ इसलिए मैं किसी एलियन की तरह ही चीजों को जल्द सीख सकता हूँ।

आपका-जैक डेविस, गार्डियन ऑफ द गैलेक्सी, ग्रेड-4

हमें अच्छे वैज्ञानिकों की जरूरत है, आशा है आप अच्छी पढ़ाई करेंगे, एक दिन नासा में होंगे-प्रिय जैक, हमने सुना आप 'गार्डियन ऑफ गैलेक्सी' है और नासा में प्लैनेटरी प्रोटेक्शन ऑफिसर बनना चाहते हैं। बहुत अच्छी बात है। यह नौकरी लाजवाब है। यह धरती को माइक्रोब्स के खतरों से बचाने के बारे में है। जब हम चंद्रमा, छोटे तारों और मंगल से सैम्पल्स लायेंगे, इसमें दूसरे ग्रहों और चंद्रमा को उन कीटाणुओं से भी बचाना है जिन्हें सौरमंडल में फैलाने के लिए हम उत्तरदायी है। हमें हमेशा अच्छे वैज्ञानिकों, इंजीनियर्स की जरूरत रहती है। आशा करते हैं कि आप अच्छी पढ़ाई करेंगे और एक दिन नासा में होंगे।

-डॉ. जेम्स एल ग्रीन, डायरेक्टर, प्लैनेटरी साइंस डिवीजन, नासा

सवा करोड़ का वेतन, काम धरती बचाने का-प्लैनेटरी प्रोटेक्शन ऑफिसर को धरती और सौरमंडल में मानव द्वारा किये प्रदूषणों को रोकने का प्रयास करना होगा। उसे 187,000 डॉलर यानि 1,19,02,662 रु. वेतन व अन्य सुविधाएँ मिलेंगी। आवेदन अमेरिकी नागरिक ही कर सकते हैं। टॉप सरकारी सिविल सेवा में काम करने का कम से कम एक साल का अनुभव होना चाहिए। फिजिकल साइंस, इंजीनियरिंग या गणित में एडवांस डिग्री होनी चाहिए।

लेटलतीफी से पार पाये तभी बजेगा दुनिया में डंका

विश्वविद्यालय प्रशासकों, नीति नियंताओं और शिक्षाविदों के बीच वर्षों से हायर एजुकेशन सिस्टम में मौलिक बदलाव पर बहस जारी है। इस

दिशा में केंद्र ने जो कदम उठाये हैं, एक तबका उसका लगातार विरोध करता रहा है। आईबीएम के ताजा अध्ययन के बाद कि हायर एजुकेशन सिस्टम में वैश्विक जरूरतों और घरेलू बाजार के हिसाब से मौलिक स्तर पर नीतिगत बदलाव जरूरी है, इस बहस ने एक बार फिर जोर पकड़ ली है। इसके अनुसार औद्योगिक जरूरतों के हिसाब से नवाचार व प्रबंधकीय आयामों को पाठ्यक्रमों का अहम हिस्सा बनाना होगा, तभी हम वैश्विक चुनौतियों का सामना कर पायेंगे। -धीरेंद्र मिश्र

हाल ही में आईबीएम स्टडी ऑफ बिजनेस वैल्यू ने सर्वे का काम इकोनॉमिस्ट इंटेलीजेंस यूनिट के सहयोग से पूरा किया गया है। इसका मकसद हायर एजुकेशन सिस्टम के सामने वैश्विक चुनौतियाँ, कमजोर अकादमिक नेतृत्व, वरिष्ठ शिक्षकों की समसामयिक उपयोगिता कम होना, कॉरपोरेट भर्ती व लर्निंग टूल्स व अकादमिक नवाचार के स्तर को जानना था। इसमें 61 प्रतिशत लोग भारतीय हायर एजुकेशन सिस्टम को सामाजिक व कॉरपोरेट जरूरतों को पूरा न करने वाली कमजोर प्रणाली मानते हैं। 59 प्रतिशत भारत में शिक्षा की प्रासंगिकता को बनाये रखने के काम को दुरूह, 56 प्रतिशम महँगी शिक्षा, 54 प्रतिशत उच्च शिक्षा, उद्योग और नवाचार के बीच तालमेल का अभाव और 52 प्रतिशत लोग मानते हैं कि बदलाव के लिए जरूरी संसाधनों का सख्त अभाव है। इसलिए बदलाव वक्त की माँग है।

छात्रों के लिए अनुपयोगी व्यवस्था-52 प्रतिशत नवाचार प्रोफेशनल्स का कहना है कि नवाचार व कौशल दक्षता के पैमाने पर छात्रां के लिए वर्तमान शिक्षा प्रणाली अनुपयोगी है। 37 प्रतिशत ने उद्योग व 35 प्रतिशत सामाजिक आवश्यकताओं पूरा नहीं करने वाला करार दिया।

लेने होंगे दूरगामी निर्णय-वैश्विक स्तर पर पिछले कुछ दशक में शिक्षा के हर क्षेत्र के पाठ्यक्रमों में बहुआयामी बदलाव हुए हैं। पश्चिमी और यूरोपीय देशों सहित आसियान देशों ने उसी अनुरूप हायर एजुकेशन सिस्टम को बदलने में सफलता हासिल की है। इसका लाभ वहाँ के युवाओं को ग्लोबल प्लेटफॉर्म पर मिल रहा है। लेकिन भारतीय हायर एजुकेशन सिस्टम में क्रांतिकारी बदलाव न होने से हमारे युवा ग्लोबल स्तर पर व्याप्त अवसरों का लाभ पूरी तरह से उठा नहीं पा रहे हैं।

पीपीपी जरूरी क्यों-आईबीएम के इंडिया और दक्षिण एशिया के उपाध्यक्ष डी.पी. सिंह का कहना है कि अकादमिक शिक्षण संस्थानों व कॉरपोरेट सेक्टर्स के बीच सहभागिता जरूरी है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में पाठ्यक्रमों में बदलाव की जरूरत है, ताकि औद्योगिक और सामाजिक जरूरतों के साथ वैश्विक जरूरतों का सामना भारतीय युवा कर सकें।

कॉरपोरेट लॉबी का बढ़ा दबाव-कॉरपोरेट सेक्टर्स के लोगों का जोर पाठ्यक्रमों में नवाचार को प्राथमिक स्तर पर शामिल कराने पर है, ताकि व्यवसायिक दक्षता, मेंटरशिप, जरूरी प्रशिक्षण, इंडस्ट्री एक्सपोजर का लाभ युवाओं को मिलें। कॉरपोरेटर्स का कहना है कि व्हाइट, ब्लू और न्यू कॉलर जॉब के बीच व्याप्त अंतरालों को दूर करने की भी जरूरत है, क्योंकि ये सोच नवाचार की राह में बड़ी बाधा है। इस वजह से प्रभावी तरीके से टैलेंट हंट और प्रमोशन का काम नहीं हो पा रहा है।

एक राष्ट्रीय शिक्षा नीति की जरूरत-डिलॉयट के निदेशक रोहिन कपूर का कहना है कि कॉरपोरेट सेक्टर्स नवाचार कौशल विकास के बल पर वर्ल्ड क्लास के क्षेत्र में अहम भूमिका निभा सकता है। सरकार ने इस दिशा में कदम बढ़ाने की घोषणा की है। पिछले तीन वर्षों से राष्ट्रीय शिक्षा नीति में परिवर्तन पर जोर दिया जा रहा है। लेकिन इसमें और तेजी लाने की जरूरत है।

वैश्विक जरूरतों के अनुरूप हो शिक्षा में बदलाव-केंद्रीय विश्वविद्यालय हिमाचल प्रदेश के वीसी डॉ. कुलदीप अग्निहोत्री का कहना है कि पाठ्यक्रमों में बदलाव की प्रक्रिया रोकना संभव नहीं है। हाँ, यह ध्यान रखना होगा कि बदलाव पक्षाघात का शिकार न हो। शिक्षा के मूल उद्देश्य व व्यावहारिकता में तालमेल बना रहे। भारत में सैकड़ों वर्षों तक गुलामी की वजह से यह गति रुक गई थी, जिसे आगे बढ़ाने की जरूरत है। आईबीएम की रिपोर्ट प्रासंगिकता के लिहाज से सही है। शिक्षा संस्थानों को कॉरपोरेट जगत की जरूरतों को समझना होगा, क्योंकि उनका करियर निर्माण तभी होगा, जब उच्च शिक्षा ग्लोबल डिमांड्स के अनुरूप हो।

आधुनिक लाइफ-स्टाइल से उत्पन्न समस्याएँ

सर्वांगीण विकास हेतु कम गैजेट्स प्रयोग करो! हे बच्चों!

(चाल : परदेशियों से....., आत्मशक्ति....., जय हनुमान.....)

बच्चों यदि तुम्हें सुखी (श्रेष्ठ) जो बनना, विनय सदाचार सदा ही पालना।
गुण ग्रहण व दोष त्याग करना, सादा जीवन उच्च विचार करना।। (स्थायी)

प्रकृति प्रेमी जीवन प्राकृतिक जीना, फैशन-व्यसनों से दूर रहना।
स्वावलंबी श्रमशील जीवन जीना, कृत्रिम खान-पान नशा न करना।। (1) बच्चों...

लौकिक शिक्षा सह नैतिक सीखना, इससे परे भी आत्म धर्म सीखना।
उदार वैश्विक भावना भी भाना, स्व-पर-विश्वहित हेतु भावना भाना।। (2) बच्चों...

तन-मन-आत्मा को स्वस्थ रखना, आदर्श आहार-विहार-शयन करना।
योगासन-प्राणायाम-भ्रमण करना, दया दान सेवा परोपकारादि करना।। (3) बच्चों...

कृत्रिम उपकरणों से सतर्क रहना, मोबाईल इंटरनेट (कंप्यूटर) कम प्रयोग करना।
टी.वी. में अयोग्य कार्यक्रम न देखना, (शिक्षाप्रद) विदेशी वैज्ञानिक चैनल देखना।। (4) बच्चों..

यान-वाहनों का प्रयोग अधिक न करना, हिंसा से लेकर प्रदूषण न करना।
स्वस्थ व शांति से विकास करना, आत्मकल्याण का भाव भी रखना।। (5) बच्चों...

अधिक गैजेट्स के प्रयोग द्वारा, विविध रोग/(आधि-व्याधि) निमंत्रित (होंगे) तव द्वारा।
मानसिक विकास तेरा सही न होगा, सीखना-समझना भी कठिन होगा।। (6) बच्चों...

एकाग्रमन-आत्मानुशासनहीन, पाचन शक्ति-दृष्टिशक्ति भी हीन।
नींद की कमी व शरीर विकास कम, भोगना पड़ता है तनाव डिप्रेशन।। (7) बच्चों...

खेलकूद (मिट्टी में) भी हो जाते है कम, जिससे बढ़ते है मोटापा-वजन।
प्रेम-संगठन भी हो जाते कम, संस्कार-सदाचार होते क्षीण।। (8) बच्चों...

जिससे न होता सर्वांगीण विकास, जीवन हो जाता निरस शुष्क/(रूक्ष)।
यंत्रवत् जीवन होता सुख विहीन, अस्त-व्यस्त व संत्रस्त जीवन।। (9) बच्चों...

बच्चों तुम नहीं हो केवल शरीर मात्र, तुम तो अनंत गुणमय चैतन्य द्रव्य।
आत्मविकास हो तेरा परम लक्ष्य, अतः आह्वान करे तुम्हें 'सूरी' कनक।। (10) बच्चों...

चितरी, दिनांक 15.07.2017, रात्रि 11.54

खान-पान का असर काम पर

अच्छा काम करने के लिए अच्छा खाना, सोना और कसरत जरूरी

अगर हम स्वस्थ नहीं हैं, तो खुश या सफल नहीं हो सकते। फिर चाहे ऑफिस हो या घर। हेल्दी रहने में तीन बातों का विशेष महत्व होता है-खाना, सोना और कसरत। हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू में 'फूड कंजंप्शन, मूड और बिहेवियर' पर एक शोध हुआ। इसमें शामिल प्रतिभागियों में जिन्होंने कम हाई फैट भोजन किया और फल और सब्जियाँ ज्यादा खाई वे अधिक खुश, काम में मगन और रचनात्मक पाये गये।

जबकि हाई फैट, हाई कैलोरी वाला भोजन करने वाले इनकी अपेक्षा तीनों मामलों में पीछे रहे। इस तरह भोजन आपके काम के स्तर पर सीधा असर डालता है। दरअसल आप कई-कई घंटों तक लगातार काम करते हैं। कई बार ऑफिस जल्दी भी जाना पड़ता है और दूर रात तक काम भी करना पड़ता है। ऐसे में भोजन अनियमित हो जाता है और नींद व आराम भी पूरा नहीं मिल पाता। जबकि अच्छी कार्यक्षमता के लिए अच्छी नींद लेना भी बहुत जरूरी है। कम नींद का सीधा संबंध तनाव और हाई ब्लड प्रेशर जैसे प्रभावों से है। इससे ब्रेन में क्रिया भी कम हो जाती है।

इसी तरह तीसरी जरूरी चीज है कसरत। क्योंकि जब आप तनाव में होते हैं तो कसरत आपको रोजमर्रा के स्ट्रेस से मुक्त करने में मदद करती है। नियमित व्यायाम से डिप्रेशन कम होता है, मेंटल ब्लॉक दूर होते हैं सफलता के लिए कड़ा परिश्रम करने की ऊर्जा मिलती है और समस्याओं के समाधान का रास्ता मिलता है।

बच्चों की क्षमता बढ़ाती है चीजें शेयर करने की आदत

कई घरों में माता-पिता को अपने बच्चों के प्रति यह फिक्र होती है कि वे किसी के साथ अपनी चीजें शेयर नहीं करते हैं। जबकि बच्चों में इसकी आदत डालें, तो उनका दिमाग न केवल तेजी से विकसित होने लगेगा, बल्कि वे पहले से ज्यादा

खुशनुमा रहने लगेंगे। उन्हें बताये कि अगर वे शेयर करेंगे तो उन्हें भी नई-नई चीजें मिलने लगेंगी। कई अध्ययनों में यह बात सामने आई है कि जो बच्चे चीजें ज्यादा शेयर करते हैं वे अन्य की तुलना में ज्यादा खुशनुमा भी होते हैं। नई बातें सीखने की क्षमता उनमें कई गुना अधिक बढ़ जाती है।

माता-पिता की जिम्मेदारी-माता-पिता बच्चे को बता सकते हैं कि शेयरिंग क्यों अच्छी है। जो बच्चे चीजें अपने पास ही रखते हैं, उनमें भिन्नता की भावना विकसित होती है, जो ठीक नहीं है। इससे वे कई नई बातें सीखने से वंचित रह जाते हैं।

दबाव नहीं, खेल-खेल में सिखायें-बच्चों को अगर दबावपूर्वक ऐसा करने के लिए कहा जायेगा, तो वे नाराज हो जायेंगे या उनका गुस्सा बढ़ सकता है। ऐसा करने की बजाय खेल-खेल में उसकी यह आदत विकसित करने की कोशिश करें। इसलिए शुरुआती वर्षों में ही ऐसा किया जाना ज्यादा प्रभावशाली होता है।

लगातार ड्राइव करने से दिमाग पर असर

एक ताजा शोध में खुलासा हुआ है कि हर दिन लगातार 2 घंटे या इससे ज्यादा देर तक गाड़ी चलाने से दिमाग पर असर पड़ता है। इससे व्यक्ति की अक्लमंदी घटने का खतरा रहता है। ब्रिटेन की यूनिवर्सिटी ऑफ लेस्टर के शोधकर्त्ताओं ने पाँच लाख लोगों की लाइफ स्टाइल की जाँच में पाया कि एक ही जगह पर ज्यादा देर तक बैठे रहने से ब्रेनपावर प्रभावित होता है। इस रिसर्च में खुलासा करना न सिर्फ हृदय के लिए बल्कि ब्रेन के लिए भी खतरनाक है। क्योंकि ड्राइव करने के दौरान आपका ब्रेन कम ऐक्टिव रहता है।

कार के भीतर भी है प्रदूषण के खतरे

आप यह सोचते हैं कि किसी भारी प्रदूषित सड़क पर आप अपनी कार के अंदर हैं तो सुरक्षित है तो यह आपकी भूल है। कार के केबिन में कुछ हानिकारक कणों की मात्रा अत्यधिक उच्च स्तर की होती है, जितना पहले अनुमान लगाया गया था तकरीबन उसकी दोगुनी तक ज्यादा होती है। इस अध्ययन के निष्कर्ष में कारों के

अंदर प्रदूषण का पता चला है, जिसमें उन रसायनों की मात्रा दो गुनी पाई गई जो ऑक्सीडेटिव तनाव पैदा करते हैं, जिससे श्वसन और हृदय रोग, कैंसर और न्यूरोडीजेनेरेटिव बीमारियों सहित कई रोग पैदा होते हैं।

अध्ययनों में हुआ खुलासा : बच्चे स्मार्ट हैं, पर
स्मार्ट बच्चों का बचपन छीन रहे हैं गैजेट्स...

आज के तकनीकी युग में बच्चों को गैजेट्स से दूर रखना मुमकिन नहीं है। दरअसल ये चीजें अब दिनचर्या का हिस्सा बन चुकी हैं। ये हमारे सहयोग के लिए हैं। ऐसा न हो कि यह हमारी मालिक और हम इनके गुलाम बन जायें। वैज्ञानिकों ने भी गैजेट्स के ज्यादा इस्तेमाल के नुकसान के बारे में चेताया है। विभिन्न अध्ययनों में भी साबित हुआ है कि भिन्न गैजेट्स बच्चों को अलग-अलग तरीके से नुकसान पहुँचाते हैं। आइये जाने कि इन गैजेट्स का बच्चों पर क्या असर होता है, इसे कैसे कम किया जा सकता है और अध्ययन इसके बारे में क्या कहते हैं...

हाईटेक होते जमाने में जहाँ हर चीज मोबाइल ऐप पर उपलब्ध होती जा रही है, ऐसे में बच्चों को गैजेट्स से दूर रखना संभव नहीं है। उन्हें इन चीजों की जानकारी होना भी समय की माँग है। हाँ, इसके नुकसानों को देखते हुए इनके इस्तेमाल की समय सीमा जरूर तय की जा सकती है। आपने देखा होगा माता-पिता की जागरूकता के बावजूद आज दो साल के बच्चे भी टच स्क्रीन फोन चलाना, स्वाइप करना, लॉक खोलना और कैमरे पर फोटो खींचना जानते हैं। एक नये शोध (82 प्रश्नावली के आधार पर) के अनुसार, 87 प्रतिशत अभिभावक प्रतिदिन औसतन 15 मिनट अपने बच्चों को स्मार्टफोन खेलने के लिए देते हैं, जबकि 62 फीसदी ने बताया कि वे अपने बच्चों के लिए ऐप्स डाउनलोड करते हैं। स्मार्टफोन के मालिक हर 10 में से 9 अभिभावकों ने बताया कि उनके नन्हे-मुन्ने फोन स्वाइप करना जानते हैं, 10 में से 5 ने बताया कि उनके बच्चे फोन को अनलॉक कर सकते हैं, जबकि कुछ अभिभावकों ने माना कि उनके बच्चे फोन के अन्य फीचर भी ढूँढ़ते हैं। मनोवैज्ञानिकों की मानें, तो पिछले 3 वर्षों में तकनीक पर आश्रित लोगों की संख्या

30 गुना बढ़ गई है।

अधिक उपयोग का असर-माइकल कोहेन ग्रुप की ओर से किये गये एक शोध से पता चला कि टीनएजर्स गैजेट्स से खेलना ज्यादा पसंद करते हैं। गैजेट्स लेकर दिनभर बैठे रहने के कारण उनमें मोटापे की समस्या बढ़ रही है। साथ ही आईपैड, लैपटॉप, मोबाइल आदि पर बिजी रहने के कारण वो समय पर सो भी नहीं पाते, जिससे उन्हें शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं से दो-चार होना पड़ता है। गैजेट के अधिक इस्तेमाल से बच्चों में व्यग्रता, उत्कंठा, अवसाद, आत्मकेंद्रित, मनोरोग व अन्य समस्याएँ हो रही हैं।

ये हैं दुष्प्रभाव-हाल ही में हुए अध्ययनों में सामने आया है कि टेक्नोलॉजी हमारे बच्चों को फायदा पहुँचाने की बजाये लांग-टर्म में नुकसान पहुँचा रही है।

दिमाग पर असर-विकसित हो रहे दिमाग पर टेक्नोलॉजी के ओवर एक्सपोजर से बच्चों में सीखने की क्षमता में बदलाव, ध्यान न लगना, भोजन ठीक से न करना, आँखें खराब होना, हायपर एक्टीविटी और स्वयं को अनुशासित व नियमित न रख पाने की समस्याएँ पैदा होने लगी हैं।

धीमा विकास-हमारे पास जिस प्रकार की टेक्नोलॉजी है वो बच्चों की मूवमेंट्स को सीमित कर देती है जिससे उनका शारीरिक विकास पिछड़ जाता है। 12 साल से कम उम्र के बच्चों के जीवन में टेक्नोलॉजी का दखल उनके विकास व शैक्षणिक प्रगति के लिए दुष्प्रभावी है।

नींद की कमी-75 प्रतिशत नौ से दस साल की उम्र के इन बच्चों की नींद टेक्नोलॉजी के दखल के कारण प्रभावित हो रही हैं जिससे उनकी पढ़ाई प्रभावित होती है।

मानसिक रोग-टेक्नोलॉजी के अनियंत्रित उपयोग से बच्चों में डिप्रेशन, एंजाइटी, अटैचमेंट डिसॉर्डर, ध्यान नहीं लगना, ऑटिज्म, बाइपोलर डिसॉर्डर, उन्माद और चाइल्ड बिहेवियर जैसी समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं।

डिजिटल स्मृतिलोप-हाई-स्पीड मीडिया कंटेंट से बच्चों के फोकस करने की क्षमता बुरी तरह से प्रभावित होती है। ध्यान भटकने की समस्या से ग्रस्त बच्चों को पढ़ाई करने में दिक्कत आती है।

स्टडी-मानसिक विकास पर बुरा प्रभाव-एक अन्य अध्ययन के मुताबिक-आजकल के बच्चों का रूझान टीवी की ओर तेजी से बढ़ रहा है, लेकिन 80 फीसदी से अधिक बच्चे टेबलेट, स्मार्टफोन और कंप्यूटर का उपयोग करते हैं। हैल्थ एक्सपर्ट का कहना है बच्चों में इस तरह की आदत उनके मानसिक और शारीरिक दोनों को प्रभावित करती हैं।

ऐसे बच्चे बोलते हैं देर से-आपका नन्हा शिशु अगर ज्यादा समय स्मार्टफोन, टैबलेट और स्क्रीन वाले दूसरे उपकरणों से खेलने में बिताता है, तो उसके बोलने में देरी हो सकती है। एक शोध के अनुसार स्क्रीन वाले उपकरणों के हर 30 मिनट ज्यादा इस्तेमाल से बोलने में देरी की आशंका 49 फीसदी तक बढ़ जाती है। कनाडा के ओनटोरियो स्थित हॉस्पीटल फॉर सिक चिल्ड्रेन की बालरोग विशेषज्ञ कैथरीन बिरकेन का कहना है, 'बच्चों को एक निश्चित समय तक ही स्क्रीन वाल उपकरणों का इस्तेमाल करना चाहिए।' अध्ययन बताता है कि. स्क्रीन वाले उपकरण हाथ में रखने और बोलने में देरी के बीच गहरा संबंध है। शोध रिपोर्ट सैन फ्रांसिस्को में हुई पिडिएट्रिक एकेडमिक सोसाइटीज की बैठक में पेश की गई।

क्यों हो समय सीमा?-अमरीकन एकेडमी ऑफ पीडियाट्रिक्स की स्टडी के अनुसार दो साल से कम आयु के बच्चों को किसी भी तरह की स्क्रीन से दूर रखना चाहिए। तीन से पाँच वर्ष के बच्चे एक घंटा और टीनएज बच्चों को केवल 30 मिनट प्रतिदिन तक गैजेट इस्तेमाल की अनुमति दी जानी चाहिए।

बच्चे को खुश रखने वाला गीत

एक शोध में वैज्ञानिकों ने यह जाना कि बच्चे जब गर्भ में रहते हैं तब भी वे संगीत सुन सकते हैं और उसको याद भी रख सकते हैं। संगीत थैरेपी पर काम कर रहे अमेरिका के सी. एंड जी. बेबी क्लब ने संगीत साइकोलॉजिस्ट लॉरेन स्टीवर्ट के साथ मिलकर वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऐसा गीत तैयार किया है, जो बच्चों को खुश रखेगा। समूह के डॉ. कैस्पर एडीमैन ने 'टू बेबी लॉफ्टर' गीत बनाया है। उनका कहना है कि यह तो पता था कि बच्चे संगीत सुन सकते हैं, लेकिन अब तक वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाला गीत नहीं बना था। उन्होंने गीत का वीडियो भी तैयार किया

है। जो कई वेबसाइट्स पर शेयर किया जा रहा है।

चाहिए एक अच्छी किताब

अमेरिका की येल यूनिवर्सिटी के शोधकर्त्ताओं ने पता लगाया है कि एक अच्छी कहानी पढ़ने से दिमाग सक्रिय रहता है और तनाव से मुक्ति मिलती है। 30 मिनट पढ़ने की आदत लाभकारी है। मैगजीन, अखबार से अधिक किताब पढ़ने से दिमाग ज्यादा सक्रिय रहता है, उम्र बढ़ती है। अतः दिमाग को सक्रिय एवं दीर्घायु बनाने के लिए पढ़ने की आदत डालिये।

आप जो भोजन करते हैं वह या तो दवा का सबसे शक्तिशाली और सुरक्षित रूप होता है या फिर धीमे जहर का एक रूप। **-एन विगमोर**

अगर स्वास्थ्य ही नहीं है, तो ज्ञान प्रकट नहीं हो सकता, कला जाहिर नहीं हो सकती, शक्ति लड़ नहीं सकती, धन व्यर्थ है और बुद्धि का प्रयोग नहीं किया जा सकता। **-हेरोफिलस**

अनेक मिथकों के चलते देसी घी को सेहत का दुश्मन समझ लिया गया ह, जबकि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान भी आज उस बात की पुष्टि करता है, जिसे आयुर्वेद ने हजारों वर्ष पूर्व बताया था। सही मात्रा में व सही तरीके स खाये जाने पर देसी घी स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है और वजन को भी नहीं बढ़ने देता।

सेहत का दुश्मन नहीं है देसी घी

वैज्ञानिक अनुसंधानों से विदित हुआ है कि देसी घी में 'कन्जूगेटेड लिनोलीइक एसिड' (सी.एल.ए.) नामक फैटी एसिड पाया जाता है, जो अद्भुत औषधीय गुणों से संपन्न है। शोध-कार्य के अंतर्गत मोटापाग्रस्त महिलाओं में बिना खान-पान एवं जीवन-शैली में बदलाव किये ही मात्र सी.एल.ए. की मदद से एक वर्ष के पश्चात् वसा में 9 प्रतिशत की कमी पाई गई है। ओमेगा-6 फैटी एसिड चयापचय (मेटाबोलिज्म) में वृद्धि के साथ ही शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता (इम्यूनिटी) को बढ़ाता है और रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को नियंत्रित करने में मदद करता है। वसा को घटाकर मोटापा कम करने के अतिरिक्त घी टाइप-2 डायबिटीज, हार्ट डिजीज, कैंसर,

ऑस्टियोपोरोसिस एवं एलर्जी से बचाव में भी सहायक है। देसी घी मक्खन से अधिक सुरक्षित एवं लाभदायक है। इसमें 'ब्यूटिरिक एसिड' नामक फैटी एसिड प्रचुर मात्रा में मौजूद रहता है, जो मस्तिष्क को भली-भाँति सक्रिय रखते हुए डिमेंशिया (स्मृतिलोप) तथा एल्जाइमर्स रोग से बचाता है और टी-सेल के उत्पादन को प्रोत्साहित कर शरीर की इम्यूनिटी को बढ़ाता है। यह एंटी-ऑक्सीडेंट, एंटी-कैंसर, एंटी-फंगल, एंटी-बायोटिक व एंटी-वायरल भी बताया गया है। पाचन-तंत्र को सक्रिय करने तथा वसा में घुलनशील विटामिन (ए, डी, ई व के) के कारण नेत्रों की ज्योति बढ़ाने तथा हड्डियों को मजबूती प्रदान कर जोड़ों का दर्द घटाने में भी सहायक है। यह वीर्यवर्द्धक भी है। आयुर्वेद की मान्यता है कि घी में कांति, ओज, तेज, लावण्य, बुद्धि, स्मृति, मेधा, आयु और बल को बढ़ाने का चमत्कारिक गुण है। अन्य की अपेक्षा गाय का घी अधिक गुणकारी माना गया है।

लेकिन रहे याद-घी में लगभग शत-प्रतिशत वसा है। स्वास्थ्यप्रद संतृप्त वसा होने के बावजूद घी के अत्यधिक सेवन की सलाह नहीं दी जाती, 5 ग्राम गाय के शुद्ध घी से 45 कैलोरी ऊर्जा मिलती है। सामान्य व्यक्ति के लिए प्रतिदिन दो-तीन चम्मच (10-15 ग्राम) घी की मात्रा लिया जाना ही पर्याप्त है, वजन घटाने हेतु 'डाइट प्लान' में देसी घी को भी शामिल किया जा सकता है, कच्चा घी कभी न खाये, यथासंभव पकाकर ही ग्रहण करे, रात्रि के समय घी का सेवन कम से कम करे, प्रिजर्वेटिव युक्त डिब्बाबंद घी की अपेक्षा पारंपरिक तरीके से घर में निर्मित शुद्ध देसी घी का प्रयोग उचित होगा, बिना रेफ्रिजरेटर के घी को सामान्य तापमान पर भी कई सप्ताह तक सुरक्षित रखा जा सकता है। ध्यान रहे, पानी एवं सूर्य का प्रकाश घी की गुणवत्ता पर बुरा असर डालते हैं। अतः भंडारण में सावधानी बरतें, बीमार व्यक्ति बिना चिकित्सकीय परामर्श के घी का सेवन न करें।

फास्ट-फूड संस्कृति प्रधान आधुनिक वातावरण में मोटापा तथा डायबिटीज, हाई ब्लड प्रेशर, हार्ट अटैक, कैंसर जैसे गंभीर रोग जो पहले न के बराबर थे, अब कम आयु वाले लोगों में भी बहुतायत से पाये जा रहे हैं। अतः खान-पान एवं जीवन-शैली के प्रति सचेत रहते हुए ट्रांस फैट एवं वनस्पति घी के इस्तेमाल से भी बचें।

कैंसर को करता है परास्त!-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान

(एन.डी.आर.आई.) के शोध-कार्यों से पता चला है कि गाय का घी उन एंजाइम्स की उपलब्धता को बढ़ाता है, जो कैंसरकारक पदार्थों का निर्विषीकरण (डीटॉक्सीफिकेशन) कर कैंसर उत्पन्न करने वाले रसायनों (कार्सीनोजेन्स) को निष्क्रिय करता है। यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो, यू.एस.ए. के डॉ. डेलबर्ट, डॉ. शींड ने विभिन्न शोध-पत्रों का अध्ययन कर यह निष्कर्ष निकाला कि सी.एल.ए. के उच्च स्तर वालीद महिलाओं में स्तन कैंसर की दर कम पाई गई। इसी प्रकार, बड़ी आँत व पुरुषों में प्रोस्टेट के कैंसर की दर में भी कमी पाई गई।

आप भी ले रहे हैं बॉडी बिल्डिंग सप्लीमेंट्स?

आमतौर पर जिम ट्रेनर लोगों को बॉडी बिल्डिंग के लिए सप्लीमेंट की सलाह देते हैं। बहुत से जिम सप्लीमेंट्स बेचने का काम भी करते हैं, वह उन लोगों पर इन्हें लेने के लिए दबाव भी बनाते हैं, जिन्हें इसकी जरूरत नहीं होती। ये सप्लीमेंट्स दो प्रकार के होते हैं, एक 'फैट बरनर्स' और दूसरे 'व्हे प्रोटीन।' इसमें से फैट बर्नर्स वजन कम करते हुए मसल्स बनाने के लिए उपयोग में लिया जाता है, जबकि व्हे प्रोटीन शरीर का माँस बढ़ाने के लिए लिया जाता ह।

इस विषय में जानकारों की माने तो वे कहते हैं सच तो यह है कि अगर आपको सही तरीके से बॉडी बिल्डिंग करनी हो तो आप इन सप्लीमेंट्स का उपयोग न करे तो बेहतर होगा। क्योंकि शरीर एक प्रक्रिया के तहत अपने आकार में परिवर्तन करता है। आजकल युवा दोस्तों को देखकर उनके जैसा बनने के लिए इन सप्लीमेंट्स का उपयोग अपने आप करने लगते हैं। जो कि उनके लिए बेहद खतरनाक साबित हो सकते हैं। वर्तमान समय की भागदौड़ में अगर आप रोज व्यायाम करने जिम जा रहे हैं तो यह एक अच्छी बात है, पर यदि आप बॉडी बिल्डिंग की ओर आकर्षित है तो ध्यान रखे कि वर्तमान समय में यह शौक कम बाजार ज्यादा हो गया है। इसलिए सचेत रहते हुए बिना विशेषज्ञों की राय के किसी भी प्रकार का सप्लीमेंट न लें। इस बात पर भी गौर करने की जरूरत है कि आपको जो जिम ट्रेनर इन सप्लीमेंट्स की सलाह दे रहा है, उसकी योग्यता क्या है।

फैट बर्नर्स में स्टेरॉयड होता है, जिससे बाँझपन, दिल और लिवर से संबंधित

बीमारियाँ हो सकती हैं, अगर व्हे प्रोटीन को शरीर के वजन एवं वर्क आउट के हिसाब से न लिया जाय, तो उससे किडनी फेलियर का खतरा हो सकता है।

क्या है व्हे प्रोटीन-बहुत से लोग व्हे का मतलब छाछ या मट्ठा समझते हैं। अंग्रेजी में छाछ को व्हे कहते हैं मगर प्रोटीन छाछ से नहीं बनाया जाता। दूध से चीज बनाते वक्त जो पानी निकलता है उसे प्रोसेस करने के बाद जो पाउडर निकलता है उसे व्हे प्रोटीन कहते हैं।

हेल्थ फैक्ट्स-एक अध्ययन के मुताबिक 12 लाख मच्छर मिलकर एक व्यक्ति का पूरा खून चूस सकते हैं, मानव त्वचा के एक स्क्वायर इंच में लगभग 20 हजार रक्त वाहिनियाँ होती हैं, वैज्ञानिक अनुसंधानों के मुताबिक नीली आँखों वालों की अँधेरे में देखने की क्षमता काली आँखों की तुलना में अधिक होती है, क्या आप जानते हैं हमारे शरीर में पाये जाने वाले लोहे से तीन इंच लंबी कील, कार्बन से 9 पेंसिल, वसा से 9 साबुन की टिकिया, फॉस्फोरस से 2·हजार से अधिक माचिस की तीलियाँ बनाई जा सकती हैं।

नई रिसर्च ने बताया, एक्सरसाइज से कैसे शरीर और मन स्वस्थ रहता है

कई कारणों से महत्वपूर्ण हैं शारीरिक गतिविधियाँ, ताकत बढ़ती है, मसल्स मजबूत होती हैं, मूड खुशनुमा रहता है

आपको हर दिन करने की जरूरत नहीं-अमेरिका में हर सप्ताह 150 मिनट की मध्यम एक्सरसाइज की गाइडलाइन जारी की गई है। अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन की पत्रिका में प्रकाशित रिसर्च में बताया गया है, सप्ताह में एक या दो दिन अधिक एक्सरसाइज कर वैसे ही फायदे पाये जा सकते हैं जो नियमित कसरत से मिलते हैं। यूरोप में 63000 लोगों के सर्वे से पता लगा कि सप्ताह में एक या दो दिन 150 मिनट की एक्सरसाइज से मौत का खतरा उन लोगों की तुलना में 30 से 34 प्रतिशत कम हो गया जो निष्क्रिय रहे। सप्ताह के ज्यादातर दिनों में एक्सरसाइज करने वाले लोगों के मरने का खतरा 35 प्रतिशत तक कम पाया गया है। यह उन लोगों के

समान है जिन्होंने अक्सर कसरत नहीं की।

योग आपके जीन्स को बदल सकता है-फ्रंटियर्स इन इम्यूनोलॉजी पत्रिका से प्रकाशित नई रिसर्च ने दर्शाया है, योग और ध्यान से कमजोर सेहत और अवसाद से संबंधित जीन्स में परिवर्तन हो सकते हैं। ध्यान, योग, ब्रीदिंग एक्सरसाइज और ध्यान को चीनी क्रिया गिगोंग एवं ताई ची के जैविक प्रभावों पर प्रकाशित 18 अध्ययनों के विश्लेषण से शोधकर्त्ताओं ने पाया कि दिमाग और शरीर की ये एक्सरसाइज शरीर में जलन, सूजन (इनफ्लेमेशन) बढ़ाने वाले जीन्स की गतिविधि को शांत कर देती हैं। जब तनाव अनियंत्रित हो जाये तो इनफ्लेमेशन शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को क्षति पहुँचाता है। जो लोग ध्यान, योग नियमित रूप से करते हैं, उनमें इनफ्लेमेशन के जैविक लक्षण कम होते हैं। विरासत में मिले जीन्स स्थिर नहीं हैं और डीएनए की गतिविधि मानवीय नियंत्रण पर निर्भर करती है।

स्ट्रेंथ ट्रेनिंग से बेहतर होगा शरीर-माँसपेशियों को बड़ा करने और हड्डियों को मजबूत बनाने में स्ट्रेंथ ट्रेनिंग सबसे ज्यादा एक्सरसाइज है। इससे टाइप-2 डायबिटीज, दिल की बीमारियों सहित कई रोगों का खतरा कम होता है। एक नई स्टडी से पता लगा है, जिन महिलाओं ने ताकत बढ़ाने वाली एक्सरसाइज की उनमें टाइप-2 डायबिटीज का खतरा 30 प्रतिशत और दिल की बीमारियों का खतरा 17 प्रतिशत कम पाया गया है। स्ट्रेंथ ट्रेनिंग का एकमात्र तरीका पावरलिफ्टिंग ही नहीं है। हाथ, पैरों से वजन उठाने जैसे तरीकों से फैट कम कर सकते हैं और हड्डियाँ ठोस हो सकती हैं।

तनाव रहित हो जाता है दिनभर का काम-हर दिन काम के दबाव को दूर करने का सबसे अच्छा तरीका एक्सरसाइज है। ऑक्यूपेशनल हेल्थ साइकोलॉजी पत्रिका में प्रकाशित एक स्टडी के अनुसार 15 मिनट पैदल चलने से लोगों को काम पर अधिक फोकस करने में मदद मिली। दिन के अंत में उन्होंने ज्यादा थकान महसूस नहीं की। शोधकर्त्ताओं ने 100 कामगारों को अपने लंच के रूटीन में दस दिन तक बदलाव करने के लिए कहा। उनमें से आधे लोगों ने खाना खाने के बाद पास ही एक पार्क में 15 मिनट चहलकदमी की। दूसरे ग्रुप ने ऑफिस के अंदर गहरी साँस लेने और मानसिक एकाग्रता जैसी एक्सरसाइज की। दोनों ग्रुप के लोगों ने बताया, उन्होंने

तनाव कम महसूस किया। रिसर्च बताती है, रोज अधिक कैलोरी खर्च करने वाले लोग काम से जुड़े तनाव और गुस्से को घर नहीं ले जाते हैं।

दौड़ने से घुटने भी मजबूत होते हैं-ऐसी धारणा है कि लंबे समय तक दौड़ने से जोड़ों में दर्द, गठिया, घुटनों में कमजोरी और अन्य समस्याएँ हो सकती हैं। लेकिन, एक स्टडी में पाया गया है, थोड़ा बहुत दौड़ने से घुटने के जोड़ में इनफ्लेमेशन कम हो गया। एप्लाइड फिजियोलॉजी जर्नल में प्रकाशित रिपोर्ट में बताया गया है, ब्रिघम यंग यूनिवर्सिटी के शोधकर्त्ताओं ने 18 से 35 वर्ष की आयु के 15 स्वस्थ दौड़ाकों को लैब में ट्रेडमिल पर 30 मिनट तक दौड़ाया। दौड़ने से पहले और बाद में उनके खून और घुटने के द्रव के सैम्पल लिये गये। जाँच से पता लगा कि 30 मिनट दौड़ने के बाद इनफ्लेमेशन में कमी आई। दौड़ने से घुटनों में तकलीफ कम हो सकती है।

दिमाग तेज होता है और याददाश्त सुधरती है-एक्सरसाइज के कारण दिल तेजी से खून पंप करता है। यह शरीर में ऑक्सीजन का सबसे अधिक उपयोग करने वाले दिमाग के लिए फायदेमंद है। शारीरिक गतिविधि से मस्तिष्क काशिकाओं की सुरक्षा, उनकी मरम्मत और नई कोशिकाओं के जन्म की न्यूरोट्रॉफिक गतिविधि बढ़ती है। व्यायाम करने वाले लोगों के दिमाग के कुछ हिस्से अधिक बड़े होते हैं। ज्यादा हलचल से याददाश्त कमजोर नहीं पड़ती है। शोधकर्त्ताओं ने एक स्टडी में नोट किया एक दिन में 68 मिनट की हल्की शारीरिक गतिविधि करने वाले लोगों का दिमाग इससे कम सक्रिय लोगों की तुलना में अधिक स्वस्थ रहा। दौड़ने, स्वीमिंग जैसी एरोबिक एक्सरसाइज दिमागी सेहत के लिए बेहतर है।

वैज्ञानिकों की मानें, बच्चों को मिट्टी में खेलने दें

बच्चों का विकास और प्रतिरक्षा तंत्र मजबूत करने में सहायक

दुनिया के हर माँ-बाप अपने बच्चे को साफ-सुथरा, सुरक्षित व कीटाणु रहित वातावरण देना चाहते हैं। कोई नहीं चाहता कि उनका बच्चा किसी गंदगी या कीटाणु की चपेट में आये। मगर अब माता-पिता इसे लेकर आश्वस्त हो सकते हैं, क्योंकि वैज्ञानिकों का भी मानना है कि मिट्टी बच्चों के लिए हानिकारक नहीं है, बल्कि उनकी

प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है। अमरीका में शोधकर्त्ताओं की टीम के अगुवा वैज्ञानिक जैक गिलबर्ट ने मिट्टी और बच्चों पर यह शोध किया है।

प्रतिरोधक क्षमता पर लिखी किताब-दो बच्चों के पिता गिलबर्ट ने यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो से माइक्रोबॉयलॉजी परिस्थितिकी तंत्र की पढ़ाई की है। वे खोज कर रहे हैं कि मिट्टी और उसमें पाये जाने वाले कीटाणु किस तरह बच्चों को प्रभावित करते हैं। गिलबर्ट ने मिट्टी में पाये जाने वाले जीवाणुओं से फायदे, बच्चों का विकास और प्रतिरक्षा नाम से एक किताब लिखी है।

कीटाणु है फायदेमंद-गिलबर्ट के मुताबिक, कई बार जमीन पर खाना गिरने के बाद उसे फेंक देते हैं, क्योंकि आपको लगता है कि वह गंदा हो जाता है। लेकिन ऐसा नहीं है। खाने में लगे कीटाणु बच्चे के लिए फायदेमंद होंगे।

एलर्जी से छुटकारा-बच्चों को मिट्टी में खेलने से एलर्जी इसलिए होती है, क्योंकि हम उन्हें कीटाणु से बचाने के लिए बहुत कुछ करते हैं। इसलिए उन्हें एलर्जी हो जाती है। जीवाणु की कमी से बच्चे अस्थमा, फूड एलर्जी जैसी बीमारियों की चपेट में आ जाते हैं।

माता-पिता अपने बच्चों को लेकर काफी चिंतित होते हैं। खासकर सफाई के मामले में। उन्हें रोकने के बजाय आजादी से मिट्टी में खेलने देना चाहिए। बिना किसी कीटाणु की चिंता किये। हाँ कोई फ्लू है तो हाथ धोने दे और कुत्ते के साथ भी बेझिझक खेलने दें। इससे कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा। **-जैक गिलबर्ट (वैज्ञानिक)**

अनियमित नींद से पढ़ाई में कमजोरी

अगर आपके बच्चे को बेसमय सोने की आदत है तो बेहतर है कि आप इसे लेकर गंभीर हो जाये। क्योंकि अनियमित नींद बच्चे की एकाग्रता-क्षमता को प्रभावित कर सकती है। बच्चा आगे जाकर पढ़ाई में कमजोर हो सकता है। हाल ही में हुए एक शोध में यह बात सामने आई है।

ऑस्ट्रेलिया की क्वींसलैंड यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी में किये गये इस शोध में सात वर्ष उम्र तक के 2,880 बच्चों का आकलन किया गया था। शोधकर्त्ताओं ने बताया कि अगर पाँच साल की आयु तक बच्चों की नींद प्रक्रिया को व्यवस्थित नहीं

कर लिया जाये, तो ऐसे बच्चों को स्कूल के समय के साथ सामंजस्य बैठाने में परेशानी हो सकती है। साथ ही एक अन्य अध्ययन से यह भी सामने आया कि नियमित नींद लेने से बच्चों की याददाश्त भी अच्छी होती है। नींद उनके मानसिक विकास के लिए महत्वपूर्ण है।

बच्चों में तनाव का कारण बन रहा है पढ़ाई का बोझ

हमने जीवन को दौड़भाग भरा तो बनाया ही है, इस लाइफ स्टाइल में बच्चों को भी घसीट लिया है। पढ़ाई और अन्य क्षेत्रों में प्रतियोगिता इतनी बढ़ा दी है कि अब बच्चे इसके कारण तनाव की चपेट में आने लगे हैं। अध्ययनों में सामने आया है कि बस्ते के बोझ के साथ-साथ बच्चों के दिमाग पर स्ट्रेस इतना बढ़ गया है कि उनके मानसिक और शारीरिक विकास में तो बाधाएँ आने लगी हैं उनके व्यवहार में भी बदलाव हो रहा है।

66 फीसदी छात्रों ने माना कि उनके माता-पिता उन पर अच्छे नंबर लाने का दबाव डालते हैं, 6.23 फीसदी बच्चे इस दबाव के कारण आत्महत्या कर लेते हैं।

परिदृश्य-पढ़ाई के बोझ से परेशान छात्र दिल्ली से हरिद्वार पहुँच गये। पुलिसकर्मियों ने पूछताछ की तो तीनों किशोरों ने बताया कि उनका घर से भागने का कारण पढ़ाई का तीनों में से दो सातवीं और एक आठवीं में पढ़ता है।

एक अजीब घटना में-एक छात्र ने परीक्षा पत्र में आत्महत्या का नोट लिख दिया कि वह अपनी पढ़ाई के दबाव का सामना नहीं कर पा रहा था। इंटरमीडिएट में पढ़ने वाली एक लड़की ने इसलिए ट्रेन के आगे कूदने की कोशिश की क्योंकि वो गणित में फेल हो गई थी। घर के लोगों ने उसे डाँटा था। ये कुछ घटनायें हैं, जो छात्रों में तनाव के बढ़ते स्तर को दर्शाती है। दरअसल शिक्षा ही मनुष्य को सभ्य बनाती है। इसलिए हमारे देश में शुरू से ही शिक्षा को प्राथमिकता दी गई है। प्राचीन समय में शिक्षा प्रणाली सरल थी। इसके तनावपूर्ण होने का भी कोई स्केल नहीं मिलता है। वर्तमान में शिक्षा को चुनौतीपूर्ण और प्रतिस्पर्द्धात्मक बना दिया गया है। परिणाम को ज्यादा महत्व दिया जाता है। जिस कारण छात्रों पर अच्छा प्रदर्शन और टॉप करने के लिए दबाव रहता है। इसे 'शैक्षणिक तनाव' के रूप में जाना जाता है।

तनाव के कारण-खुद पैदा किया हुआ, माता-पिता, भाई-बहन और दोस्तों से दबाव, शिक्षकों से दबाव, परीक्षा से संबंधित।

तनाव की पहचान-ध्यान केंद्रित न कर पाना, अक्सर स्कूल से कॉलेज से छुट्टी लेना, अनिद्रा, भ्रम, चिंता, डर, चिड़चिड़ापन, घबराहट।

भारी बस्ता भी तनाव का कारण-एसोचैम के एक सर्वे में यह भी सामने आया है कि 5 से 12 वर्ष उम्र वर्ग के बच्चों में भारी स्कूल बैग की वजह से पीठ दर्द और तनाव का खतरा ज्यादा होता है।

स्वभाव पर पड़ रहा है असर-मनोचिकित्सक नियति धवन के अनुसार शैक्षणिक दबाव छात्र के अच्छे प्रदर्शन के लिए बाधक है। प्रत्येक व्यक्ति अलग है, कुछ छात्र शैक्षणिक तनाव का अच्छी तरह से सामना कर लेते हैं। लेकिन कुछ छात्र ऐसा नहीं कर पाते, जिसका असर उनके स्वभाव पर पड़ रहा है। वे माता-पिता के साथ उग्र होने लगते हैं। ऐसे केस अब सामने आने लगे हैं। ऐसे में वो अत्यधिक या कम खाने लगते हैं। असमर्थता को लेकर उदास छात्र तनाव से ग्रसित होने के साथ ही पढ़ाई भी बीच में छोड़ देते हैं। बदतर मामलों में, तनाव से प्रभावित छात्र आत्महत्या का विचार भी मन में लाने लगते हैं। आज अभिभावक और शिक्षक दोनों ही बच्चों को लेकर बहुत ज्यादा महत्वाकांक्षी हो गये हैं। स्कूल में अच्छे प्रदर्शन और पढ़ाई के तनाव के साथ-साथ घर में भी उन पर ऐसा ही दबाव रहता है। कई बार इस दबाव में बच्चे मानसिक तौर पर टूट जाते हैं। एक अनुमान के अनुसार सिर्फ दिल्ली में ही प्रतिमाह चार से ज्यादा बच्चे ऐसे तनाव के कारण आत्महत्या कर रहे हैं। इसमें एक बड़ी वजह स्कूल और परिवार का दबाव भी है।

डिजिटल पढ़ाई-स्कूली बस्ते का बोझ और बच्चों में तनाव कम करने के लिए अब सरकार भी प्रयासरत है। इसके लिए डिजिटल पढ़ाई का कंसेप्ट दिया गया है, जिसके तहत केन्द्रीय विद्यालय स्कूलों में छात्रों को टेबलेट दिये जा रहे हैं। मानव संसाधन विकास मंत्री प्रकाश जावेडकर ने एक प्रश्न के उत्तर में यह जानकारी दी।

कसरत से दूर होते हैं 24 खतरे

नियमित कसरत से सोचने, सीखने और फैसला लेने की क्षमता में तेजी आती है। साथ ही यह स्थिति ज्यादा उम्र तक बनी रहती है। रोजाना व्यायाम से 24 खतरों को दूर किया जा सकता है। हाल में एक वैज्ञानिक शोध में यह बात सामने आई है कि जो लोग नियमित रूप से कसरत करते हैं, वे शारीरिक और मानसिक रूप से ज्यादा सेहतमंद होते हैं। उनमें ज्यादा ऊर्जा और सोचने की क्षमता होती है। उन्हें नींद भी अच्छी आती है।

विशेषज्ञों के अनुसार एक्सरसाइज से एंडोर्फिन हार्मोन निकलता है। यह हमारे शरीर को रिलैक्स करता है। इसके साथ ही शरीर से टोक्सिन बाहर निकलता है। इससे हमारा शरीर स्वस्थ रहता है। ऐसे में हमारी माँसपेशियाँ रिलैक्स फ्री होती हैं। जो कि हमारे दिमाग को आराम पहुँचाती है।

रोजाना सामान्य से सख्त कसरत करने से दिल के रोग और हेमोरेजिक स्ट्रोक का खतरा कम होता है। इसके अलावा कैंसर की रोकथाम और इलाज में व्यायाम के सीधे संबंध के प्रमाण मिले हैं। मानसिक स्वास्थ्य के नजरिये से भी कसरत अवसाद का खतरा कम करती है। शोध में यह भी पता चला है कि एरोबिक्स या माँसपेशियों को मजबूत करने वाली कसरतें हफ्ते में तीन से पाँच बार 30 से 60 मिनट तक प्रतिदिन करने से मानसिक स्वास्थ्य में काफी लाभ होता है।

18 से 65 साल के सेहतमंद वयस्क प्रत्येक सप्ताह 150 मिनट की सामान्य कसरत करें, जिसमें 30 मिनट की वॉक सप्ताह में पाँच दिन शामिल है, जॉगिंग जैसी ज्यादा मेहनत वाली कसरत सप्ताह में तीन दिन 20 मिनट करनी चाहिए, सेहतमंद वयस्कों को सप्ताह में दो बार स्ट्रेंथ ट्रेनिंग करनी चाहिए, जो शरीर की प्रमुख माँसपेशियों पर केंद्रित होनी चाहिए, उम्रदराज लोगों में कसरत संतुलन और लचक बनाये रखने में मदद करती है, जो लोग कसरत करते हैं, उन्हें मध्यम उम्र या उम्रदराज होने पर शारीरिक गतिविधियाँ जारी रखनी चाहिए, धूम्रपान ना करना और खानपान बेहद अहम।

आहार नहीं देने वाले व धर्म से धन-मान चाहने वाले भी हिंसक

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

हिंसायाः पर्यायो, लोभोऽत्र निरस्यते यतो दाने।
तस्मादतिथि वितरणं हिंसा व्युपरमणमेवेष्टम्।। (172) (पुरुषार्थ सिद्ध)

लोभ होता है हिंसा की पर्याय, दान में होता है लोभ निरसन।
अतः साधुओं को दान देना, अहिंसा स्वरूप होता निदान।। (1)

गृहमागताय गुणिने, मधुकर वृत्या परानपीडयते।
वितरति यो नाऽतिथये, स कथं नहि लोभवान् भवति।। (173) (पुरुषार्थ सिद्ध)

रत्नत्रयधारी भ्रामरी वृत्ति वाले, घर पर आते है जो साधु-गण।
उन्हें जो आहार न देते, वे निश्चय से होते हिंसक जन।। (2)

कृत्मात्मार्थं मुनये, ददाति भक्तमिति भवितस्त्यागः।
अरति-विषाद-विमुक्तः, शिथलित लोभो भवत्यहिंसैव।। (174) (पुरुषार्थ सिद्ध)

भक्ति-शक्ति-शुद्ध भाव से, बना हुआ जो स्वहेतु भोजन/(आहार)।
उसे साधुओं को दान देने से, अरति-विषाद-लोभ होते क्षीण।। (3)

अतएव दानी होते अहिंसक, सप्तगुण नवधाभक्ति होने से।
इसमें गर्भित चारों ही दान, औषधि-ज्ञान व अभय दान।। (4)

दान से तृप्त साधु-साध्वी करते, ध्यान-अध्ययन व वैयावृत्ति।
आत्म साधना से परम्परा से, प्राप्त करते वे परमसिद्धि/(मुक्ति)।। (5)

दाताओं को भी मिलते फल, उदारता-पवित्रता व मृदुता।
सरलता-निर्मलता-परोपकारिता-तीर्थोन्नति आदि व आत्मशुद्धता।। (6)

ये सभी आत्मिक गुण ही, यथार्थ से होती है भाव अहिंसा।
जो लोभी समर्थ होने पर भी, दान न देते वे करते भाव हिंसा।। (7)

सीदंति पश्यतां येषां शक्तानामपि साधवः।
न धर्मो लौकिकोऽप्येषां दूरे लोकोत्तराः स्थितः।। (110) (धर्मरत्नाकर)

सीदंतो यतयो यदण्यनुचितं किं चिज्जलान्नादिकं।
स्वीकुर्वंति विशिष्ट भक्ति विकलाः कालादि दोषादहो।।
मालिन्य रचयंति यज्जिनमतस्यास्थानशय्यादिना।
श्रद्धानमिदमेतिदूषण पदंशक्तानुपेक्षा कृपाय।। (401)

रोग से पीड़ित साधु यदि, भक्ति आदि रहित काल में।
यदि अयोग्य आहार आदि करके, मलिनता लाते जिनमत में।। (8)

यह दोष श्रावकों को लगेगा, जो शक्ति होने पर भी न करते दान।
वे लोकोत्तर धर्म से तो भ्रष्ट, लौकिक धर्म से भी शून्य।। (9)

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।
तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः।। (44) (पुरुषार्थ सिद्ध)

रागादि की अनुत्पत्ति ही, होती है निश्चय से अहिंसा।
रागादि की उत्पत्ति ही हिंसा, हिंसा का यह सार जिन शिक्षा।। (10)

ऐसा ही रागादि भाव से जो, धन-मान-भोगादि निमित्त।
पूजा-विधान-प्रतिष्ठा-चातुर्मास, करते वे भी होते हिंसक।। (11)

निदान सहित भाव होने से ही, हो जाता है मिथ्यात्व भाव।
मिथ्यात्व तो महान् हिंसा संसार, वर्द्धक मिथ्यात्व होता।। (12)

बहु आरंभ परिग्रही जाते नरक, भोगासक्त चक्रवर्ती जाते नरक।
लोभ को पाप का बाप बखाना, मूर्च्छा परिग्रह है आगम गाथा/(कहा)।। (13)

भाव अहिंसा हेतु ही धर्म साधना, यह है धर्म का परम लक्ष्य।
इससे मिलता परम मोक्ष, यह ही 'कनकनंदी' का परम लक्ष्य।। (14)

चितरी, दिनांक 10.08.2017, रात्रि 9.50

ज्यादा अमीरी मौत भी ला सकती है

एक स्टडी में पता चला है कि लोग जितनी जल्दी अमीर बनते हैं, उनके लिए उतनी जल्दी दुनिया को अलविदा कहने की नौबत आती है। नीदरलैंड की लीडेन

अकेडमी के अनुसार पारिवारिक, सामाजिक व राजनैतिक ढाँचे में बदलाव, प्रदूषण, जीवनशैली और ऐसे तमाम कारक हैं जो अमीर बनने के लिए जरूरी है लेकिन उनसे जीवन में संतुष्टि नहीं मिलती और जीवन जीने की चाहत कमजोर हो रही है।

संदर्भ-

अहिंसा, हिंसा की परिभाषा

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति।

तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः।। (44) पु.सि.

अपने शुद्धोपयोगरूप प्राण का घात रागादिक भावों से होता है, अतएव रागादिक भावों का अभाव ही अहिंसा है और शुद्धोपयोगरूप प्राणघात होने से उन्हीं रागादिक भावों का सद्भाव हिंसा है। परम अहिंसा प्रतिपादक जैन धर्म का यही रहस्य है।

यत्खलुकशाययोगात्प्राणानं द्रव्यभावरूपाणाम्।

व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा।। (43)

जिस पुरुष के मन में, वचन में, काय में क्रोधादिक कषाय प्रकट होते हैं, उसके शुद्धोपयोगरूप भाव प्राणों का घात तो पहले होता है, क्योंकि कषाय के प्रादुर्भाव से भावप्राण का व्यपरोपण होता है, यह प्रथम हिंसा है। पश्चात् यदि कषाय की तीव्रता से दीर्घ श्वासोच्छवास से, हस्त पादादिक से वह अपने अंग को कष्ट पहुँचाता है अथवा आत्मघात कर लेता है तो उसके द्रव्य प्राणों का व्यपरोपण होता है, यह दूसरी हिंसा है। फिर उसके कहे हुए मर्मभेदी कुवचनादिकों से या हास्यादि से लक्ष्य पुरुष के अंतरंग से पीड़ा होकर उसके भावप्राणों का व्यपरोपण होता है-यह तीसरी हिंसा है और अंत में इसकी तीव्र कषाय और प्रमाद से लक्ष्य पुरुष को जो शारीरिक अंग छेदन आदि पीड़ा पहुँचायी जाती है, सो परद्रव्यप्राण व्यपरोपण होता है, यह चौथी हिंसा है। कषाय से अपने पर के भावप्राण व द्रव्यप्राण का घात करना यह हिंसा का लक्षण है।

आत्मपरिणामहिंसनहेतुत्वात्सर्वमेव हिंसैतत्।

अनृतवचनादिकेवलमुदाहृतंशिष्य बोधाय।। (42)

पाँचों पाप (हिंसा, अनृत, स्तेय, अब्रह्म, परिग्रह) हिंसा में ही गर्भित हैं, क्योंकि इन सब पापों से आत्मा के शुद्ध परिणामों का घात होता है, इस कारण पाँचों

पाप हिंसा के ही भेद हैं।

वाक्कित्तनुभिर्यत्र न स्वप्नेऽपि प्रवर्तते।

चरस्थिराडि गमनां घातस्तदाद्यं व्रतमीरितम्।। (7) ज्ञानावर्ण, पृ.171

जिस व्रत में वचन, मन और शरीर से स्वप्न में भी त्रस-स्थावर प्राणियों का घात नहीं प्रवृत्त होता है वह आद्यव्रत-प्रथम अहिंसा-महाव्रत कहा गया है।

अकषाय भाव यत्र न स्वपरपीड़नम्।

सा अहिंसा अमृतमाता सर्वे धर्मे प्रधानम्।।

जहाँ पर मानसिक दुर्विचार नहीं है और स्व-परपीड़न नहीं है वहाँ पर अहिंसा रूपी अमृतमाता निवास करती है। अहिंसा संपूर्ण धर्म में प्रधान धर्म है।

आत्म अहिंसक-परम अहिंसक

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेषमन्तरेणापि।

न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव।। (45) पुरुषार्थसिद्धयुपाय

यदि किसी सज्जन पुरुष के सावधानीपूर्वक गमनादि करने में भी उसके शरीर संबंध से कोई जीव पीड़ित हो जावे, तो उसे हिंसा का दूषण कदापि नहीं लग सकता, क्योंकि उसके परिणाम कषाय युक्त नहीं थे। यही कारण है कि, ''प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा'' यह हिंसा का लक्षण कहा है। यदि केवल ''प्राणव्यपरोपणं हिंसा'' अर्थात् प्राणों को पीड़ा होना मात्र ही हिंसा का लक्षण कहा होता तो ऐसे अवसर पर अतिव्याप्ति दूषण का सद्भाव होता, इसके सिवाय अव्याप्ति दूषण का भी प्रवेश हो जाता। जो आगे के श्लोक से प्रकट होगा।

मृते वा जीविते वा स्याज्जन्तुजाते प्रमादिनाम्।

बन्ध एव न बन्धः स्यादिंहसया संवृतात्मनाम्।। (8) ज्ञानार्णव

जो प्राणी समूह के विषय में प्रमादयुक्त होते हैं-उनके रक्षण में असावधान होते हैं, उनके प्राणों का घात हो अथवा न भी हो, कर्मबंध होता ही है, किन्तु जिनकी आत्मा अहिंसा से संवृत है-जो प्राणी रक्षण में सदा सावधान हैं उनके कभी कर्मबंध नहीं होता है।

यदि मन में किसी को कष्ट देने की भावना है और किसी कारणवश कष्ट नहीं

दे पाये तो भी हिंसा का पाप लगेगा ही। जैसे एक डाकू दूसरों को फायरिंग करके धन लूटना चाहता था परन्तु निशाना चूकने के कारण सामने वाले व्यक्ति को निशाना नहीं लगा और वह बच गया, तो भी न्यायाधीश उस चोर को दण्ड देगा, क्योंकि उसका मारने का इरादा था और एक उदाहरण लीजिये-एक धीवर मछली पकड़ने के लिए पानी में जाल डालता है किन्तु दिनभर जाल बिछाकर बैठने पर भी मछली न पकड़े जाने पर भी हिंसा या अपराध का भागी होगा ही।

यदि अंतरंग में कषाय भाव अर्थात् दूषित परिणाम नहीं हैं परन्तु हठात् किसी जीव का घात हो जाने पर भी हिंसा का या अपराध का भागी नहीं होगा जैसे-महामुनि चार हाथ जमीन नीचे देखते-देखते चलते समय कोई क्षुद्र प्राणी अकस्मात् पैर के नीचे दबकर मर जाने पर भी महामुनिराज दोष-अपराध के भागी नहीं हैं क्योंकि मरन में जीवों की विराधना मुझसे नहीं हो इस भाव के रहते हुए अपनी ओर से तो सावधानी (प्रयत्न) पूर्वक चल रहे थे अथवा जैसे एक कृषक खेत में कार्य करता है। हल जोतते समय अनेक जीवों का घात होता है तो भी उसे विशेष हिंसा का दोष नहीं लगेगा। किन्तु उद्योग जनित दोष लगेगा, क्योंकि उसके परिणाम जीव मारने का नहीं है किन्तु अनाज उत्पन्न करने का है अथवा दयालु प्रमाणिकता डॉक्टर रोगी को निरोगी बनाने के लिए ऑपरेशन करता है। दैव योग से और आयु पूर्ण होने पर रोगी का मरण होने के कारण भी डॉक्टर को हिंसा का दोष नहीं लगेगा क्योंकि डॉक्टर के परिणाम रोगी को बचाने के लिए होते हैं, न कि मारने के।

जब कषाय भाव उत्पन्न होता है उसी समय स्वात्मा की हिंसा हो जाती है भले वह स्वयं की या अन्य की द्रव्य हिंसा करे या न करें।

आत्मघात करना स्वकीय द्रव्य हिंसा एवं भाव हिंसा है, इसलिए आत्मघात करना सबसे बड़ी हिंसा है। दूषित मनोभाव से दूसरों को घात करने पर यदि कष्ट प्राप्त करने वाले जीव में कलुषित परिणाम नहीं हुए तो उसकी केवल द्रव्य हिंसा अर्थात् शरीर को ही कष्ट मिलेगा, लेकिन कष्ट देने वाले को द्रव्य हिंसा के साथ-साथ भाव हिंसा भी होगी।

कष्ट पाने वाला स्वर्ग-मोक्ष भी जा सकता है किन्तु कष्ट देने वाला महापाप बंध करके नरकादि दुर्गति को प्राप्त होगा। इसीलिये कष्ट सहना आत्मोन्नति के लिए अमृत

तुल्य है और कष्ट देना विष तुल्य है। आचार्यों ने अहिंसा को अमृतमाता तुल्य बतलाया है क्योंकि माता के समान अहिंसा प्रेमभाव से संतान की रक्षा करती है। अमृतपान करने से जैसे जरा-मरण व्याधि रूपी रोग कष्ट नष्ट हो जाते हैं उसी प्रकार अहिंसा से हिंसा, युद्ध, कलह, शिकार, परपीड़न आदि कष्ट नष्ट हो जाते हैं। प्रत्येक जीव जीना चाहता है, सुखी होना चाहता है एवं सुरक्षित रहना चाहता है। कोई भी मरने के लिए, कष्ट पाने के लिए नहीं चाहता है एवं असुरक्षित नहीं रहना चाहता है। एक जीव को संपूर्ण लोक की विभूति देकर भी उससे प्राण चाहेंगे तो भी वह प्राण नहीं देगा। इससे सिद्ध होता है कि एक जीव का मूल्य तीन लोक की विभूति से भी अधिक होता है। जो एक जीव की भी रक्षा करता है वह मानव तीन लोक की विभूति का दान देता है। इसीलिये भगवान् महावीर ने बताया कि सर्व धर्म का मूल आधार अहिंसा है। अहिंसा को दृढ़, निर्मल एवं वृद्धि करने के लिए अन्य धर्म परिचारक है।

''परवहा आद वहा होई''

परवध आत्मा वध ही है जो दूसरों को कष्ट देता है वह स्वयं को ही कष्ट देता है।

जीव जिणवर जो मुणहि जिणवर जीव मुणेहि।
ते सम भाव परट्ठिया लहु णिव्वाण लहेहि।।

जो प्रत्येक जीव को जिनेन्द्र भगवान् के समान मानता है एवं जिनेन्द्र भगवान् को जीव के बराबर मानता है वह समभाव को प्राप्त होकर शीघ्र निर्वाण को प्राप्त हो जाता है।

द्रव्यतः सामान्य जीव एवं अरिहंत एवं सिद्ध भगवान् में कोई भेद नहीं है। क्योंकि ''सव्वेसुद्धा हु सुद्धणया।'' शुद्ध द्रव्यार्थिक दृष्टि से समस्त जीव सिद्ध सदृश्य है। इसलिए जो कोई भी जीव को कष्ट देता है वह साक्षात् परमात्मा को कष्ट देता है, जो जीवों की सेवा करता है वह जिन की सेवा करता है। इसीलिये ईसामसीह ने बताया था कि मानव सेवा ही भगवान् सेवा है।

मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मैं मैत्री की दृष्टि से सब प्राणियों को देखूँ।। यजुर्वेद

इन्द्रियाणाम् निरोधेन रागद्वेष क्षयेण च।

अहिंसत्वं च भूतानाममृतत्त्वाय कल्पते।। मनुस्मृति

दुष्ट इन्द्रियों की दुष्प्रवृत्ति के निरोध से, राग-द्वेष के क्षय से और अहिंसा तत्त्व से जीवों को अमृत तत्त्व की प्राप्ति होती है।

अहिंसा परमो धर्मस्तथाऽहिंसा परोदमः।

अहिंसा परमं दानं अहिंसा परमं तपः।।

अहिंसा परमो यज्ञस्तथाऽहिंसा परमं फलं।

अहिंसा परमं मित्रमहिंसा परमं सुखम्।। महाभारत

अहिंसा ही परम धर्म है, अहिंसा ही परम दया है, अहिंसा ही परम दान है, अहिंसा ही परम तप है। अहिंसा परम यज्ञ है, अहिंसा परम फल है, अहिंसा परम मित्र है, अहिंसा परम सुख है।

हिंसा के 4 भेद-(1) आरंभी, (2) उद्योगी, (3) विरोधी, (4) संकल्पी।

आरंभी हिंसा-गृहस्थ संबंधी कार्य में जो हिंसा होती है उसको आरंभी हिंसा कहते हैं।

उद्योगी हिंसा-कृषि, वाणिज्य आदि कार्य में जो हिंसा होती है उसे उद्योगी हिंसा कहते हैं।

विरोधी हिंसा-आत्म रक्षा के लिए, देश रक्षा के लिए, धर्म रक्षा के लिए, शरणागत की रक्षा के लिए, असहाय स्त्री एवं बालक की रक्षा के लिए, धर्मनीति के अनुसार विरोधियों के साथ युद्ध करने से जो हिंसा होती है उसको विरोधी हिंसा कहते हैं।

संकल्पी हिंसा-दूषित भावना सहित दूसरे जीवों को मारने का भाव उत्पन्न होने को संकल्पी हिंसा कहते हैं।

एक आदर्श गृहस्थ नागरिक को हिंसा नहीं करने की भावना होने पर भी आरंभ, व्यापारादि करना पड़ता है एवं देश आदि के लिए युद्ध भी करना पड़ता है इसीलिए वह उपरोक्त तीनों हिंसा-आरंभी, उद्योगी, विरोधी हिंसा से बच नहीं सकता है परन्तु संकल्पी हिंसा का त्याग करना उसके लिए नितांत आवश्यक है।

सत्ता, धन-संपत्ति, ख्याति-कीर्ति या द्वेष आदि से जो एक देश दूसरे पर

आक्रमण करता है वह संकल्पी हिंसा है। माँस के लिए मत्स्य पालन करना, मुर्गी पालन करना, बूचड़खाना खोलकर जीवों का घात करना संकल्पी हिंसा है, रेशमी वस्त्र के लिए, रेशमी कीड़ों को जिंदा उबालना संकल्पी हिंसा में ही गर्भित है।

अहिंसा यदि अमृत है तो हिंसा विष है। अहिंसा प्रकाश है तो हिंसा अंधकार है। अहिंसा से ही अभिवृद्धि, प्रेम, विश्वमैत्री संगठन हो सकता है। केवल नारेबाजी, नेतागिरी, आक्रमण प्रवृत्ति से, अनीति, अत्याचार से, शोषण नीति से शांति स्थापित नहीं हो सकती है। जैसे-मनुष्य को जिन्दा रहने के लिए अधिकार है उसी प्रकार पशु आदि प्राणियों को भी जिंदा रहने का अधिकार है। भगवान् महावीर ने कहा था (Live and Let Live) ''जीयो और जीने दो'' जीने का जैसा तुम्हारा अधिकार है उसी प्रकार दूसरों को जीने देना तुम्हारा कर्त्तव्य है। इसीलिये प्रत्येक मानव एवं राष्ट्र के कर्णधारों को चाहिए कि माँस के लिए या अन्य किसी स्वार्थ की सिद्धि के लिए किसी भी प्रकार की हिंसा न करें।

स्वामी समंतभद्र ने स्वयंभूस्त्रोत में कहा है-

''अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमम्।''

अहिंसा में, अहिंसा का पालन करने वालों के लिए संपूर्ण जगत् परम ब्रह्ममय दिखाई देता है। कौटिल्य चाणक्य ने बताया-

''त्यजेत् धर्म दया हीनं। दयाहीन धर्म का त्याग करो।''

इसके साथ उन्होंने बताया है कि जो दयाहीन धर्म का त्याग नहीं करता है उसको सुख-शांति-वैभव-मोक्ष-स्वर्ग आदि स्वयमेव ही छोड़कर चले जाते हैं। लिंगायत धर्म के सर्वज्ञ कवि ने कहा-मैं अहिंसामय जैन धर्म को सिर पर धारण करता हूँ किन्तु जो हिंसामय धर्म है उसे चूल्हें में डालकर जला दो।

हिंसा करने वाला परभव में अपघात से मरता है। नरक तिर्यंच गति में जन्म लेता है। यदि कदाचित् मनुष्य जाति में जन्म लिया तो वहाँ पर गर्भ में ही मरण को प्राप्त हो जाता है या अल्पायु में रोग या दुर्घटना या शस्त्र प्रहार से मरता है। यदि जिन्दा भी रहा तो रोग से, धनाभाव से, मानहानि से, अंग-उपांग के छेदन-भेदन से, अनेक शारीरिक, मानसिक दुःखों को सहन करता है।

सर्व व्रताधार अहिंसा का माहात्म्य

सत्याद्युत्तरनिःशेष यमजात निबन्धम्।

शोलैश्वयर्याद्यधिष्ठानहिंसाख्यं महाव्रतम्।। (6) ज्ञा.अ. 8-171

अहिंसा नाम का महाव्रत आगे के जो सत्य महाव्रतादि रूप समस्त व्रतों का समूह है, उसका कारण है-उन सबकी स्थिति इस अहिंसा महाव्रत पर आश्रित है। साथ ही वह अठारह हजार शीलों के स्वामित्व आदि का भी आधार है-उसके बिना इन शीलों के स्वामित्व आदि की संभावना नहीं है।

एतत्समयसर्वस्वमेतत्सिद्धान्त जीवितम्।

यज्जन्तुजातरक्षार्थं भावशुद्धया दृढं व्रतम्।। (29)

जो जीवों की रक्षा के लिए परिणामों की निर्मलतापूर्वक दृढ़ता से व्रत किया जाता है-प्राणी हिंसादि का परित्याग किया जाता है-यह सब मतों का सार है और यही आगम का प्राण है।

श्रूयते सर्वशास्त्रेषु सर्वेषु समयेषु च।

अहिंसा लक्षणो धर्मस्तद्विपक्षश्च पातकम्।। (30)

यह सब ही शास्त्रों में और सब ही मतों में सुना जाता है कि धर्म का लक्षण अहिंसा है इसके विपरीत जो प्राणियों का घात किया जाता है वह पाप है।

अहिंसैव जगन्मातहिंसैवानन्दपद्धतिः।

अहिंसैव गतिः साध्वी श्रीरहिंसैव शाश्वती।। (31)

अहिंसा ही विश्व की माता है अहिंसा ही आनंद (सुख) का मार्ग है, अहिंसा ही उत्तम गति है और अहिंसा ही अविनश्वर लक्ष्मी है।

अहिंसैव शिव सूते दत्ते च त्रिदिवश्रियम्।

अहिंसैव हितं कुर्याद् व्यसनानि निरस्यति।। (32)

अहिंसा ही स्वर्ग की लक्ष्मी को देती है और मोक्ष को उत्पन्न करती है तथा वहीं अहिंसा व्यसनों को-सब प्रकार की आपत्तियों को नष्ट करके प्राणी का हित करती है।

सप्तद्वीपवती धात्री कुलाचल समन्विता।

नैकप्राणिवधोत्पन्नं दत्ता दोषं व्यपोहति।। (33) पृ. 101 ज्ञा.

दान में दी गयी कुलाचलों से संयुक्त सात द्वीपवाली पृथ्वी एक प्राणी के घात से

उत्पन्न हुए दोष को नहीं नष्ट करती है। अभिप्राय यह है कि एक प्राणी के घात से इतनी भारी पाप होता है कि जो सात द्वीपों वाली समस्त पृथ्वी के दान देने से भी नष्ट नहीं होता है।

सकलजलधिवेलावारिसीमां धरित्रीं
नगरनगसमग्रं स्वर्णरत्नादिपूर्णाम्।
यदिमरणनिमित्ते कोऽपि दद्यात् कथंचित् तदपि
न मनुजानां जीवितत्याग बुद्धिः।। (34)

जिसकी सीमा समस्त समुद्र का किनारा है, जो बहुत से नगरों एवं पर्वतों से सहित है तथा जो सुवर्ण व रत्नों आदि से परिपूर्ण है, ऐसी विशाल पृथ्वी को भी यदि कोई मरने के निमित्त देता है तो भी मनुष्यों के जीवन देने की बुद्धि या मरने की इच्छा-किसी प्रकार से भी नहीं होती है। अभिप्राय यह है कि मनुष्यों को विशाल साम्राज्य आदि की अपेक्षा अपना जीवन ही अधिक प्रिय होता है।

परमाणोः परं नाल्पं न महद् गगनात्परम्।
यथा किंचित्तथा धर्मो नाहिंसालक्षणात्परः।। (40)

जिस प्रकार परमाणु से दूसरा कोई छोटा नहीं है तथा आकाश से दूसरा कोई बड़ा नहीं है उसी प्रकार हिंसा से निकृष्ट दूसरा कोई पाप नहीं है तथा अहिंसा से उत्कृष्ट कोई धर्म नहीं है-सब धर्मों में अहिंसा ही उत्कृष्ट है।

तपः श्रुतयमज्ञानध्यानदानादि कर्मणाम्।
सत्यशील व्रतादीनामहिंसा जननी माता।। (41)

वह अहिंसा, तप, श्रुत, संयम, ज्ञान, ध्यान और दान आदि क्रियाओं की तथा सत्य, शील और व्रतादि की जननी मानी गयी है। अभिप्राय यह है कि-जिस प्रकार माता संतान को पुष्ट करती है उसी प्रकार अहिंसा उपर्युक्त तप श्रुतादि को पुष्ट करती है। उस अहिंसा के बिना वे सब व्यर्थ रहते हैं।

करुणार्द्र च विज्ञानवासितं यस्य मानसम्।
इन्द्रियार्थेशु भिःसंग तस्य सिद्धं समीहितत्।। (42)

जिसका मन दया से भीगा हुआ, विज्ञान (विवेक) से संस्कृत और इन्द्रिय विषयों की मूर्छा से रहित (निर्ममत्त्व) हो चुका है उसका अभीष्ट सिद्ध हुआ ही

समझना चाहिए।

अहिंसैकापि यत्सौख्यं कल्याणमथवा शिवम्।

दत्ते तद्देहिनां नायं तपःश्रुतयमोत्करः।। (46)

एक ही अहिंसा प्राणियों के लिए सुख को, कल्याण को अथवा मोक्ष सुख को देती है उसे यह तप, श्रुत और संयम का समुदाय भी नहीं दे सकता है।

जन्मोग्रभ्रमभीतानामहिंसैवौशधी परा।

तथामरपुरीं गन्तुं पाथेयं पथि पुष्कलम्।। (48)

संसार रूप भ्रम-रोग से भय को प्राप्त हुए प्राणियों के लिए उत्कृष्ट औषधि अहिंसा ही है तथा वह अहिंसा अमरपुरी को-स्वर्ग अथवा मोक्ष को-जाने के लिए प्रचुर पाथेय-मार्ग में खाने के योग्य भोजन है।

विद्धयहिंसैव भूतानां मातेव हितकारिणी।

तथा रमयितुं कान्ता विनेतुं च सरस्वती।। (49)

प्राणियों का माता के समान हित करने वाली अहिंसा ही है। उस अहिंसा में रमण करने के लिए स्त्री तथा शिक्षा देने के लिए सरस्वती समझो।

जायन्ते भूतयः पुंसां याः कृपाकान्त चेतसाम्।

चिरेणापि न ता वक्तुं शक्ता देन्यपि भारतीय।। (52)

जिनका चित्त दयालु है उन पुरुषों की जो संपदा होती है उनका वर्णन सरस्वती देवी भी बहुत काल पर्यंत करे तो भी उससे नहीं हो सकता, फिर अन्य से तो किया ही कैसे जा सकता है?

किं न तप्तं तपस्तेन किं न दत्तं महात्मना।

वित्तीर्णमभयं येन प्रीतिमालम्ब्य देहिनाम्।। (53)

जिस महापुरुष ने जीवों को आश्रय देकर अभयदान दिया उस महात्मा ने कौनसा तप नहीं किया और कौनसा दान नहीं दिया अर्थात् उस महापुरुष ने समस्त तप, दान दिया क्योंकि अभयदान में सब तप, दान आ जाते हैं।

यथा यथा हृदि स्थैर्यं करोति करुणा नृणाम्।

तथा तथा विवेकग्रीः परां प्रीतिं प्रकाशते।। (54)

पुरुषों के हृदय में जैसे करुणा भाव स्थिरता को प्राप्त करता है तैसे विवेकरूपी

लक्ष्मी उससे परम प्रीति प्रकट करती रहती है। भावार्थ-करुणा (दया) विवेक को बढ़ाती है।

अन्ययोगव्यवच्छेदादहिंसा श्रीजिनागमे।
परैश्च योगमात्रेण कीर्तिता सा यदृच्छया।। (56)

जिनेन्द्र भगवान् के मार्ग में तो अहिंसा अन्ययोगव्यवच्छेद से कही है अर्थात् अन्य मतों में ऐसी अहिंसा का योग नहीं है। इस जिनमत में तो हिंसा का सर्वथा निषेध ही है और अन्य मतियों ने जो अहिंसा कहीं है सो योग मात्र से ही कहीं है अर्थात् कहीं अहिंसा कहीं है और कहीं हिंसा का पोषण किया है। सो स्वेच्छापूर्वक उन्मत्त की भाँति कहीं है। जिनागम में हिंसा का सर्वथा निषेध है किन्तु अन्य मतियों ने पागल के जैसे कहीं तो हिंसा का निषेध किया है और कहीं उसका पोषण किया है।

तन्नास्ति जीवलोके जिनेन्द्रदेवेन्द्र चक्रकल्याणम्।
यत्प्राप्नुवन्ति मनुजा न जीवरक्षानु रागेण।। (57)

इस जीव लोक में (जगत् में) मनुष्य जीव-रक्षा के अनुराग से समस्त कल्याण रूप पद को ही प्राप्त होते है ऐसा कोई भी तीर्थंकर देवेन्द्र चक्रवर्तीत्त्व रूप कल्याण पद लोक में नहीं है जो दयावान् नहीं पावे अर्थात् अहिंसा (दया) सर्वोत्तम पद की देने वाली है।

ज्योतियश्चक्रस्य चन्द्रो हरिरमृतभुजां चण्डरोचिर्ग्रहाणाम्।
कल्पांगः पादपानां सलिलनिधिरपां स्वर्णशैलो गिरीणाम्।
देवः श्रीवीतरागस्त्रिदशमुनिगणस्यात्र नायो यथाऽयम्।
तद्वच्छीलव्रतानां शमयमतपसां विद्वयहिंसां प्रधानम्।। (59)

हे भव्य जीव! जिस प्रकार ज्योतिष चक्रों में प्रधान स्वामी चंद्रमा है तथा देवों में इन्द्र, ग्रहों में सूर्य, वृक्षों में कल्पवृक्ष, जलाशयों में समुद्र, पर्वतों में मेरू और देवों में मुनियों के नाथ (स्वामी) श्री वीतराग देव प्रधान हैं उसी प्रकार शील और व्रतों में तथा शमभावयम (महाव्रत) और तपों में अहिंसा को प्रधान जानें। ऐसे अहिंसा महाव्रत का वर्णन किया गया।

न ब्राह्मणस्सेतद किञ्चि सेय्यो सदा निसेधो मनसो पियेहि।
यतो यतो हिंसमनो निवर्त्तति ततो ततो सम्मति एवं दुक्खं।। (8)

ब्राह्मण के लिए यह बात कम कल्याणकारी नहीं है, जो वह प्रिय (पदार्थों) से मन हटा लेता है, जहाँ-जहाँ से मन हिंसा से मुड़ता है, वहाँ-वहाँ से दुःख (अवश्य) ही शांत हो जाता है।

अप्पमादो अमतपदं पमादो मच्चुनो पदं।

अप्पमत्ता न मीयन्ति ये पमत्ता यथा मता।। (1)

प्रमाद न करना अमृत पद का साधक है और प्रमाद करना मृत्यु पद का। अप्रमादी नहीं मरते किन्तु प्रमादी तो मरे तुल्य ही हैं।

एतं विसेसतो ञत्वा अप्पमादम्हि पण्डिता।

अप्पमादे पमोदन्ति अरियानं गोचरे रता।। (2) धम्मपद

पण्डित लोग अप्रमाद के विषय में इसे अच्छी तरह जान, बुद्ध द्वारा उपदिष्ट आचरण में रत हो, अप्रमाद में प्रमुदित होते हैं।

सही आस्था (श्रद्धा, विश्वास) अमृत तो गलत आस्था मृत (विष)

(चाल : गंगा तेरी धारा अमृत.....)

आस्था तेरी अनंतधारा, जीवों में बहती जाये।
सही आस्था व गलत आस्था, तेरे (प्रमुख) दो भेद होये।। आस्था...(ध्रुव)

सही आस्था तो सत्य विश्वासमय...जो आत्मविश्वास युक्त...
समता-शांति-आत्मविशुद्धि...उदार सहिष्णु युक्त...
स्व-पर-विश्व कल्याण युक्त...क्षमा सरलता युक्त...(1)...

इससे ही ज्ञान सुज्ञान होता...आचरण भी पावन होये..,
अहिंसा-सत्य-अचौर्य-ब्रह्मचर्य...अपरिग्रह युक्त होये...
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ...संयम-तप-त्यागमय...(2)...

इससे ही मानव महामानव होते...स्व-पर में सुख होये...
वात्सल्य-सहयोग-सेवा बढ़े...विश्व मैत्री शांति होये...
अन्याय-अत्याचार-भ्रष्टाचार नशे...युद्ध-आतंक नाश होये...(3)...

इससे सभ्यता-संस्कृति जन्मे...कला-साहित्य भी जन्मे...
भौतिक-नैतिक-आध्यात्मिक विकसे...गणित से ले आयुर्वेद फैले...
व्यक्ति-समाज व विश्वस्तर में...शांति समृद्धि विस्तरे...(4)...

इससे विपरीत तेरी दशा में...आस्था अंध श्रद्धा होये...
क्रूरता-कठोरता-संकीर्णता जन्मे...विवेक (सुज्ञान) नष्ट हो जाये...
ईर्ष्या-घृणा-वैर-विरोध जन्मे...भेदभाव उत्पन्न होये...(5)...

स्व-अंधश्रद्धा से जो होते भिन्न...उन्हें अधर्मी-कुधर्मी माने...
उनसे पूर्वोक्त क्रूरतादि करे...ईर्ष्या-घृणादि से प्रेरित होये...
भेदभाव व शोषण-युद्ध से...उन्हें नाशकर धार्मिक माने...(6)...

ऐसी तेरी अंधश्रद्धा से...धरती (पृथ्वी) रक्तरंजित होये...
सभ्यता-संस्कृति-कला-साहित्य...ज्ञान-विज्ञान नष्ट होये...
मानव दानव बन कुकार्य करे...धरती को नरक बनाये...(7)...

सुआस्था तेरी अमृत धारा...कुआस्था है विषधारा...
पीना है तो मानव अमृत पीओ...नहीं तो विष को न पीओ...
भोगभूमिज भद्र परिणामी सम...धर्म रहित भी शांत बनो...(8)...

ऐसे मानव भी स्वर्ग जाते...स्वर्ग से बनते मानव...
किन्तु अंधश्रद्धानी क्रूर मानव...इह-पर भव में बने नारकी...
ऐसी श्रद्धा तेरी विचित्र रूप...'कनक' सेवे अमृत रूप...(9)...

चितरी, दिनांक 11.10.2017, रात्रि 8.17

(पृथ्वीभर के प्रायः हर धार्मिक पंथ-मत-परंपरा विचारधारा (राजनैतिक, दार्शनिक, आर्थिक, राष्ट्रीय) आदि कुकार्य से दुःखी होकर यह कविता बनी।)

स्व-आत्म ध्यान

निश्चय से मैं मुक्त व युक्त हूँ

(चाल : तुम दिल की....., सायोनारा.....)

-आचार्यश्री कनकनंदी जी

अष्टकर्म से मुक्त हूँ मैं...अष्टगुणों से युक्त हूँ मैं...
राग-द्वेष से मुक्त हूँ मैं...वीतराग से युक्त हूँ मैं...

अंधश्रद्धा से मुक्त हूँ मैं...आत्मश्रद्धा से युक्त हूँ मैं...
कुज्ञान से मुक्त हूँ मैं...सुज्ञान से युक्त हूँ मैं...

कुचारित्र से मुक्त हूँ मैं...सुचारित्र से युक्त हूँ मैं...
अहंकार से मुक्त हूँ मैं...अहंभाव से युक्त हूँ मैं...

ममकार से मुक्त हूँ मैं...साम्यभाव से युक्त हूँ मैं...
अक्षमा से मुक्त हूँ मैं...क्षमाभाव से युक्त हूँ मैं...

विभाव से मुक्त हूँ मैं...स्वभाव से युक्त हूँ मैं...
विषमता से मुक्त हूँ मैं...समता से युक्त हूँ मैं...

परद्रव्य से मुक्त हूँ मैं...स्वद्रव्य से युक्त हूँ मैं...
परगुण से मुक्त हूँ मैं...स्वगुण से युक्त हूँ मैं...

परतंत्र से मुक्त हूँ मैं...स्वतंत्र से युक्त हूँ मैं...
अज्ञानता से मुक्त हूँ मैं...सर्वज्ञता से युक्त हूँ मैं...

अनंतकर्म से मुक्त हूँ मैं...अनंतगुण से युक्त हूँ मैं...
अनंत दुःख से मुक्त हूँ मैं...अनंत सुख से युक्त हूँ मैं...

असत्य से मुक्त हूँ मैं...स्वसत्य से युक्त हूँ मैं...
अब्रह्म से मुक्त हूँ मैं...परंब्रह्म से युक्त हूँ मैं...

अनिवार्य (दुर्बलता) से मुक्त हूँ मैं...अनंत वीर्य से युक्त हूँ मैं...
संकीर्णता से मुक्त हूँ मैं...अनंत विस्तार से युक्त हूँ मैं...

संक्लेश से मुक्त हूँ मैं...अनंत शांति से युक्त हूँ मैं...

पंच परिवर्तन से मुक्त हूँ मैं...पंचम गति से युक्त हूँ मैं...

प्रसिद्धि से मुक्त हूँ मैं...आत्मशुद्धि से युक्त हूँ मैं...

परपरिणति से मुक्त हूँ मैं...'कनक' स्वपरिणति से युक्त हूँ मैं...

चितरी, दिनांक 13.10.2017, रात्रि 9.50

स्व-शक्ति के ध्यान से अनंत शक्ति पाऊँ

-आचार्यश्री कनकनंदी जी

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

जिया रे! स्व-शक्तियों का ध्यान करऽऽ

जिससे शक्तियाँ होगी जागृत...होंगे तेरे लक्ष्य पूर्णऽऽ...(ध्रुव)...

तेरे अंदर है (भगवत्)/अनंत शक्तियाँ...जो चैतन्य चमत्कार पूर्णऽऽऽ

इन शक्तियों को प्राप्त करने से...बनोगे सच्चिदानंद पूर्णऽऽऽ

त्रैलोक्य अधिपति संपूर्णऽऽऽ...जिया...(1)

न तू दीन-हीन व कायर...न तू तन-मन-इंद्रियऽऽऽ

न तू मानव-पशु-पक्षी-दानव...नहीं तेरे जन्म-जरा-मरणऽऽऽ

ये सभी विभाव परिणमनऽऽऽ...जिया...(2)

समस्त बंधन व सीमा से परे...अनंतानंत अविभागी प्रतिच्छेद पूरेऽऽऽ

लोकालोक व्यापी ज्ञान से पूरे...तुमसे बड़ा न कोई विश्व मेंऽऽऽ

अनंत गुणगण समूह तुझमेंऽऽऽ...जिया...(3)

जाति-मत-पंथ सीमा परे...भाषा-राष्ट्र धनी-गरीब परेऽऽऽ

ऊँच-नीच काला-गोरा परे...समस्त भौतिक-लौकिक परेऽऽऽ

अद्वितीय कल्पना परेऽऽऽ...जिया...(4)

स्वतंत्र-स्वावलंबी-मौलिक तू हो...स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-शाश्वत् होऽऽऽ

आत्मजयी तू विश्वजयी हो...निरंजन-निर्विकार-शुद्ध-बुद्ध होऽऽऽ

अमूर्तिक चैतन्य अखण्ड पिंड होऽऽऽ...जिया...(5)

समस्त राग-द्वेष-मोह परे हो...संकल्प-विकल्प-संक्लेश शून्य होऽऽऽ
अक्षय-अव्यय-ध्रौव्य रूप हो...परम सत्य तू भगवान् होऽऽऽ
'कनक' तेरा नहीं नाम-रूप रे!ऽऽऽ...जिया...(6)

चितरी, दिनांक 12.10.2017, रात्रि 8.20

आनन्द वंदना / संकीर्तन

-आचार्य कनकनंदी

आनन्दं आनन्दं वंदे निज-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे शुद्ध-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे बुद्ध-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे सत्य-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे नित्य-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे आत्म-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे द्रव्य-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे गुण-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे ध्रुव-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे सहज-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे श्रद्धा-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे प्रज्ञा-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे ध्यान-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे दया-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे दान-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे त्याग-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे सेवा-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे साम्य-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे शांति-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे क्षमा-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे मृदु-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे शुचि-आनन्दम्....
आनन्दं आनन्दं वंदे ब्रह्म-आनन्दम्....आनन्दं आनन्दं वंदे मोक्ष-आनन्दम्....
आनन्दं चिन्तदनं आनन्दं कथनम्...आनन्दं स्मरणं आनन्दं कीर्तनम्....
आनन्दं पूजनं आनन्दं लेखनम्....आनन्दं तीर्थं आनन्दं धर्मः...
आनन्दं आत्मा आनन्दं 'कनक'...

चितरी, दिनांक 12.10.2017, रात्रि 8.42

हे! गुरुवर तेरा पावन जीवन

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : रे पारस तेरी कठिन डगरिया.....)

हे! गुरुवर तेरा पावन जीवन...राग द्वेष मोह रहित परिणाम।
पावन श्रद्धा है पावन प्रज्ञा...सत्य-समतामय पावनचर्या।। (ध्रुव)

परम पावन स्व-आत्म को माना...शुद्ध-बुद्ध व आनंद जाना।
अतः तेरी श्रद्धा-प्रज्ञा पावन...तदनुकूल तेरी चर्या भी पावन।। (1)

स्वयंभू-स्वतंत्र स्वयं को जाना...ज्ञानदर्शनमय सुख पहचाना।
अव्यय-अव्याबाध रूप पहचाना...अनंत गुणमय स्व को जाना।। (2)

स्वरूप प्राप्ति ही लक्ष्य है तेरा...अतएव मोह-ममत्व छोड़ा।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि त्यागा...निस्पृह-निराडम्बर चारित्र तेरा।। (3)

ध्यान-अध्ययन व मौन साधना...शोध-बोध में एकाग्रमना।
आत्म विश्लेषण व आत्मशोधन...आत्मानुभव ही प्रमुख काम।। (4)

शत्रु-मित्र-भाई-बंधु न तेरा...वसुधैवकुटुम्बकं विचार तेरा।
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य साम्य धरा...संकल्प-विकल्प-संक्लेश छोड़ा।। (5)

ऐसे पावन भाव-काम से...भगवान् बनते हो अनुक्रम से।
अतएव आप विश्व वंद्य हो...कनकनंदी वंदे तव गुण लब्धये।। (6)

चितरी, दिनांक 14.10.2017, मध्याह्न 3.16

बिगबैंग/महाविस्फोटा से विश्व सिद्धांत की समीक्षा-
वैश्विक अनेकांत सिद्धांत (वैश्विक शोध-बोध युक्त कविता)
कार्य-कारण संबंध व इससे परे परम सत्य

सृजेता-आचार्य कनकनंदी

(चाल : बस्ती-बस्ती पर्वत-पर्वत....., तुम दिल की....., सायोनारा.....)

कार्य-कारण महान् सिद्धांत...इससे परे (भी) है परम सत्य...2
लोक-अलोक व्यापी कार्य-कारण (सिद्धांत)...इससे परे भी है शुद्ध द्रव्य...2...(स्थायी)

आस्रव-बंध-संवर-निर्जरा...पुण्य-पाप व मोक्ष पदार्थ...
सभी कार्य-कारण संबंध युक्त...(किन्तु) षट द्रव्य इससे मुक्त...

पञ्च परिवर्तन चौरासी लक्ष योनि...कार्य-कारण संबंध युक्त...
किन्तु जीव द्रव्य तो स्वयंभू-स्वतंत्र...(उक्त) कार्य-कारण संबंध मुक्त...(1)

द्विअणुक (स्कंध) से ले महास्कंध तक...कार्य-कारण सिद्धांत युक्त...
किन्तु शुद्ध पुद्गल द्रव्य/(शुद्ध अणु)...कार्य-कारण सिद्धांत मुक्त...

''परस्पर उपग्रहो जीवानां'' से लेकर...''परस्पर उपग्रहो होते द्रव्यणाम्''...
किन्तु शुद्ध द्रव्यों के अस्तित्व...निश्चयनय से स्व-आश्रित/(स्व-निष्पन्न)...(2)

गुण भी परस्पर उपकारी होते...(किन्तु) निश्चय से द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः...
एक गुण अन्य गुण रूप में परिणमन...नहीं करते यह अगुरुलघु गुण...

संसारी जीवों के जन्म-मरण...सुख-दुःखादि कार्य-कारण सहित...
चैतन्य आदि गुण जीव द्रव्य के...कार्य-कारण संबंध से रहित...(3)

चैतन्य गुण तो जीवों के स्वाभाविक...वस्तुनिष्ठ अनुजीवी गुण हैं...
शुद्ध जीवों के अनंत ज्ञान दर्श सुख...वीर्यादि वस्तुनिष्ठ/(अनुजीवी) गुण हैं...

स्थूल भौतिक विश्व तो कार्य...कारण सिद्धांत सहित है...
षट् द्रव्यमयी लोक-अलोक अकृत्रिम...व स्वभाव से निष्पन्न है...(4)

बिगबैंग यदि अवास्तविक से हुआ (है)...तो आकाश-काल-जीव कहाँ से आये...
बिगबैंग तो स्थूल भौतिक अशुद्ध घटणा...तो बिन कारण से हुआ कैसे?...

भौतिक कार्य-कारण से परिपूर्ण विश्व को...मानना नहीं है यथार्थ सत्य...
शुद्ध अणु को भी जब भौतिक विज्ञानी...(पूर्णतः) न जान पाये कैसे जानेंगे परम सत्य...(5)

जीवों के अनुजीवी गुण तो भौतिक...कार्य-कारण से परे है...
भौतिकवादी दार्शनिक व वैज्ञानिकों की...क्षमता से भी परे है...

इन्द्रिय-मन व तर्क-भौतिक यंत्रों से...परम सत्य न (पूर्ण) ज्ञात है...
इनसे परे सर्वज्ञ ज्ञानगम्य...'कनक' का यह ही लक्ष्य है...(6)

चितरी, दिनांक 17.10.2017, अपराह्न 5.35 (धन्य त्रयोदशी)

(इस विषय संबंधी विशेष परिज्ञान हेतु कविकृत कृतियों 1. विश्व विज्ञान रहस्य, 2. विश्व द्रव्य विज्ञान, 3. अनंत शक्ति संपन्न परमाणु से लेकर परमात्मा तक, 4. ब्रह्माण्डीय जैविक रासायनिक विज्ञान एवं 5. स्वतंत्रता के सूत्र आदि का अध्ययन करें।)

संदर्भ-

विश्व के मूलभूत षट्द्रव्य

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा।। (1)
जीवमजीवं द्रव्यं जिनवरवृषभेण येन निर्दिष्टम्।
देवेन्द्रवृन्दवन्द्यं वन्दे तं सर्वदा शिरसा।।

I always salute with my head the eminent one among the great Jinas, who worshipped by the host of Indras and who has described the Dravyas (substances) Jiva and Ajiva.

मैं (नेमिचंद) जिस जिनवरों में प्रधान ने जीव और अजीव द्रव्य का कथन किया, उस देवेन्द्रादिकों के समूह से वंदित तीर्थंकर परमदेव को सदा मस्तक से नमस्कार करता हूँ।

इस मंगल स्मरण एवं प्रतिज्ञा-सूचक गाथा में आचार्यश्री ने सच्चे हितोपदेशी, सर्वज्ञ भगवान् को नमस्कार किया है। जिनेन्द्र भगवान् ने जो कुछ प्रतिपादन किया है उसमें मूलभूत दो द्रव्य हैं। यथा-(1) जीव द्रव्य (2) अजीव द्रव्य। द्रव्य विशेष रूप से अजीव द्रव्य के पाँच भेद हैं। यथा-(1) पुद्गल द्रव्य (2) धर्म द्रव्य (3) अधर्म द्रव्य (4) आकाश द्रव्य (5) काल द्रव्य।

इसी प्रकार उपर्युक्त छहों द्रव्यों से ही विश्व का निर्माण हुआ है। अर्थात् विश्व के मौलिक द्रव्य छह ही हैं और छहों द्रव्य जीव और अजीव में गर्भित हैं। इसलिए विश्वदृष्टा, विश्वज्ञाता, विश्व-विद्या-विशारद एवं विश्व-तत्त्व-व्याख्याता-तीर्थंकर भगवान् ने जीव द्रव्य एवं अजीव द्रव्य के कथन से संपूर्ण विश्व के संपूर्ण तत्त्वों का व्याख्यान किया है। जिनेन्द्र भगवान् विश्व तत्त्व के ज्ञाता, दृष्टा एवं व्याख्याता होते हुए भी विश्व

के कर्त्ता-धर्त्ता-हर्त्ता नहीं हैं। क्योंकि प्रत्येक द्रव्य अकृत्रिम, अनादि-अनिधन, स्वभाव से निवृत्त तथा शाश्वतिक होते हुए भी स्वाभाविक रूप से स्वयं ही कर्त्ता (सत्तावान, स्वभाव वाला, उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य को करने वाला), हर्त्ता (उत्पाद-व्यय रूप से पर्यायों को स्वयं में लीन करने वाला) है। त्रिलोक सार में कहा भी है-

लोगो अकिट्ठिमो खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो।
जीवाजीवेहि फूडो सव्वागास अवयवो णिच्चो।। (त्रिलोक सार)

निश्चय से लोक अकृत्रिम, अनादि अनिधन, स्वभाव से निष्पन्न, जीवाजीवादि द्रव्यों से सहित, सर्वाकाश, अवयव स्वरूप और नित्य है। समंतभद्र स्वामी ने कहा भी है-

नैवासतो जन्म सतो न नाशो दीपस्तमः पुद्गलभावतोऽस्ति।। (4)

सर्वथा, सर्वदा असत् वस्तु का जन्म अर्थात् प्रादुर्भाव नहीं होता है और सर्वथा सत् वस्तु का विनाश भी नहीं होता है। जिस प्रकार प्रज्ज्वलित दीपक को बुझा देने पर भी प्रकाश रूप पुद्गल की पर्याय पूर्णतः नाश नहीं हो जाती है परंतु अंधकार रूप में परिणमन कर जाती है। नारायण कृष्ण ने भी गीता में कहा है-

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते।। (गीता)

और परमेश्वर भी भूत, प्राणियों के न कर्त्तापन को और न कर्मों को और न ही कर्मों के फल संयोग को वास्तव में रचता है, अपितु परमात्मा के सकाश से ही प्रकृति वर्तती है, अर्थात् गुण ही गुण में वर्तते हैं।

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः।। (गीता)

और सर्वव्यापी परमात्मा, न किसी के पाप कर्म को और किसी के शुभ कर्म को ग्रहण करता है, बल्कि (माया के) अज्ञान द्वारा ज्ञान ढका हुआ है, इससे सब जीव मोहित हो रहे हैं।

द्रव्य दृष्टि से द्रव्य शाश्वतिक होने पर भी पर्याय दृष्टि से द्रव्य नित्य परिवर्तनशील होने के कारण अशाश्वतिक, क्षणभंगुर, क्षण-स्थायी तथा विनाशीक है क्योंकि सत्-स्वरूप द्रव्य का लक्षण बताते हुए आचार्य उमास्वामी 'तत्त्वार्थ सूत्र' में उल्लेख करते

हैं कि- (उत्पादव्ययध्रौव्य युक्तं सत्।)

Sat (is a) simultaneous possession (of) Utpada, coming into existance, birth, Vyaya, going out of existance, decay, and Dhrauvya, continuous sameness of existence, premanence.

The meaning is that the substance remains the same, but its condition always changes.

सत् स्वरूप द्रव्य अपनी सत्ता को बिना परिवर्तित किए प्रति समय पूर्ववर्ती प्राचीन पर्याय को त्याग कर उत्तरवर्ती नवीन पर्याय को धारण करता है। द्रव्य का अनंत भूतकाल, एक समयवर्ती वर्तमान काल एवं भूतकाल से भी अनंतगुणित भविष्यत् काल में प्रति समय पर्याय रूप से परिवर्तित होते हुए भी द्रव्य रूप से स्व-सत्ता को कायम रखना ध्रौव्य है।

द्रव्य रूप में ध्रौव्य होते हुए प्रत्येक समय पूर्ववर्ती पर्याय का विनाश (लय-प्रलय) होना व्यय है।

द्रव्य रूप से ध्रौव्य होते हुए भी प्रत्येक समय में पूर्ववर्ती पर्याय का विनाश होने पर उत्तरवर्ती नवीन पर्याय का जन्म/उत्पत्ति/प्रादुर्भाव होना उत्पाद है।

षड् द्रव्यमयी विश्व होने के कारण एवं छहों द्रव्य प्रत्येक समय में पर्याय अपेक्षा द्रव्य प्रलय धर्मी होने से विश्व भी प्रत्येक समय में प्रलय धर्मी है।

उपर्युक्त जो परम वैज्ञानिक त्रिकाल में अखंडित, वस्तु स्वातंत्र्य एवं वस्तु स्वरूप का कथन करने वाले ऐसे जिनवरवृषभ अर्थात् परम तीर्थंकर देव हैं उन्हें नमस्कार है।

चाक्षुष (देखने योग्य-स्थूल) स्कन्ध की उत्पत्ति

भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः। (28)

Molecules are sometimes produced by the combind action of division and union which can be seen with the eyes.

भेद और संघात से चाक्षुष स्कन्ध बनता है।

संघात से ही स्कन्धों की उत्पत्ति की सिद्धि हो जाने पर भेदसंघात का ग्रहण करना निष्प्रयोजन है, ऐसा कहने पर भेदसंघात के ग्रहण के प्रयोजन का प्रतिपादन

करने के लिए कहा।

अनन्तानन्त परमाणुओं से उत्पन्न होकर भी कोई स्कन्ध चाक्षुष होता है तथा कोई अचाक्षुष।

प्रश्न-जो उनमें अचाक्षुष (चक्षु इन्द्रिय का विषय नहीं) है वह स्कन्ध चाक्षुष (चक्षु इन्द्रिय का विषय) कैसे हो सकता है?

उत्तर-भेद और संघात से अचाक्षुष स्कन्ध चक्षु इन्द्रिय का विषय बनता है, केवल भेद से स्कन्ध चाक्षुष नहीं बनता।

प्रश्न-इसकी उत्पत्ति कैसे होती है?

उत्तर-सूक्ष्म स्कन्ध से कुछ अंश का भेद होने पर भी यदि उसने सूक्ष्मता का परित्याग नहीं किया है तो वह स्कन्ध का अचाक्षुष का अचाक्षुष ही बना रहता है। सूक्ष्म परिणत पुनः दूसरा स्कन्ध उसका भेद होने पर भी अन्य के संघात से सूक्ष्मता का परित्याग करके स्थूलता को प्राप्त हो जाता है तब चाक्षुष हो जाता है अर्थात् आँखों से दिखने लग जाता है।

वैश्विक-सार्वभौम-परम सत्य का लक्षण

द्रव्य का लक्षण

सद्द्रव्य लक्षणम् ।। (29)

The differentia of a substance or Reality is sat, isness or being.

द्रव्य का लक्षण सत् है।

यह विश्व शाश्वतिक है। क्योंकि इस विश्व में स्थित समस्त द्रव्य भी शाश्वतिक है। आधुनिक विश्व में भी सिद्ध हो गया है कि शक्ति या मात्रा कभी भी नष्ट नहीं होती है, परन्तु परिवर्तन होकर अन्य रूप हो जाती है। विज्ञान में कहा भी है-

Matter and energy neither be created nor destroyed. Each can be completely changed into another form or into one another.

विज्ञान के मूलभूत सिद्धान्त हैं कि किसी नई वस्तु की सृष्टि नहीं होती है एवं कोई वस्तु सम्पूर्ण रूप से नष्ट नहीं होती। केवल उसके आकार और पर्याय में परिवर्तन होता है।

दवियदि गच्छति ताइं ताइं सब्भाव पज्जयाइं जं।

दवियं तं भण्णंते अणण्णभूदं तु सत्तादो।। (9) (पंचास्तिकाय)

What flows or maintains its identity through its several qualities and modifications and what is not different from satta or substance, that is called Dravya by the all knowing.

उन-उन सद्भाव पर्यायों को जो द्रवित होता है-प्राप्त होता है, उसे द्रव्य कहते हैं-जो कि सत्ता से अनन्यभूत है।

दव्वं सल्लक्खणयं उप्पादव्ययधुवत्तसंजुत्तं।

गुणंपज्जयासयं वा जं तं भण्णंति सव्वण्हू।। (10)

Whatever has substantiality, has the dialectical triad of birth, death and permanence, and is the substratum of qualities and modes is Dravya. So say the all-knowing.

जो सत् लक्षण वाला है, जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य संयुक्त है अथवा जो गुण पर्यायों को आश्रय-आधार है, उसे सर्वज्ञ भगवान् द्रव्य कहते हैं।

प्रवचनसार में भी कुन्दकुन्द देव ने कहा है-

सब्भावो हि सहावो गुणेहिं सगपज्जएहिं चित्तेहिं।

दव्वस्स सव्वकालं उप्पादव्वयधुवत्तेहिं।। (96) (प्रवचनसार, पृ. 227)

अनेक प्रकार के गुण तथा अनेक प्रकार की अपनी पर्यायों से और उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य से सर्वकाल में द्रव्य का जो अस्तित्व है वह वास्तव में स्वभाव है।

अस्तित्व वास्तव में द्रव्य का स्वभाव है और वह (अस्तित्व)

(1) अन्य साधन से निरपेक्ष होने के कारण से,

(2) अनादि-अनन्त, अहेतुक, एकरूप वृत्ति से सदा ही प्रवृत्त होने के कारण से,

(3) विभाव धर्म से विलक्षण होने से,

(4) भाव और भाववानता के भाव से अनेकत्व होने पर भी प्रदेश-भेद न होने से, द्रव्य के साथ एकत्व को धारण करता हुआ द्रव्य का स्वभाव ही क्यों न हो? (अवश्य होवे) वह अस्तित्व, जैसे भिन्न-भिन्न द्रव्यों में प्रत्येक में समाप्त नहीं हो जाता है, उसी प्रकार द्रव्य, गुण और पर्याय एक-दूसरे से परस्पर सिद्ध होते हैं-यदि

एक न हो तो दूसरे दो भी सिद्ध नहीं होते, (इसीलिये) उनका अस्तित्व एक ही है।

इह विविहलक्खणाणं लक्खणमेगं सदित्ति सव्वगयं।
उवदिसदा खलु धम्मं जिणवरवसहेण पण्णत्तं।। (97)

धर्म का उपदेश करने वाले जिनवर वृषभ के द्वारा इस विश्व में विविध लक्षण वाले द्रव्यों का वास्तव में 'सत्' ऐसा सर्वगत (सबमें व्यापने वाले) एक लक्षण कहा गया है। वास्तव में इस विश्व में विचित्रता को विस्तारित करते हुए (विविधता अनेकत्व को दिखाते हुए) अन्य द्रव्यों से व्यावृत्त (भिन्न) रहकर वर्तमान और प्रत्येक द्रव्य की सीमा को बाँधते हुए ऐसे विशेष लक्षणभूत स्वरूपास्तित्व से लक्षित भी सर्व द्रव्यों की विचित्रता के विस्तार को अस्त करता हुआ सर्व द्रव्यों में प्रवृत्त होकर रहने वाला और प्रत्येक द्रव्य की बँधी हुई सीमा को भेदता (तोड़ता) हुआ 'सत्' ऐसा जो सर्वगत सामान्य लक्षणभूत एक सादृश्यास्तित्व है, वह ही वास्तव में एक ही जानने योग्य है। इस प्रकार 'सत्' ऐसा कथन और 'सत्' ऐसा ज्ञान सर्व पदार्थों का परामर्श (स्पर्श ग्रहण) करने वाला है। यदि वह ऐसा (सर्व पदार्थ परामर्शी) न हो तो कोई पदार्थ सत्, कोई असत् और कोई अवाच्य होना चाहिए, किन्तु वह तो निषिद्ध ही है और यह (सत् ऐसा कथन और ज्ञान के सर्व पदार्थ परामर्शी होने की बात) तो सिद्ध हो सकती है।

दव्वं सहावसिद्धं सदिति जिणा तच्चदो समक्खादा। (98)

द्रव्य स्वभाव से ही सिद्ध और स्वभाव से ही सत् है-ऐसा जिनेन्द्र देव ने यथार्थतः कहा है, इस प्रकार आगम से सिद्ध है।

वास्तव में द्रव्यों से द्रव्यान्तरों की उत्पत्ति नहीं होती, क्योंकि सर्व द्रव्यों के स्वभावसिद्धपना है (सर्व द्रव्य पर द्रव्य की अपेक्षा बिना अपने स्वभाव से ही सिद्ध है) उनकी स्वभावसिद्धता तो उनकी अनादिनिधनता है, क्योंकि अनादिनिधन अन्य साधन की अपेक्षा नहीं रखता। वह (द्रव्य) गुण-पर्यायात्मक अपने स्वभाव को ही जो कि मूल साधन है, धारण करके स्वयंमेव सिद्ध और सिद्धि वाला हुआ वर्तता है। जो द्रव्यों में उत्पन्न होता है वह तो द्रव्यान्तर नहीं है, (किन्तु) कदाचित् अर्थात् कथंचित् (अनित्यता) के होने से वह पर्याय है। जैसे-द्वि-अणुक आदि तथा मनुष्य इत्यादि द्रव्य तो अनवधि (मर्यादारहित) त्रिसमय-अवस्थायी (त्रिकाल-स्थायी) है, (इसीलिये)

वैसा (कादाचित्क-क्षणिक-अनित्य) नहीं है।

ण हवदि जदि सद्दव्वं असद्धुव्वं हवदि तं कहं दव्वं।
हवदि गुणो अण्णं वा तम्हा दव्वं सयं सत्ता।। (105)

यदि द्रव्य स्वरूप से ही सत् न हो तो निश्चित असत् होगा। जो असत् होगा वह द्रव्य कैसे हो सकता है? (अर्थात् नहीं हो सकता) अथवा यदि असत् न हो तो वह सत्ता से अन्य पृथक् होगा? सो भी कैसे हो सकता है? इसीलिये द्रव्य स्वयं ही सत्ता रूप है। यदि द्रव्य स्वरूप से ही सत् न हो तो उसकी दो गति यह होगी कि वह (1) असत् होगा अथवा (2) सत्ता से पृथक् होगा। उनमें से यदि असत् होगा तो ध्रौव्य के असम्भव होने से स्वयं को स्थिर न रखता हुआ द्रव्य ही लोप हो जाएगा और यदि सत्ता से पृथक् होगा तो सत्ता के बिना भी अपनी सत्ता रखता हुआ इतने द्रव्य की सत्ता रखने मात्र प्रयोजन वाली सत्ता का लोप कर देगा।

स्वरूप से ही सत् होता हुआ (1) ध्रौव्य के सद्भाव के कारण स्वयं को स्थिर रखता हुआ द्रव्य उदित होता है (अर्थात् सिद्ध होता है) और (2) सत्ता से पृथक् रहकर (द्रव्य) स्वयं को स्थिर (विद्यमान) रखता हुआ इतने ही मात्र प्रयोजन वाली सत्ता को उदित (सिद्ध) करता है। इसीलिये द्रव्य स्वयं ही सत्व (सत्ता) रूप से स्वीकार करना चाहिए। क्योंकि भाव और भाववान (द्रव्य) का अपृथक्त्व द्वारा अन्यत्व है प्रदेश भेद न होते हुए संज्ञा-संख्या लक्षण आदि द्वारा अन्यत्व है।

पविभत्तपदेसत्तं पुधत्तमिदि सासणं हि वीरस्स।
अण्णत्तमतब्भावो ण तब्भवं होदि कधमेगं।। (106)

जिसमें प्रदेशों की अपेक्षा अत्यन्त भिन्नता हो वह पृथक्त्व है। ऐसे श्री महावीर भगवान् की आज्ञा है। स्वरूप की एकता का न होना अन्यत्व है। ये सत्ता और द्रव्य एक स्वरूप नहीं है तब किस तरह दोनों एक हो सकते हैं? जहाँ प्रदेशों की अपेक्षा एक-दूसरे से अत्यन्त पृथक्पना हो अर्थात् प्रदेश भिन्न-भिन्न हो जैसे दण्ड और दण्डी में भिन्नता है। इसको पृथक्त्व नाम का भेद कहते हैं। इस तरह पृथक्त्व या भिन्नपना शुद्ध आत्मद्रव्य की शुद्ध-सत्ता गुण के साथ नहीं सिद्ध होता है, क्योंकि इनके परस्पर प्रदेश भिन्न-भिन्न नहीं हैं। जो द्रव्य के प्रदेश हैं वे ही सत्ता के प्रदेश हैं। जैसे-शुक्ल वस्त्र और शुक्ल गुण का स्वरूप भेद है, परन्तु प्रदेश भेद नहीं है-ऐसे गुणी और गुण

के प्रदेश भिन्न-भिन्न नहीं होते। ऐसे श्री वीर नाम के अन्तिम तीर्थंकर परमदेव की आज्ञा है। जहाँ संज्ञा लक्षण प्रयोजन आदि से परस्पर स्वरूप की एकता नहीं है वहाँ अन्यत्व नाम का भेद है ऐसा अन्यत्व या भिन्नपना मुक्तात्मा द्रव्य और उसके शुद्ध सत्ता गुण में है। यदि कोई कहे कि जैसे सत्ता और द्रव्य में प्रदेशों की अपेक्षा अभेद है वैसे संज्ञादि लक्षण रूप से भी अभेद हो ऐसा मानने से क्या दोष होगा? इसका समाधान करते हैं कि ऐसा वस्तु स्वरूप नहीं है। वह मुक्तात्मा द्रव्य शुद्ध अपने सत्ता गुण के साथ प्रदेशों की अपेक्षा अभेद होते हुए भी संज्ञा आदि के द्वारा सत्ता और द्रव्य तन्मयी नहीं है। तन्मय होना ही निश्चय से एकता का लक्षण है, किन्तु संज्ञादि रूप से एकता का अभाव है। सत्ता और द्रव्य में नानापना है। जैसे यहाँ मुक्तात्मा द्रव्य में प्रदेश के अभेद होने पर भी संज्ञादिरूप से नानापना कहा गया है, तैसे ही सर्व द्रव्यों का अपने-अपने स्वरूप सत्ता गुण के साथ नानापना जानना चाहिए, ऐसा अर्थ है।

परम सत्य की परिणमनशीलता

सत् का लक्षण

उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत्।। (30)

Sat (is a) simultaneous possession (of) (उत्पाद) Coming into existence birth.

व्यय-Going out of existence, decay, and

ध्रौव्य-Continuous sameness of existence, permanence.

जो उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य इन तीनों से युक्त अर्थात् इन तीनों रूप है वह सत् है।

द्रव्य सत् स्वरूप है। सत् स्वरूप होने के कारण द्रव्य अनादि से है तथा अन्त तक रहेगा। तथापि यह सत् अपरिवर्तन नहीं है, बल्कि नित्य परिवर्तनशील है। नित्य परिवर्तनशील होते हुए भी इनका नाश नहीं होता है, इसीलिये उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य का सदा सद्भाव होता है, इसीलिये ये सदा सत् स्वरूप ही रहते हैं।

उत्पाद-स्वजाति को न छोड़ते हुए भावान्तर (पर्यायान्तर) की प्राप्ति उत्पाद है। चेतन या अचेतन द्रव्य का स्वजाति को न छोड़ते हुए भी जो पर्यायान्तर की

प्राप्ति है वह उत्पाद है। जैसे-मृत्पिण्ड में घट पर्याय अर्थात् मिट्टी जैसे अपने स्वभाव को छोड़कर घट पर्याय से उत्पन्न होती है। वह घट उसका उत्पाद है। उसी प्रकार जीव या पुद्गलादि अजीव पदार्थ अपने स्वभाव को न छोड़कर पर्यायान्तर से परिणमन करते हैं।

व्यय-उसी प्रकार स्वजाति को न छोड़ते हुए पूर्व पर्याय के विनाश को व्यय कहते हैं। स्वजाति को न छोड़ते हुए चेतन वा अचेतन पदार्थ की पूर्व पर्याय का जो नाश होता है वह 'व्यय' है। जैसे कि घट की उत्पत्ति होने पर मिट्टी के पिण्डाकार का नाश होता है।

ध्रौव्य-ध्रुव-स्थैर्य कर्म का स्थिर रहना ध्रौव्य है। अनादि परिणामिक स्वभाव से व्यय और उत्पाद का अभाव है। अर्थात् अनादि परिणामिक स्वभाव की अपेक्षा द्रव्य का उत्पाद-व्यय नहीं होता है, द्रव्य ध्रुव रूप से रहता है अर्थात् स्थिर रहता है, उसको ध्रुव कहते हैं और ध्रुव का जो भी भाव या कर्म है, वह ध्रौव्य कहलाता है। जैसे कि पिण्ड और घट दोनों अवस्थाओं में मृदुपना का अन्वय रहता है।

णत्थि विणा परिणामं अत्थो अत्थं विणेह परिणामो।
दव्वगुण पज्जयत्थो अत्थो अत्थित्तणिव्वत्तो।। (10) (प्रवचनसार)

लोक में परिणाम के बिना पदार्थ नहीं है और पदार्थ के बिना परिणाम नहीं है। द्रव्य, गुण व पर्याय में रहने वाला पदार्थ अस्तित्व से बना हुआ है।

उत्पादो य विणासो विज्जदि सव्वस्स अट्ठजादस्स।
पज्जाएण दु केणवि अट्ठो खलु होदि सब्भूदो।। (18)

जैसे इस लोक में शुद्ध स्वर्ण के बाजूबन्द (रूप) पर्याय से उत्पाद देखा जाता है, पूर्व अवस्था रूप से वर्तने वाली अँगूठी इत्यादि पर्याय से विनाश देखा जाता है और पीलापन आदि पर्याय से तो दोनों में (बाजूबन्द और अँगूठी में) उत्पत्ति विनाश को प्राप्त न होने वाले (सुवर्ण) ध्रौव्यत्व दिखाई देता है, इसी प्रकार सर्व द्रव्यों के किसी पर्याय से उत्पाद, किसी (पर्याय) से विनाश और किसी पर्याय से ध्रौव्य होता है। ऐसा जानना चाहिए।

अपरिच्चत्त सहावेणुप्पादव्वयधुवत्तसंबद्धं।
गुणवं च सपज्जायं जं तं दव्वं ति वुच्चंति।। (95)

स्वभाव को छोड़े बिना जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य संयुक्त है तथा गुणयुक्त और पर्याय सहित है 'द्रव्य' ऐसा कहते हैं।

यहाँ (इस विश्व में) वास्तव में जो स्वभाव भेद किये बिना उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य त्रय से और गुण, पर्याय द्वय से लक्षित होता है। इनमें से (स्वभाव, उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, गुण और पर्याय में से) वास्तव में द्रव्य का स्वभाव अस्तित्व सामान्य रूप अन्वय है, अस्तित्व को तो दो प्रकार का आगे कहेंगे-(1) स्वरूप अस्तित्व, (2) सादृश्य अस्तित्व। उत्पाद, प्रादुर्भाव (प्रगट होना-उत्पाद होना) है, व्यय प्रच्युति (नष्ट होना) है, ध्रौव्य अवस्थिति (टिकना) है। गुण, विस्तार विशेष हैं। वे सामान्य-विशेषात्मक होने से दो प्रकार के हैं। इनमें अस्तित्व, नास्तित्व, एकत्व, अन्यत्व, पर्यायत्व, सर्वगतत्व, असर्वगतत्व, भोक्तृत्व, अगुरुलघुत्व इत्यादि सामान्य गुण हैं। अवगाहहेतुत्व, गतिनिमित्तता, स्थितिकारणत्व, वर्तनायतनत्व, रूपादिमत्व, चेतनत्व इत्यादि विशेष गुण हैं। पर्याय आयत विशेष हैं। द्रव्य का उन उत्पादादि के साथ अथवा गुण पर्यायों के साथ लक्ष्य लक्षण भेद होने पर भी स्वरूप भेद नहीं है (सत्ता भेद नहीं है) स्वरूप से ही द्रव्य वैसा होने से (अर्थात् द्रव्य ही स्वयं उत्पादादि रूप तथा गुण-पर्याय रूप परिणमन करता है, इस कारण स्वरूप भेद नहीं है।)

सदवट्ठिदं सहावे दव्वं दव्वस्स जो हि परिणामो।
अत्थेसु सो सहावो ठिदिसंभवणाससंबद्धो।। (99)

स्वभाव में अवस्थित सत् द्रव्य है, द्रव्य का गुण-पर्यायों में जो उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य सहित परिणाम है वह उसका स्वभाव है।

ण भवो भंगविहीणो भंगो वा णत्थि संभवविहीणो।
उत्पादो वि य भंगो ण विणा धोव्वेण अत्थेण।। (100)

वास्तव में उत्पाद, व्यय के बिना नहीं होता और व्यय, उत्पाद के बिना नहीं होता तथा उत्पाद और व्यय स्थिति (ध्रौव्य) के बिना नहीं होते और ध्रौव्य उत्पाद तथा व्यय के बिना नहीं होता।

अविनश्वरत्व का सिद्धान्त

नित्य का नियम

तद्भावाव्ययं नित्यम्।। (31)

Parmanence means indestructibility of the essence or the quality of the substance.

उसके भाव से (अपनी जाति से) च्युत न होना नित्य है।

जो प्रत्यभिज्ञान का कारण है वह तद्भाव है, 'वही यह है' इस प्रकार के स्मरण को 'प्रत्यभिज्ञान' कहते हैं। वह अकस्मात् तो होता नहीं, इसीलिये जो इसका कारण है वही तद्भाव है। इसकी निरुक्ति 'भवनं भावः, तस्य भावः तद्भावः' इस प्रकार होती है। तात्पर्य यह है कि पहले वस्तु को जिस रूप देखा है उसी रूप उसके पुनः होने से 'वही यह है' इस प्रकार का प्रत्यभिज्ञान होता है। यदि पूर्व वस्तु का सर्वथा नाश हो जाये या सर्वथा नई वस्तु का उत्पाद माना जांये तो इससे स्मरण की उत्पत्ति नहीं हो सकती और स्मरण की उत्पत्ति न हो सकने से स्मरण के आधीन जितना लोक-संव्यवहार चालू है वह सब विरोध को प्राप्त होता है, इसीलिये जिस वस्तु का जो भाव है उस रूप से च्युत न होना तद्भावाव्यय अर्थात् नित्य है ऐसा निश्चित होता है, परन्तु इसे कथंचित् जानना चाहिए। यदि सर्वथा नित्यता मान ली जाये तो परिणमन का सर्वथा अभाव प्राप्त होता है और ऐसा होने से पर संसार और इसकी निवृत्ति के कारण रूप प्रक्रिया का निषेध (अभाव) प्राप्त होता है।

तत्त्वार्थसार में कहा भी है-

द्रव्याण्येतानि नित्यानि तद्भावान्न व्ययन्ति यत्।

प्रत्यभिज्ञानहेतुत्वं तद्भावस्तु निगद्यते।। (14)

ये द्रव्य नित्य हैं, क्योंकि अपने स्वभाव से नष्ट नहीं होते। अपना स्वभाव ही प्रत्यभिज्ञान का कारण कहा जाता है।

भावस्स णत्थि णासो णत्थि अभावस्स चेव उप्पादो।

गुणपज्जयेसु भावा उप्पादवए पकुव्वंति।। (15) (पंचास्तिकाय)

सत् द्रव्य का द्रव्यरूप से विनाश नहीं है, अभाव का असत् अन्य द्रव्य का द्रव्यरूप से उत्पाद नहीं है, परन्तु भाव सत् द्रव्ये, सत् के विनाश और असत् के

उत्पाद बिना ही, गुणपर्यायों में विनाश और उत्पाद करते हैं। जिस प्रकार घी की उत्पत्ति में गोरस का-सत् का-विनाश नहीं है तथा गोरस से भिन्न पदार्थान्तर का-असत् का उत्पाद नहीं है, किन्तु गोरस को ही सत् का विनाश और असत् का उत्पाद किये बिना ही पूर्व अवस्था से विनाश को प्राप्त होने वाले और उत्तर अवस्था से उत्पन्न होने वाले। अतः उपसर्जनीभूत (गौण) पदार्थ अनर्पित (अविवक्षित) कहलाता है। वस्तु स्वरूप को जानने की जो गौण-मुख्य व्यवस्था है उसका व्यावहारिक सटीक वर्णन अमृतचन्द्र सूरि ने पुरुषार्थसिद्धि ग्रन्थ में वर्णन किया है। यथा-

एकेनाकर्षती श्लथयंती वस्तुतत्त्वमितरेण।
अन्तेन जयति जैनी नीतिर्मथाननेत्रमिव गोपी।। (225)

जिस प्रकार ग्वालिन दही को बिलोती हुई एक रस्सी को अपनी ओर खींचती है, दूसरी रस्सी को ढीली करती है। यद्यपि रस्सी एक होने पर भी रई में लिपटी हुई रहने के कारण दो भागों में बँट जाती है, उसे गोपिका दोनों हाथों में पकड़कर दही बिलोती है। जिस समय वह एक हाथ से एक ओर की रस्सी को अपनी ओर खींचती है, उसी समय दूसरे हाथ की रस्सी को ढीली कर देती है अर्थात् उसे आगे बढ़ा देती है, इस प्रकार परस्पर एक को खींचने से दूसरी को ढीली करने से वह मक्खन (लोणी) निकाल देती है। यदि ग्वालिनी एक साथ दोनों छोर को समान बल से खींचती एवं छोड़ती तो मथनी गतिशील नहीं बनती और मक्खन भी नहीं निकलता। इसी प्रकार वस्तु स्वरूप के परिज्ञान के लिए विवक्षित विषय को मुख्य कर दिया जाता है एवं अविवक्षित विषय को गौण किया जाता है। इसका मतलब यह नहीं कि विवक्षित गुण, धर्म वस्तु में है एवं अविवक्षित गुण, धर्म वस्तु से पृथक् होकर लोप हो गये हो। इसको ही जैन धर्म में नयवाद या स्याद्वाद कहते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक युग के महामेधावी वैज्ञानिक आईंस्टीन ने भी इस अनेकान्त सिद्धान्त को स्वीकार किया है। वे भी मानते हैं कि प्रत्येक वस्तु का कथन सापेक्ष दृष्टि से होना चाहिए। आईंस्टीन यहाँ तक मानते हैं कि जब तक जीव असर्वज्ञ रहेगा तब तक वह सम्पूर्ण सत्य को नहीं जान सकता, केवल आंशिक सत्य को जान सकता है। इस आंशिक सत्य को आंशिक सत्य मानना सम्यक् है एवं आंशिक सत्य को ही पूर्ण सत्य मान लेना मिथ्या है। यथा-

Einstain says, 'we can only know the relative truth the real truth is know only to the universal observer.

आईंस्टीन के सापेक्षवाद के अनुसार हम जब जो जानते हैं, वह सम्पूर्ण सत्य (Absolute truth) नहीं है, किन्तु सापेक्षिक सत्य है। (Relative truth) है, सम्पूर्ण सत्य सर्वदर्शी सर्वज्ञ के द्वारा ही जाना जा सकता है।

सन्मति सूत्र में सिद्धसेन दिवाकर ने बताया कि अनेकान्त केवल वस्तु स्वरूप को प्रतिपादन करने वाली दार्शनिक प्रणाली नहीं है, परन्तु लोक व्यवहार को सुचारू रूप से व्यवस्थित करने के लिए लौकिक प्रणाली भी है।

जेण विणा लोगस्स वि ववहारो सव्वहा ण णिव्वडई।
तस्स भुवणेक्कगुरुणो णमो अणेगंतवायस्स।। (69)
न पुनर्वास्तवं मूर्तममूर्तं स्यादवास्तवम्।
सर्वशून्यादिदोषाणां सन्निपातात्तथा सति।। (8) (पञ्चाध्याया)

मूर्त पदार्थ ही वास्तविक है अमूर्त पदार्थ वास्तविक नहीं है, यह बात भी नहीं है क्योंकि ऐसा मानने से सब पदार्थों की शून्यता का प्रसंग आ जायेगा।

कितने ही मनुष्य (पुरुष) प्रत्यक्ष होने वाले पदार्थों को ही मानते हैं, परोक्ष पदार्थ को नहीं मानते। परन्तु परोक्ष पदार्थों के स्वीकार किये बिना पदार्थों की व्यवस्था ही नहीं बन सकती। परोक्ष पदार्थों की सत्ता, अनुमान और आगम से मानी जाती है। अविनाभावी हेतु से अनुमान प्रमाण माना जाता है और स्वानुभवन, अखण्डयुक्ति तथा अबाधकपने से आगमप्रमाण माना जाता है।

जीव-अजीव की सिद्धि

नासिद्धं सिद्धदृष्टान्ताच्चेतनाऽचेतनद्वयम्।
जीववद्वपुर्घटादिभ्यो विशिष्टं कथमन्यथा।। (4) (पञ्चाध्यायी)

जीव और अजीव अथवा चेतन और अचेतन-ये दो पदार्थ हैं यह बात असिद्ध नहीं है। प्रसिद्ध दृष्टान्त से जीव अथवा अजीव दोनों की सिद्धि हो जाती है। यदि जीव और अजीव दोनों को अलग-अलग न मानकर एक रूप ही मान लिया जाय तो जीवित शरीर में और घट, वस्त्र आदिक जड़ पदार्थों में जो प्रत्यक्ष अन्तर दिखता है वह नहीं दिखना चाहिए। इस प्रत्यक्ष भेद से ही जीव और अजीव की

भिन्न-भिन्न सिद्धि हो जाती है।

यद्यपि आत्मा अनन्त गुणात्मक अमूर्त पदार्थ है इसलिए उसका प्रत्यक्ष (दृष्टिगोचर) नहीं हो सकता है तथापि अनादिकाल से मूर्त कर्मों का सम्बन्ध होने से, संसारी आत्मा, शरीर में अनुमान प्रमाण और स्वानुभव से जाना जाता है। प्रत्येक संसारी आत्मा जैसा शरीर पाता है उसी प्रमाण में रहता है। जिस शरीर में आत्मा है वही जीवित कहलाता है। जीवित शरीर में जो-जो क्रियाएँ होती हैं, वे आत्मा की सिद्धि में प्रमाण हैं। किसी बात के विषय में प्रश्न करने पर ठीक-ठीक उत्तर मिलने से, तथा समझपूर्वक काम करने से, चतुरता पूर्वक बोलने आदि सभी बातों से भले प्रकार सिद्ध होता है कि शरीर, विशिष्ट आत्मा से भिन्न पदार्थ है और घट पटादि जड़ पदार्थ भिन्न हैं।

अस्ति जीवः सुखादीनां स्वसंवेदनसमक्षतः।
यो नैवं स न जीवोऽस्ति सुप्रसिद्धो यथा घटः।। (5) (पञ्चाध्यायी)

जीव एक स्वतंत्र पदार्थ है इस विषय में सुखादिकों का स्वसंवेदन ज्ञान ही प्रमाण है। जो सुखादिक का अनुभव नहीं करता है वह जीव भी नहीं है जिस प्रकार कि एक घड़ा।

'मैं सुखी हूँ' अथवा 'मैं दुःखी हूँ', इस आत्मा में मानसिक स्वसंवेदन (ज्ञान) प्रत्यक्ष होता है। सुख-दुःख का अनुभव ही आत्मा को जड़ से भिन्न सिद्ध करता है। घट वस्त्रादिक जड़ पदार्थों में सुख-दुःख की प्रतीति नहीं होती है, इसलिए वे जीव भी नहीं हैं। इस व्यतिरेक व्याप्ति से सुख-दुःखादिक का अनुभव करने वाला जीव पदार्थ सिद्ध होता है।

पदार्थों में विशेषता

क्रियाभावविशेषोस्ति तेषामन्वर्थतो यतः।
भाव क्रियाद्वयोपेताः केचिद्भावगता परे।। (24) (पञ्चाध्यायी)

उन छहों द्रव्यों में दो भेद हैं, कोई द्रव्य तो भावात्मक ही हैं और कोई भावात्मक तथा क्रियात्मक भी हैं।

जो पदार्थ सदा से रहते हैं, जिनमें हलन-चलन क्रिया नहीं होती है वे पदार्थ

तो भावरूप हैं, और जो पदार्थ कभी स्थिर भी रहते हैं और कभी क्रिया भी करते हैं वे भावस्वरूप भी हैं और क्रिया स्वरूप भी हैं। तात्पर्य यह है कि जिन पदार्थों में क्रियावतीशक्ति है उनमें क्रिया होती है। जिन पदार्थों में क्रियावतीशक्ति नहीं है उनमें हलन-चलन रूप क्रिया नहीं होती। वे केवल भाववती शक्ति वाले कहलाते हैं।

जिन पदार्थों में क्रियावती शक्ति नहीं है, केवल भाववती शक्ति है उन्हें अपरिणामी न समझ लेना चाहिए। परिणमन तो सदा सभी पदार्थों में होता है पश्रन्तु परिणमन दो तरह का होता है। जिसमें वस्तु के प्रदेशों का एक देश से दूसरे देश को गमन अर्थात् स्थान से स्थानान्तर हो उसे तो क्रिया रूप परिणमन कहते हैं और जिसमें प्रदेशों का तो हलन-चलन न हो परन्तु पहली अवस्था से दूसरी अवस्था हो जाय उसे भाव परिणमन कहते हैं। दृष्टांत के लिए हमारी कलम को ले लीजिए। कलम का टूट जाना तो उसका क्रिया रूप परिणमन है और बिना किसी हरकत से रखी हुई नवीन कलम का पुराना हो जाना भावरूप परिणमन है। निष्क्रिय भावों में इसी प्रकार का परिणमन होता है।

भाववन्तौ क्रियावन्तौ द्वावेतौ जीव पुद्गलौ।
तौ च शेषचतुष्कं च षडेते भावसंस्कृताः।। (25) (पञ्चाध्यायी)

जीव और पुद्गल में तो क्रिया और भाव दोनों शक्तियाँ हैं परन्तु धर्म, अधर्म, आकाश और काल-ये चार द्रव्य, केवल भाव शक्ति वाले ही हैं। इन चारों में क्रिया नहीं होती, ये चारों ही निष्क्रिय है।

क्रिया और भाव का लक्षण

तत्र क्रिया प्रदेशानां परिस्पंदश्चलात्मकः।
भावस्तत्परिणामोस्ति धाराबाह्येकवस्तुनि।। (26) (पञ्चाध्यायी)

प्रदेशों के हलन-चलन को क्रिया कहते हैं, और भाव उस परिणाम को कहते हैं जो कि प्रत्येक वस्तु में धारावाही (बराबर) रूप से होता रहता है।

प्रदेशों का एक स्थान से दूसरे स्थान को आना-जाना तो क्रिया कहलाती है और वस्तु में जो निष्क्रिय भाव है उन्हें भाव कहते हैं।

नासंभवमिदं यस्मादर्थाः परिणामिनोऽनिशं।

तत्र केचित् कदाचिद्वा प्रदेशचलनात्मकाः।। (27) (पञ्चाध्यायी)

यह बात असिद्ध नहीं है कि पदार्थ प्रतिक्षण परिणमन करते रहते हैं। उसी परिणमन में कभी-कभी किन्हीं-किन्हीं पदार्थों के प्रदेश भी हलन-चलन करते हैं।

द्रव्यों के दस सामान्य गुण

द्रव्यों के दस सामान्य गुण इस प्रकार है-

(1) अस्तित्व (2) वस्तुत्व (3) द्रव्यत्व (4) प्रमेयत्व (5) अगुरुलघुत्व (6) प्रदेशत्व (7) चेतनत्व (8) अचेतनत्व (9) मूर्तत्व और (10) अमूर्तत्व।

(1) **अस्तित्व गुण**-जिस द्रव्य का जो स्वभाव प्राप्त है उस स्वभाव से च्युत नहीं होना अस्तित्व गुण है।

(2) **वस्तुत्व गुण**-सामान्य विशेषात्मक वस्तु होती है, उस वस्तु का जो भाव है वह वस्तुत्व गुण है।

(3) **द्रव्यत्व गुण**-जो अपने प्रदेश समूह के द्वारा अखण्डता से अपने स्वभाव और विभाव पर्यायों को प्राप्त होता है, होयेगा, हो चुका है वह द्रव्य है। उस द्रव्य का जो भाव है वह द्रव्यत्व गुण है।

(4) **प्रमेयत्व गुण**-जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य किसी न किसी प्रमाण (ज्ञान) का विषय अवश्य होता है उसे प्रमेयत्व गुण कहते है।

(5) **अगुरुलघुत्व गुण**-जो सूक्ष्म है, वचन के अगोचर है, हर समय परिणमनशील है और आगम प्रमाण से जाना जाता है वह अगुरुलघु गुण है अथवा जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य में द्रव्यपना कायम रहता है अर्थात् एक द्रव्य दूसरे द्रव्य रूप नहीं होता है, एक गुण दूसरे गुण रूप नहीं होता है और द्रव्य में रहने वाले अनन्तगुण बिखरकर अलग-अलग नहीं हो पाते हैं उस शक्ति को अगुरुलघु गुण कहते हैं।

(6) **प्रदेशत्व गुण**-जिस गुण के निमित्त से द्रव्य, क्षेत्रता को प्राप्त हो वह प्रदेशत्व गुण है अर्थात् जिस गुण के कारण द्रव्य में कुछ न कुछ आकार हो उसे प्रदेशत्व गुण कहते हैं।

(7) **चेतनत्व गुण**-अनुभूति का नाम चेतना है। जिस शक्ति के निमित्त से स्व-पर की अनुभूति अर्थात् प्रतिभासकता होती है अर्थात् जाना जाता है वह चेतना गुण है।

(8) **अचेतनत्व गुण**-जड़पने को अचेतन कहते हैं, अननुभवन सो अचेतनता है। चेतना का अभाव ही अचेतना है। इस गुण के माध्यम से स्व-पर का अनुभव नहीं होता है।

(9) **मूर्तत्व गुण**-रूपादि भाव को अर्थात् स्पर्श, रस, गंध, वर्ण भाव को मूर्तत्व कहते हैं।

(10) **अमूर्तत्व गुण**-स्पर्श, रस, गंध, वर्ण से रहित भाव अमूर्तत्व है।

ये गुण एक से अधिक द्रव्य में पाये जाते हैं इसलिए सामान्य गुण हैं। जीव द्रव्य अनन्तानन्त होने के कारण तथा एक चेतनत्व सब जीवों में पाये जाने के कारण चेतनत्व गुण सामान्य है। पुद्गल द्रव्य अनन्त होने के कारण एवं सर्व पुद्गलों में मूर्तत्व गुण पाये जाने से मूर्तत्व गुण सामान्य है। जीव के अतिरिक्त अन्य पाँच द्रव्य अचेतन हैं इसलिए अचेतनत्व गुण सामान्य है। पुद्गल को छोड़कर अन्य पाँच द्रव्य अमूर्तिक हैं इसलिए अमूर्तत्व गुण सामान्य है।

उपरोक्त 10 सामान्य गुणों में से प्रत्येक द्रव्य में आठ-आठ गुण पाये जाते हैं और दो-दो नहीं पाये जाते हैं। जैसे जीवद्रव्य में अचेतनत्व और मूर्तत्व ये दो गुण नहीं है। पुद्गल द्रव्य में चेतनत्व और अमूर्तत्व ये दो गुण नहीं हैं। धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्य में चेतनत्व, मूर्तत्व ये दो गुण नहीं हैं। जीव में अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व, प्रदेशत्व, चेतनत्व, अमूर्तत्व ये आठ गुण होते हैं। पुद्गल द्रव्य में अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व, प्रदेशत्व, अचेतनत्व और मूर्तत्व ये आठ गुण होते हैं। धर्म, अधर्म, आकाश और काल द्रव्यों में अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व, प्रदेशत्व और अचेतनत्व, अमूर्तत्व ये आठ गुण होते हैं।

सोलह विशेष गुण

द्रव्यों के 16 विशेष गुण इस प्रकार हैं-

(1) ज्ञान, (2) दर्शन, (3) सुख, (4) वीर्य, (5) स्पर्श, (6) रस, (7) गन्ध, (8) वर्ण, (9) गति हेतुत्व, (10) स्थिति हेतुत्व, (11) अवगाह हेतुत्व, (12) वर्तना हेतुत्व, (13) चेतनत्व, (14) अचेतनत्व, (15) मूर्तत्व, (16) अमूर्तत्व।

(1) **ज्ञान**-जिसके द्वारा जीव त्रिकाल विषयक समस्त गुण और उनकी अनेक प्रकार की पर्यायों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से जाने सो ज्ञान गुण है। बहिर्मुख चित्प्रकाश को ज्ञान कहते हैं। जिस शक्ति के द्वारा आत्मा, पदार्थ को साकार जानता है उसे ज्ञान कहते हैं। भूतार्थ का प्रकाश करने वाले अथवा सद्भाव का निश्चय करने वाले धर्म को ज्ञान कहते हैं।

(2) **दर्शन**-अन्तर्मुख चित्प्रकाश को दर्शन कहते हैं। जो अवलोकन करता है वह आलोक या आत्मा है तथा वर्तन अर्थात् व्यापार वही वृद्धि है। अवलोकन अर्थात् आत्मा की वृत्ति तो आलोकन वृत्ति या स्वसंवेदन है और वही दर्शन है। प्रकाश ज्ञान है, उस प्रकाश ज्ञान के लिए जो आत्मा का व्यापार सो प्रकाश वृत्ति है और वही दर्शन है। विषय और विषयी के योग्य देश में होने की पूर्वावस्था दर्शन है। सामान्य विशेषात्मक बाह्य पदार्थों को अलग-अलग भेद रूप से ग्रहण नहीं करके जो सामान्य ग्रहण रूप अवभासना होता है उसे दर्शन कहते हैं।

(3) **सुख**-जो स्वाभाविक भाव के आवरण के विनाश होने से आत्मिक शांतरस अथवा जो आनन्द उत्पन्न होता है उसे सुख कहते हैं। सुख का लक्षण अनाकुलता है। स्वभाव प्रतिघात का अभाव ही सुख है। मोहनीय कर्म के उदय से इच्छा रूप आकुलता उत्पन्न होती है सो ही दुःख है। मोहनीय कर्म के अभाव से आकुलता का अभाव हो जाता है और आत्मिक परम आनन्द उत्पन्न होता है वही सुख है।

(4) **वीर्य**-जीव की शक्ति को वीर्य कहते हैं। आत्मा में अनन्त वीर्य है किन्तु अनादि काल से वीर्यान्तराय कर्म ने उसको घात कर रखा है। उसके क्षयोपशम के अनुसार कुछ वीर्य प्रकट होते है। पूर्ण क्षय होने के बाद अनन्त वीर्य प्रकट होता है। ये चारों गुण जीव के विशेष गुण हैं।

(5) **स्पर्श**-जो स्पर्श किया जाता है अर्थात् स्पर्शेन्द्रिय के द्वारा जाना जाता है

वह स्पर्श है। कोमल, कठोर, हल्का, ठंडा, गरम, रूखा, चिकना ये स्पर्श के आठ भेद हैं। वायु देखने में नहीं आने पर भी स्पर्शेन्द्रिय के द्वारा उसकी अनुभूति की जाती है इसलिए वायु भी पुद्गल है। सूर्य किरण में गर्म स्पर्श होने के कारण एवं दिखाई देने के कारण भी सूर्य किरण पुद्गल है।

(6) **रस**-जो स्वाद को प्राप्त होता है वह रस है। तीखा, कडुवा, खट्टा, मीठा, कसैला ये रस के पाँच भेद हैं।

(7) **गन्ध**-जो सूँघा जाता है वह गंध है। सुगंध-दुर्गंध के भेद से गंध दो प्रकार की होती है।

(8) **वर्ण**-जो देखा जाता है वह वर्ण है। काला, पीला, सफेद, नीला, लाल ये वर्ण के मुख्य पाँच भेद है। स्पर्शादि के जो आठ आदि भेद बताये हैं वे मूल भेद हैं। प्रत्येक, स्पर्शादि के संख्यात, असंख्यात और अनन्त भेद होते हैं। छाया एवं अंधकार, वर्ण होने के कारण वे भी पुद्गल हैं क्योंकि अंधकार, प्रकाश.की भाँति चक्षु से दिखाई देता है। जिसमें वर्ण होता है उसमें स्पर्शादि अविनाभावी गुण पाये जाने के कारण एवं पौद्गलिक इन्द्रिय के माध्यम से जानने के कारण अंधकार छायादि पुद्गल की पर्यायें हैं। इस प्रकार भी शंका नहीं करनी चाहिए कि जो चाक्षुष पदार्थ हैं वह प्रतिभासित होने में आलोक की अपेक्षा रखते हैं। परन्तु तम के प्रतिभास में प्रकाश की आवश्यकता नहीं है इसलिए तम चक्षु का विषय नहीं है? इसका समाधान यह है कि उल्लू आदि बिना प्रकाश के तम को देखते हैं। यह ठीक है कि अन्य चाक्षुष घट, पटादि बिना प्रकाश के हम नहीं देख सकते हैं किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि तम के देखने से भी प्रकाश की आवश्यकता पड़े। संसार में पदार्थों के विचित्र स्वभाव होते हैं। वे विचित्र स्वभाव के कारण ज्ञान में भी विचित्र रूप से प्रतिभासित होते हैं। पीत स्वर्ण, श्वेत मोती आदि में तेजस होने पर भी बिना प्रकाश के प्रतिभासित नहीं होते, जबकि दीपक, चन्द्र और प्रकाश का अवलम्बन नहीं लेते हैं। इसी प्रकार तम भी अपने विचित्र स्वभाव के कारण बिना प्रकाश से चक्षु का विषय होता है, अतः तम भी पुद्गल की पर्याय है। वर्तमान विज्ञान ने भी वैज्ञानिक पद्धति से प्रकाश एवं तम को पौद्गलिक सिद्ध कर दिया है। उपरोक्त स्पर्शादि चार विशेष गुण पुद्गल के हैं। उपरोक्त चारों में से कभी-कभी किसी एकादि गुण की प्रगटता रहती है, अन्य गुणों की नहीं तो

भी उसमें अन्य शेष गुण न्यूनता रूप से रहते हैं। इसके कारण जैन सिद्धान्त के अनुसार लोक में जो विभिन्न धातु आदि पाये जाते हैं वे सर्व पुद्गल ही हैं। ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, स्वर्ण, चाँदी, रेडियम, इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन आदि मौलिक एवं स्वतंत्र द्रव्य नहीं हैं किन्तु एक पुद्गल का ही परिणमन या अवस्था विशेष है।

(9) **गति हेतुत्व**-जीव और पुद्गल को गमन में सहकारी होना गति हेतुत्व है। धर्म द्रव्य का यह विशेष गुण है।

(10) **स्थिति हेतुत्व**-जीव और पुद्गल को ठहरने में सहकारी होना स्थिति हेतुत्व है। अधर्म द्रव्य का यह विशेष गुण हैं।

(11) **अवगाह हेतुत्व**-समस्त द्रव्यों को अवकाश देना अवगाहन हेतुत्व है। आकाश द्रव्य का यह विशेष गुण है।

(12) **वर्तना हेतुत्व**-समस्त द्रव्यों के वर्तन में (परिणमन) सहकारी होना वर्तना हेतुत्व है। काल द्रव्य का यह विशेष गुण है।

चेतनत्व एवं अचेतनत्व आदि का पहले वर्णन किया जा चुका है। चेतनत्व समस्त जीवों में पाया जाता है इसलिए इसको सामान्य गुण कहा गया है, किन्तु पुद्गलादि में नहीं पाया जाता है इसलिए विशेष गुण कहा गया है। इसी प्रकार अन्य गुणों को भी जानना चाहिए।

जीवद्रव्य के चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व, अमूर्तत्व आदि भाव-जैन कथन पद्धति एवं विचार पद्धति अत्यन्त सूक्ष्मता को लिए हुए एवं सत्य अन्वेषण के लिए अत्यन्त साधकतम उपाय है। वर्तमान पर्यन्त समस्त द्रव्यों को चेतन-अचेतन आदि दृष्टिकोण से विचार किया गया है। वर्तमान में केवल एक जीवद्रव्य में चेतनात्मक गुण कैसे पाये जाते हैं उसका विचार किया जायेगा। शुद्ध नय की अपेक्षा एवं द्रव्य दृष्टि से आत्मा अमूर्तिक होने पर भी अनादिकालीन पौद्गलिक कर्म बंध के कारण व्यवहार नय की अपेक्षा संसारी जीव मूर्तिक हैं। यथा-

तथा च मूर्तिमानात्मा सुराभिभव दर्शनात्।

न ह्यमूर्त्तस्य नभसो मदिरा मदकारिणी।। (19) (तत्वार्थ सार)

संश्लेष रूप एक क्षेत्रावगाह कर्म बंध के कारण आत्मा मूर्तिक है एवं मूर्तिक होने के कारण पौद्गलिक मदिरा से पागल हो जाती है। यदि संसारी जीव को मूर्तिक

नहीं मानेंगे तब मदिरा से भी उसको प्रभावित नहीं होना चाहिए, क्योंकि अमूर्तिक द्रव्य, मूर्तिक द्रव्य से प्रभावित नहीं हो सकता है। जैसे-अमूर्तिक आकाश को मदिरा मदकारिणी नहीं होती है। इससे सिद्ध होता है कि संसारी जीव रूपी है। यथा-

जीवाजीवं दव्व रूवारूवि त्ति होदि पत्तेयं।

संसारत्था रूवा कम्मविमुक्का अरूवगया।। (563) (गोम्मटसार)

Substances are living (Souls, JIva), and non-living (Nonsoul, Ajiva), each (of these) is material (Rupi) and immaterial (Arupi), mundane souls are material (Rupi). Souls free from karmic matter are immaterial (Arupi).

लोक के समस्त द्रव्यों के जीव, अजीव द्रव्य रूप से दो भेद हैं। पुनः जीव, अजीव द्रव्यों के रूपी-अरूपी रूप से दो-दो भेद हैं। जितने संसारी जीव हैं वे सब रूपी हैं क्योंकि अनादिकालीन पौद्गलिक कर्म के साथ एक क्षेत्रावगाह सम्बन्ध होने से रूपी हैं। जो जीव पौद्गलिक कर्म से रहित हो गये हैं वे सब अरूपी हैं, क्योंकि उनमें पुद्गल कर्मों का किसी भी प्रकार सम्बन्ध नहीं है। यह तो सामान्य जीव द्रव्य के रूपित्व-अरूपी का कथन है किन्तु जैनाचार्यों ने इतना कहकर ही अपने विचार एवं लेखनी को विराम नहीं दिया है उन्होंने और भी सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन किया हैं। तार्किक एवं दार्शनिक शिरोमणि आचार्य भट्टाकलंकदेव ने सिद्ध जीव भी मूर्तिक एवं अमूर्तिक हैं यह सिद्ध किया है।

स स्याद्विधिनिषेधात्मा स्वधर्मपरधर्मयोः।

समूर्तिर्बोधमूर्तित्वादमूर्तिश्च विपर्ययात्।। (8) (स्वरूप सम्बोधनम्)

आत्मा स्वधर्म-परधर्म की अपेक्षा एवं विधि-निषेध की अपेक्षा मूर्तिक एवं अमूर्तिक है। सिद्धात्मा बोध मूर्ति (ज्ञान मूर्ति) होने के कारण अर्थात् ज्ञानाकार होने से मूर्तिक है एक पौद्गलिक शरीर से रहित होने के कारण अमूर्तिक है।

सामान्य दृष्टि से जीव को छोड़कर शेष पाँच द्रव्य अचेतन हैं। संसारी जीव भी पौद्गलिक कर्म की अपेक्षा अचेतनवत् है। किन्तु आचार्य भट्टाकलंक देव ने शुद्धात्मा को भी चेतनात्मक-अचेनात्मक कहा है।

प्रमेयत्वादिभिर्धर्मैरचिदात्मा चिदात्मकः।

ज्ञानदर्शनतः तस्मात् चेतनाचेतनात्मकः।। (3) (स्वरूप सम्बोधनम्)

प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व आदि विशेष धर्म की अपेक्षा आत्मा, अचेतन स्वरूप है, क्योंकि प्रमेयत्व आदि गुण चेतन गुण से पृथक् हैं क्योंकि प्रत्येक गुण अन्य गुण से रहित एवं द्रव्य के आश्रय में रहते हैं। ''द्रव्याश्रया-निर्गुणागुणाः।'' किन्तु आत्मा, ज्ञान, दर्शन गुण की अपेक्षा चेतनात्मक हैं क्योंकि ज्ञान दर्शन चेतनात्मक है। इसी प्रकार शुद्धात्मा भी चेतना-चेतनात्मक है।

इसी प्रकार द्रव्य अनन्त गुण पर्यायों का भंडार है। द्रव्य में विरोधी धर्म भी अविरोध रूप से सहअवस्थान करते हैं। अन्य दार्शनिक भी एक द्रव्य में विरोधी धर्म को मानते हैं जैसे-

अणोरणीयान् महतो महीयान्।

क्षरमक्षरं च व्यक्ताव्यक्तं।। (श्वे. उप)

परमात्मा अणु से भी अणु है अर्थात् छोटा से भी छोटा है, महान् से भी महान् है। क्षर भी है, अक्षर भी है, व्यक्त भी है, अव्यक्त भी है। वर्तमान युग के श्रेष्ठ वैज्ञानिक आइंस्टीन का श्रेष्ठ सिद्धान्त सापेक्षतावाद (अनेकान्त एवं स्याद्वाद) है। वे भी विरोध धर्म सहित द्रव्य को मानते हैं।

जैन दर्शन सर्वज्ञ, द्वारा प्रणीत होने के कारण त्रिकाल अबाधित सत्य है। इसका प्रत्येक सिद्धान्त अत्यन्त वैज्ञानिक एवं दार्शनिकता को लिए हुए है। जैन सिद्धान्त की विदेशी वैज्ञानिकों ने भी भूरी-भूरी प्रशंसा की है।

Jainism is of a very high order. Its important teachings are based upon science. The more scientific knoledge advances the more the jain teaching will be proved (L.P. Tessitari, Italy).

कोई धर्म अथवा वस्तु प्राचीन हो अथवा नूतन हो, कोई प्रशंसा करे या निंदा करे, कोई माने किंवा न माने, उससे धर्म या वस्तु का महत्व न्यूनाधिक नहीं होता है। उसका महत्व उसके स्वरूप एवं सत्यता के ऊपर निर्भर है। यदि ज्ञान पिपासुओं को ज्ञान रूपी पीयूष चाहिए, मुमुक्ष को मोक्ष चाहिए, शांति के इच्छुकों को शांति चाहिए, सत्यान्वेषी को सत्य चाहिए, वैज्ञानिकों को यदि विज्ञान चाहिए, दार्शनिकों को यदि दर्शनशास्त्र चाहिए, राजनीतिज्ञों को यदि राजनीति चाहिए, ऐतिहासिकों को इतिहास चाहिए, मनोवैज्ञानिकों को यदि मनोविज्ञान चाहिए, समाज-सेवियों को यदि समाज-

सेवा चाहिए, रहस्यवादियों को यदि रहस्य चाहिए। तब उनके लिए निरपेक्ष दृष्टि से अत्यन्त सूक्ष्म रूप से जैन दर्शन का अवलोकन करना अत्यन्त आवश्यक है। सर्वजीवों का सर्वकामना पूर्ण करने वाला एवं जीव मात्र का धर्म, जैन धर्म के विश्व रूप (व्यापकरूपता) का हमें अवलोकन करना चाहिए।

सत्यान्वेषियों को धर्म के नाम से, शास्त्रों के नाम से, सत्य परम्परा एवं प्राचीनता के नाम से घृणा करके नहीं हटाना चाहिए। हमें क्या सत्य है इसे प्रत्यक्ष, परोक्ष, युक्ति, तर्क, आगम, अनुमान, गणित से देखना चाहिए। इसलिए कहा है कि 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्।' जो सत्य है वही शिव है, मंगलकारी है, शाश्वतिक है, सुन्दर है। 'सत्यमेव जयते।' सत्य की ही जय होती है। 'नानृतम्' मिथ्या की जय नहीं होती है। भले मिथ्या, अन्याय की प्राथमिक अवस्था में जय हो सकती है किन्तु अंत में तो सत्य की त्रिकाल में जय ही होती है। इसलिए सत्य की उपासना करना प्रत्येक जीव का कर्त्तव्य है। प्रमाद, अज्ञानादि वश से जो कुछ मेरे से इसमें त्रुटि हुई होगी उसको विद्वत्जन सहृदय सहित सम्यक् संशोधन करके सत्य का प्रकाश करें। त्रुटि से मुझे भी अवगत कराने का कष्ट करें।

व्याकरण से लेकर अनेकांत सिद्धांत संबंधी शोधपूर्ण कविता-

विरोध सापेक्ष अविरोध

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति....., सायोनारा.....)

दुर्लभ है अलभ्य नहीं आत्मोपलब्धि।
दुरूह है अगम्य नहीं मोक्ष की प्राप्ति।
अपूर्व है मोक्ष प्राप्ति संसारी जीवों के लिए।
भावी में मोक्ष संभव भव्य जीवों के लिए।
अज्ञेय है मोही के लिए परमात्मा स्वरूप।
(सुज्ञेय है मोही के अज्ञान भी परमात्मा के लिए।)
अज्ञये नहीं है कुछ भी परमात्मा के लिए।
सकारण होते हैं सभी व्यवहारनय के सत्य।

अकारण होते हैं सभी शुद्ध परम सत्य।

असंभव है परम सत्य का असत्य होना।

संभव है संभाव्य का सत्य घटित होना।

अदृश्य है अमूर्तिक द्रव्य छद्मस्थ हेतु।

दृश्यमान है अमूर्तिक द्रव्य भी सर्वज्ञ हेतु।

अभूतपूर्व है मोही के लिए आत्म-श्रद्धान।

भूतपूर्व (है) भी मुक्त के लिए आत्म-श्रद्धान। (प्रथमोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा)

निकम्मा होते है केवल शुद्ध परमात्मा।

निकम्मा न होते है कोई अशुद्ध आत्मा।

अहंभावी होते है जो शुद्धात्मा लीन।

अहंकारी होते है जो मोह से आच्छन्न।

स्वाभिमानी होते है जो शुद्धात्मा के ज्ञाता।

अभिमानी होते है जो मोही मूढ़ात्मा।

दिशा नामकरण होता है सापेक्ष।

दिशा नामकरण न होता है निरपेक्ष।

अनेकांत भी होता है अनेकांत।

निरपेक्ष न अनेकांत सापेक्ष है अनेकांत।

स्याद्वाद के भङ्ग भी होते हैं सप्त/(अनंत) भेद।

निर्विकल्प स्व-सम्वेदन होता है भेद रिक्त।

परम शुद्ध सत्य-द्रव्य होते है निरपेक्ष।

अनंत परम रहस्य छद्मस्थ न ज्ञानगम्य।

अनंत परम रहस्य सर्वज्ञ ज्ञानगम्य।

परम सत्य/(द्रव्य) भी नास्ति पर-स्वरूप अभावतः।

सर्वथा नास्ति स्वरूप संभव नहीं कदाचित्।

ज्ञान बिना न ज्ञेय, ज्ञेय बिना न ज्ञान।

सभी ही ज्ञानगम्य सो होते हैं सर्वज्ञ।

सर्वथा न सर्वथा सत्य जो होता निरपेक्ष।

सापेक्ष-निरपेक्ष का 'कनक' रचा है काव्य।

चितरी, दिनांक 21.10.2017, रात्रि 7.35

(विशेष परिज्ञान हेतु कविकृत 'अनेकांत सिद्धांत' ग्रंथ का अध्ययन करें।)

संदर्भ-

सूक्ष्म व्याख्या की अपेक्षा से सप्तभंगी का कथन जान लेना चाहिए। स्वात् द्रव्य है इत्यादि ऐसा पढ़ने से प्रमाण सप्तभंगी जानी जाती है क्योंकि स्वात् अस्ति यह वचन सकल वस्तु को ग्रहण करने वाला है। इसीलिए प्रमाण वाक्य है 'स्वात् अस्ति एवं द्रव्यम्' ऐसा वचन वस्तु के एक देश को अर्थात् उसके मात्र अस्तित्व स्वभाव को ग्रहण करने वाला है इससे नय वाक्य कहते है। क्योंकि कहा है-''सकलादेशः प्रमाणाधीनो, विकलादेशो नवाधीन इति'' अर्थात् वस्तु सर्व को कहने वाला वचन प्रमाण के अधीन है और उसी के एक अंश को कहने वाला वचन नय के अधीन है अस्ति द्रव्य यह दुःप्रमाण वाक्य है व अस्ति एवं द्रव्य यह दुर्नय वाक्य है। इस तरह प्रमाणादि रूप से व्याख्यान जानना। यहाँ छः द्रव्यों के मध्य में से सात भंगरूप जो शुद्ध जीवास्तिकाय नाम का शुद्ध आत्म द्रव्य है वही ग्रहण करने योग्य है।

सम्यक् एकांत और मिथ्या एकांत

(सम्यक्नय और मिथ्यानय)

प्रमाण और नय की विवक्षा से भेद हैं। एकांत दो प्रकार का है-सम्यग् और मिथ्या। अनेकांत भी सम्यक् अनेकांत और मिथ्या अनेकांत के भेद से दो प्रकार का है। प्रमाण के द्वारा निरूपित वस्तु के एक देश को हेतु विशेष के सामर्थ्य की अपेक्षा से ग्रहण करने वाला सम्यग् एकांत है। एक धर्म का सर्वथा (एकांत रूप) से अवधारण करके अन्य धर्मों का निराकरण करने वाला मिथ्या एकांत है। एक वस्तु में मुक्ति और आगम से अविरुद्ध अनेक विरोधी धर्मों को ग्रहण करने वाला सम्यग् अनेकांत है और वस्तु को तत-अतत् आदि स्वभाव से शून्य कहकर उसमें अनेक धर्मों की मिथ्या कल्पना करने वाला अर्थशून्य वाग्विलास मिथ्या अनेकांत है। सम्यग् एकांत नय कहलाता है तथा सम्यग् अनेकांत प्रमाण।

एक धर्म का निश्चय करने में प्रवीण होने से नय की विवक्षा से एकांत है। अनेक धर्मों के निश्चय का अधिकरण (आधार) होने के कारण प्रमाण विवक्षा से अनेकांत है। यदि अनेकांत अनेकांत ही माना जाय और एकांत का लोप किया जाय तो सम्यग् एकांत के अभाव में, शाखादि के अभाव में, वृक्ष के अभाव की तरह तत्समुदाय रूप अनेकांत का भी अभाव हो जायेगा। यदि एकांत ही माना जाय तो उसके अविनाभावी शेष धर्मों का निराकरण हो जाने से प्रकृत शेष का भी लोप होने से सर्वलोप का प्रसंग प्राप्त होता है। इस प्रकार उत्तर भंगों (अवक्तव्यादि भंगों) को भी लगाना चाहिए।

अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाण नय साधनः।

अनेकान्तः प्रमाणान्ते तदेकान्तोऽर्पितन्नयात्।। (103) स्वयंभूस्तोत्र

हे अरहनाथ स्वामी! आपके मत में अनेकांत भी किसी अपेक्षा अनेकांत है किसी अपेक्षा से एकांत है। वह मिथ्या एकांत बिना अपेक्षा के नहीं है। किन्तु अपेक्षा सहित सम्यक् एकांत है। प्रमाण और नय से अनेकांत स्वरूप वस्तु की सिद्धि होती है। ''प्रमाण'' उसे कहते हैं जो सर्व धर्मों को विषय करने वाला है। ''नय'' उसे कहते हैं जो उनमें से एक किसी धर्म को विषय करने वाला है। प्रमाण की अपेक्षा से अनेकांत अनेकांत स्वरूप है अर्थात् अनेक धर्म स्वरूप वस्तु अनेक धर्म स्वरूप ही दिखती है। वही अनेकांत रूप वस्तु जब किसी विशेष नय की अपेक्षा से देखी जाती है तब एक किसी धर्म स्वरूप दिखती है, उस समय अन्य धर्म गौण होते हैं। तब वह एकांत स्वरूप कही जाती है। इस तरह अपेक्षा सहित मानने से कोई भी दोष नहीं आता है। अपेक्षा रहित अनेकांत व एकांत सब सदोष होते हैं। वस्तु अनेक धर्म स्वरूप है। नित्य-अनित्य, एक अनेक आदि स्वरूप है। इसी को समझने के लिए प्रमाण और नय दो साधन हैं। प्रमाण की अपेक्षा वह अनेक धर्म स्वरूप झलकती है। नय की अपेक्षा वह एक-एक धर्म स्वरूप झलकती है। नय किसी एक को मुख्य करके व दूसरे धर्मों को गौण करके बताता है। वह एक धर्म को मुख्य करके कहते हुए भी अन्य धर्मों का अभाव नहीं करता है। इस तरह स्याद्वाद से निर्बाध वस्तु सिद्ध होती है।

नित्यैकान्तमतं तस्य तस्यानेकान्तता कथम्।

अथानेकान्तता यस्य तस्यैकान्तमतं स्फुटम्।। (1)

जो नित्य एकांतमय का अनुयायी है उसके अनेकांतता कैसे संभव है। किन्तु जो अनेकांत मत का अनुयायी है वह स्पष्ट रूप से एकांत मतानुयायी भी है।

इसका स्पष्ट रूप यह है जो एक को ही मानता है वह अनेक को मानने वाला कैसे हो सकता है किन्तु जो अनेक को मानता है वह एक को भी अवश्य मानता है क्योंकि एक-एक मिलकर ही अनेक होते हैं, एक के बिना अनेक बन नहीं सकते। अतः जो एकांत मतानुयायी हैं, वे तो अनेकांत मतानुयायी हो ही नहीं सकते किन्तु जो अनेकांत मत के अनुयायी हैं वे एकांत मत के भी अनुयायी अवश्य है क्योंकि एकांतों के समूह का नाम ही ''अनेकांत'' है किन्तु विशेषता इतनी है वे एकांत यथार्थता के विरोधी नहीं है वे सब सापेक्ष होते हैं। एकांत और अनेकांत दोनों ही सम्यक् और मिथ्या के भेद से दो प्रकार के होते हैं। एक धर्म की सर्वथा अवधारणा करके अन्य धर्मों का निराकरण करने वाला मिथ्या एकांत है और प्रमाण के द्वारा निरूपित वस्तु के एक देश को सयुक्ति ग्रहण करने वाला सम्यक् है, एकांत है। इसी तरह वस्तु में युक्ति और आगम के अविरुद्ध अनेक विरोधी धर्मों को ग्रहण करने वाला सम्यगनेकांत है तथा वस्तु को तत्-अतत् आदि स्वभाव से शून्य कहकर उसमें अनेक धर्मों मिथ्या कल्पना करने वाला वचनविलासमिथ्या अनेकांत है। सम्यग् एकांत को ''नय'' कहते हैं और सम्यक् अनेकांत को ''प्रमाण'' कहते हैं। यदि अनेकांत को अनेकांत ही माना जाये और एकांत को न माना जाये तो सम्यग् एकांत के अभाव में उनके समुदाय रूप अनेकांत का भी अभाव हो जाये। जैसे शाखा आदि के अभाव में वृक्ष का अभाव हो जाता है।

स्वभावानांयुक्तिपथप्रस्थायित्वं, नानाभेदं च दर्शयति-

भावा णेयहावा पमाणगहणेण होंति णिव्वत्ता।
एक्कसहावा वि पुणो ते चिय णयमयेगहणेण।। (57)

आगे स्वाभावों को युक्ति से सिद्ध करते हुए उनके नाम बतलाते हैं-प्रमाण के द्वारा ग्रहण किये जाने पर पदार्थ अनेक स्वभाव वाले सिद्ध होते हैं और प्रमाण के भेद नयों के द्वारा ग्रहण किये जाने पर वे ही पदार्थ एक स्वभाव वाले प्रतीत होते हैं।

अनेक धर्मात्मक वस्तु प्रमाण का विषय है और प्रमाण से गृहीत वस्तु के एक

देश को ग्रहण करने वाला नय है। अतः जब हम प्रमाण के द्वारा वस्तु को जानते हैं तो उसमें अनेक स्वभावों का बोध होता है और जब नय के द्वारा जानते हैं तो वस्तु के किसी एक स्वभाव का बोध होता है। जैसे द्रव्य पर्यायात्मक वस्तु प्रमाण का विषय है किन्तु जब हम उसी वस्तु को नय के द्वारा जानते हैं या तो उसके द्रव्य रूप की ही प्रतीति होती है या पर्याय रूप की ही प्रतीति होती है।

नयोपनयैकान्तानां त्रिकालानां समुच्चयः।

अविभ्राड्भावसम्बन्धो द्रव्यमेकमनेकधा।। (107) (सन्मति सूत्र)

त्रिकालवर्ती नयों-उपनयों के एकांत विषयों का पर्याय विशेषों का-जो अपृथक् स्वभाव (तादात्म्य) संबंध को लिए हुए समुच्चय समूह है वह द्रव्य-वस्तु है और वह एक अनेक भेदरूप है।

निरपेक्ष और सापेक्ष नयों की स्थिति

मिथ्या समूहो मिथ्या चेन्न मिथ्यैकान्तनास्ति नः।

निरपेक्षा नया मिथ्या सापेक्षा वस्तुतेऽर्थकृत्।। (108) (स.सू.)

यहाँ अनेकांत प्रतिपक्षी द्वारा यह आपत्ति की गई है कि जब एकांतों को मिथ्या बतलाया जाता है तब नयों और उपनयों रूप एकांतों का समूह जो अनेकांत और तदात्मक वस्तु तत्त्व है वह भी मिथ्या ठहरता है क्योंकि मिथ्याओं का समूह मिथ्या ही होता है। इस पर ग्रंथकार महोदय कहते हैं कि यह आपत्ति ठीक नहीं है; क्योंकि हमारे यहाँ कोई भी वस्तु मिथ्या एकांत के रूप में नहीं है। जब वस्तु का एक धर्म दूसरे धर्म की अपेक्षा नहीं रखता-उसका तिरस्कार कर देते हैं-सो वह मिथ्या कहा जाता है और जब वह उसकी अपेक्षा रखता है-उसका तिरस्कार नहीं करता-तो वह सम्यक् माना जाता है। वास्तव में वस्तु निरपेक्ष एकांत नहीं है, जिसे सर्वथा एकांतवादी मानते हैं; किन्तु सापेक्ष एकांत है और सापेक्ष एकांतों के समूह का नाम ही अनेकांत है, तब उसे और तदात्मक वस्तु को मिथ्या कैसे कहा जा सकता है? नहीं कहा जा सकता। आधुनिक महावैज्ञानिक सापेक्ष सिद्धांत के प्रणेता आईंस्टीन ने भी अनेकांत को अनेकांतमय एवं सम्यक् एकांत एवं मिथ्या एकांत भी स्वीकार किया है।

A CERTAIN type of superior person is fond of asserting

that 'everything is relatives.' This is of course nonsense because if everything is relative there would be nothing for it to be relative to. (THE ABC OF RELATIVITY-By Bertrand Russel) (What happiness and what is observed).

समन्वित ही सुनय

जह णेग लक्खणगुणा वेरुलियाई मणी विसंजुत्ता।
रयणावलिववएसं ण लहंति महग्घमुल्ला वि।। (22)

अनेक लक्षण तथा गुणों से सुसंपन्न वैडूर्य आदि मणि बहुमूल्य होने पर भी बिखरी हुई अवस्था में ''रत्नावली'' नहीं कहलाते। मणि या रत्नों के दाने धागे में पिरोये जाकर संयुक्त स्थिति में ही हार कहलाते हैं। जिस प्रकार रत्नादि अलग-अलग अवस्था में स्वतंत्र रूप से 'हार' नहीं कहे जाते, उसी प्रकार निरपेक्ष अवस्था में ये नय सुनयों के द्वारा साध्य अर्थक्रिया करने में सर्वथा असमर्थ रहते हैं। किन्तु रत्नों की भाँति समन्वित होने पर ये 'दुर्नय' नाम का त्यागकर 'सुनय' नाम को प्राप्त होते हैं।

सापेक्ष नयः सुनय

तह णिययवायसुविणिच्छिया वि अण्णोण्णपक्खणिरवेक्खा।
सम्मद्दंसण सद्दं सव्वे वि णया ण पावेंति।।

जिस प्रकार धागे में पिरोये हुए मणि के दाने ही हार कहे जाते हैं, उसी प्रकार अपने-अपने पक्ष में सुनिश्चित होने पर ही सभी सापेक्ष नय सम्यग्दर्शन या सुनय नाम को प्राप्त करते हैं। निरपेक्ष नय सुनय नहीं कहे जाते क्योंकि निरपेक्ष अवस्था में वे नय सम्यक् रूप से कार्यकारी नहीं होते।

नय भी मिथ्या और सम्यक्

तम्हा सव्वे वि णया मिच्छादिट्ठी सपक्ख पडिबद्धा।
अण्णोण्णणिस्सिया उण हवंति सम्मत्तसब्भावा।। (21)

अपने-अपने पक्ष का कथन करने से संलग्न सभी निरपेक्ष नय मिथ्यादृष्टि है। जब कोई दृष्टि दूसरे का निराकरण करती हुई परस्पर सापेक्ष दृष्टि से प्रतिपादन करती

है, तब सम्यक् होती है।

जह पुण ते चेव मणी जहागुणविसेसभागपडिबद्धा।
रयणावलि त्ति भण्णइ जहंति पाडिक्कसण्णाओ।। (24)

मणि के दाने जब धागे में पिरो दिये जाते हैं, तब वे अपना मणि नाम छोड़कर 'रयणावली' यानी रत्नावली (रत्नहार) कहलाते हैं। कहने का अर्थ यही है कि धागे में संलग्न होकर प्रत्येक मणि का दाना हार बन जाता है। सभी सामान्य रूप से उसे हार ही कहते हैं।

नय कैसे सम्यक् होते हैं?

तह सव्वे णयवाया जहाणुरुवविणिउत्तवत्तव्वा।
सम्मद्दंसणसद्दं लहंति ण विसेसण्णाओ।। (25)

वैसे ही जितने भी नयवाद हैं, वे सब अपने-अपने कथन को यथानुरूप सापेक्ष रीति से प्रकट करने पर ही 'सम्यक्दर्शन' या 'सुनय' शब्द से वाच्य होते हैं। वे विशेष संज्ञा रूप जो 'मिथ्यादर्शन' या 'दुर्नय' है, उसका परित्याग कर देते है। मिथ्या या निरपेक्ष दृष्टि का त्याग किये बिना कोई 'सुनय' नहीं हो सकता।

अपनी मर्यादा में सभी नय सच्चे

णिययवयणिज्जसच्चा सव्वणया परवियालणे मोहा।
ते पुण ण दिट्ठसमयो विभयइ सच्चे व अलिए वा।। (28)

सभी नय जब अपनी-अपनी मर्यादा में रहकर अपने-अपने विषय का कथन करते हैं, तब सभी सत्य होते हैं। किन्तु जब अपनी मर्यादा को बाँधकर दूसरे नय के वक्तव्य का निराकरण करने में प्रवृत्त हो जाते हैं, तब वे ही असत्य हो जाते हैं। इसलिए अनेकांत सिद्धांत को जानकर कभी यह विभाग नहीं करता कि यह सत्य है या यही असत्य है। अनेकांतवादी कार्य को कथंचित् ही सत् या असत् कहता है।

दोनों नयों की विषय मर्यादा

दव्वट्ठियवत्तव्वं सव्वं सव्वेण णिच्चमवियप्पं।
आरद्धो य विभागो पज्जववत्तव्वमग्गो य।। (29) (स.सू.)

सत्ता सामान्य की अपेक्षा सभी पदार्थ सब तरह से नित्य और भेदरहित है। भेदरहित द्रव्य का कथन द्रव्यार्थिक नय का वक्तव्य है। किन्तु भेदरूप कथन के प्रारंभ होते ही पर्यायार्थिक नय का विषय आ जाता है। 'सत्' के भेद से ही पर्यायार्थिक नय की वक्तव्यता प्रारंभ हो जाती है।

अनेकांत छल मात्र नहीं है

अनेकांत छल मात्र है, ऐसा भी नहीं कह सकते, क्योंकि छल के लक्षण का अनेकांत में अभाव है। जो अस्ति है, वही नास्ति है, जो नित्य है वही अनित्य है। इस प्रकार अनेकांत की प्ररूपणा छल मात्र है-ऐसा कहना भी उचित नहीं है क्योंकि छल के लक्षण का अनेकांत में अभाव है। छल का लक्षण है-अर्थों के विकल्प की उत्पत्ति से वचनों का विघात। जैसे-नवकंबलो देवदतः, यहाँ नव शब्द के दो अर्थ होते हैं। एक नौ संख्या और दूसरा नया। तो 'नूतन' विवक्षा से कहे गये नव शब्द का नौ संख्या रूप अर्थ विकल्प करके वक्ता के अभिप्राय से भिन्न अर्थ की कल्पना छल कही जाती है। जैसे-इसके नव कंबल हैं, इस कथन में वक्ता का अभिप्राय था, इसके पास नौ कंबल हैं, चार-पाँच नहीं। श्रोता ने अर्थ किया, इसका कंबल, नया कंबल है, पुराना नहीं। किन्तु सुनिश्चित उभयनय के वश के कारण मुख्य गौण विवक्षा से अनेक धर्मों का सुनिर्णित रूप से प्रतिपादन करने वाला अनेकांतवाद छल नहीं हो सकता, क्योंकि इसमें वचन विघात नहीं किया गया है। अपितु यथावस्थित वस्तुत्त्व का निरूपण किया गया है।

अनेकांतवाद संशयवाद नहीं है

एक आधार में विरोधी अनेक धर्मों का रहना असंभव है। अतः अनेकांत संशय हेतु है, क्योंकि आगम में लिखा है कि द्रव्य एक है, पर्यायें अनेक हैं। आगम प्रमाण में वस्तु अस्ति है कि नास्ति है? नित्य है कि अनित्य? इत्यादि प्रकार से संशय होता है, ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि विशेष लक्षण की उपलब्धि होती है। सामान्य धर्म का प्रत्यक्ष होने से विशेष धर्मों का प्रत्यक्ष न होने पर (किन्तु) उभय विशेषों का स्मरण होने से संशय होता है। जैसे धुँधली (न अधिक प्रकाश न अधिक

अँधेरा ऐसी) रात्रि में स्थाणु और पुरुषगत ऊँचाई आदि सामान्य धर्म की प्रत्यक्षता होने पर स्थाणुगत कोटर पक्षी निवास तथा पुरुषगत सिर खुजलाना, चोटी बाँधना, वस्त्र हिलाना आदि विशेष धर्मों के न देखने पर किन्तु इन विशेषों का स्मरण रहने पर (ज्ञान दो कोटियों में दोलित हो जाता है कि यह स्थाणु है या पुरुष) संशय उत्पन्न हो जाता है। किन्तु अनेकांतवाद में विशेष धर्मों की अनुपलब्धि नहीं है क्योंकि स्वरूप आदि के आदेश से वशीकृत उक्त विशेष प्रत्यक्ष उपलब्ध होते हैं। अतः विशेष की उपलब्धि होने से अनेकांतवाद संशय के हेतु नहीं है अर्थात् सभी धर्मों की सत्ता अपनी-अपनी निश्चित अपेक्षाओं से स्वीकृत है। ततद् धर्मों का विशेष प्रतिभास निर्विवाद सापेक्ष रीति में बताया गया है। अनेकांतवाद को संशय का आधार भी कहना उचित नहीं है कि अस्ति आदि धर्मों को पृथक्-पृथक् सिद्ध करने वाले हेतु है या नहीं। यदि हेतु नहीं है, तो प्रतिपादन कैसा? यदि हेतु है तो एक ही वस्तु में परस्पर विरुद्ध धर्मों की सिद्धि होने पर संशय होना ही चाहिए।

विरोध के अभाव में संशय का अभाव होता है। यदि विरोध होगा तो संशय अवश्य होगा। परन्तु नयों के माध्यम से कथित धर्मों में विरोध नहीं होता।

प्रश्न-नयों के आश्रय से कथन करने पर विरोध क्यों नहीं होता?

उत्तर-पिता-पुत्रादि संबंध के समान अर्पणा के भेद से अविरोध है। उक्त अपनी-अपनी अपेक्षाओं से संभावित धर्मों में एक ही वस्तु में पिता-पुत्रादि संबंध के समान अविरोध से कथन है। जैसे-जाति, कुल, रूप, संज्ञा, व्यपदेश आदि से विशिष्ट एक ही देवदत्त के जन्यत्व-जनकत्व आदि शक्ति की अपेक्षा से पुत्र, भ्राता, भागिनेय आदि भिन्न-भिन्न संबंधियों की दृष्टि से पिता-पुत्रादि का व्यवहार होता है, उसमें कोई विरोध नहीं है क्योंकि देवदत्त एक ही अपेक्षा से पिता है उसी प्रकार शेष की अपेक्षा से पिता नहीं है। शेष की अपेक्षा पुत्रादि व्यपदेश का भागी होता है अर्थात् पुत्र की अपेक्षा पिता है और पिता की अपेक्षा पुत्र, मामा की अपेक्षा भागिनेय आदि का व्यवहार होता है। इसीलिये एक ही देवदत्त का पिता पुत्रादिकृत बहुत से संबंध विरुद्ध नहीं है। उसी प्रकार अस्तित्ववादी धर्मों का भी एक ही वस्तु में रहने में कोई विरोध नहीं है।

(राजवार्तिक)

आचार्य श्री कनकनन्दी द्वारा रचित ग्रन्थों के विमोचन का एक दृश्य
(चितरी-2017)

ज्ञानदानी भक्तों को स्वरचित ग्रन्थ प्रदान करते हुए आचार्य श्री कनकनन्दी
(चितरी - 2017)

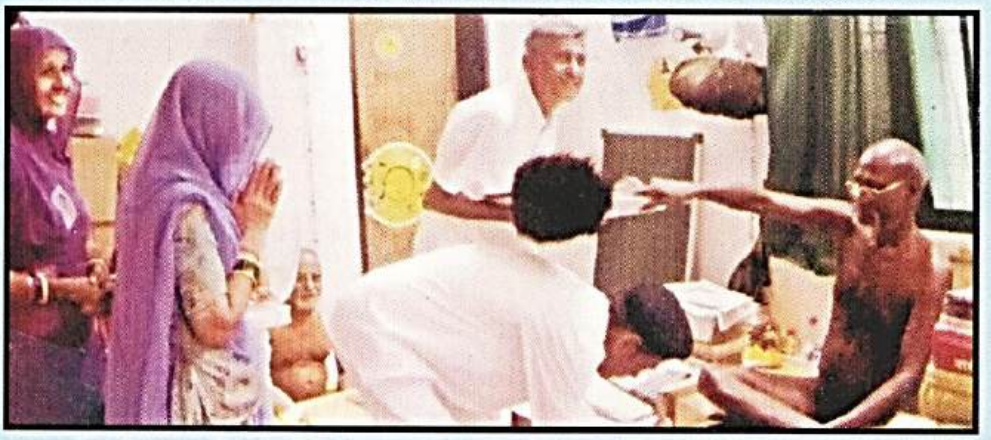

गजेन्द्र सिंह व महिपाल सिंह जी (राजा - बनकोड़ा) सपरिवार द्वितीय बार स्व-ग्राम में आचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव श्री संघ के चातुर्मास हेतु निवेदन के अनन्तर उन्हें स्वरचित साहित्य आशीर्वाद सह प्रदान करते हुए आचार्य कनकनन्दी (चितरी-2017)

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव को विदेश में हो रहे धर्म प्रचार के साथ-साथ शंका समाधान हेतु निवेदन करते हुए स्व-वैज्ञानिक शिष्य डॉ. राजमल जैन (चितरी-2017)

गुरु गौरव महोत्सव में उद्‌बोधन के अनन्तर विद्यार्थी व शिक्षकों के द्वारा मांस व नशीली वस्तुओं का आजीवन त्याग आचार्य कनकनन्दी से हाथ उठाकर लेते हुए (चितरी-2017)

स्वाध्याय में मुनि श्री प्रणाम सागर जी के प्रश्नों के उत्तर देते हुए
आचार्य श्री कनकनन्दी गुरुदेव (सीपुर-2017)